

(२)

भासनाथ श्री रतिनाथ (ह्या) शर्म महानुभावे र्गर्भेऽपि पण्डितप्रवरैः
परिविलोकनेन पाचितप्रपि मुद्रणे कृतौ मुजफ्फरपुर राजर्काय
महा पाठशाळाया मध्यापनस्य परवशतया मया कदाचिदिहत्यकृत्य
वितत्यमान मानमत्वेन कदाचिदमीपशीघ्रता विनसीकृतत्वेन, कदा-
चिदधिपद्धति विधेःप्रातिकूलया दाधामपत्रपत्रनेन, कदाचिदववधानेन
संशोधनकर्मतां यथासमुचितं नेतुं नापारि । तथापि प्रकृति मुहुरः
सद्यहृदयाः सहृदयाः संशोधयन्त एवमेवानन्तर्येण सकृदपिदृष्टि
दानेन मदीय अमद्गुप्तं सकलव्यय्यन्तान्याशास्यते, उपकृतिश्चोक्त-
महानुभावानां माजन्म न विस्मरिष्यते इत्यलम् ।

वाल्कलुणमिश्रः



समर्पणम् !

तदेतन्नव्यकाव्यकुसुमं विविधविरुदावलीविराज
मान मनोन्नत महाराजाधिराज लक्ष्मीश्वर सिंह
(वहादुर जी. सी. आइ. ई.) कनिष्ठ धर्मपत्न्याः
प्रतीत सुकृत कीर्ते श्री ५ लक्ष्मीश्वरी देव्याः पादयो
र्मया समर्प्यते, प्रार्थ्यते च तदीय मङ्गल मनङ्गा-
रातिरिति ।

बालकृष्णमिश्रस्य



नमोऽस्तु चित्तम् प्रधान दिपणां सृष्टीपत्रम् ।

| | |
|-------------------------------|-----|
| मृदुतादयस्य | |
| मृदुता-वर्धना | १६ |
| मृदुतास्य .. | २१ |
| दुर्गन्धविनिर्मुक्तम् | २१ |
| निर्विघ्नतादिदर्शनम् | २१ |
| लज्जासहि भा० ५ रमेन्द्रगिरस्य | |
| वर्णनम् | ५० |
| भास्वदेन्द्रस्य .. | ५५ |
| श्री ६६ मीन्द्रगिरिदेशः .. | ६१ |
| गोविन्द टक्कुरस्य .. | ६५ |
| एतन्मन्त्रे विधिवायाः .. | ८५ |
| .. जगन्नाथस्य .. | ९१ |
| .. अरण्यान्याः .. | ९८ |
| .. रन्ध्यायाः .. | १०० |
| .. मध्यरात्रप्रभातयोः .. | १०१ |
| .. वाद्यमर्पस्य .. | १०१ |
| .. हयग्रीवस्य .. | १०५ |
| द्वितीयोच्छ्वासो--- | |
| .. निशिरस्य वर्णनम् | १०७ |
| .. पुरस्य .. | १०९ |

| | |
|-------------------------|---------|
| निष्पदाः | पृष्ठाः |
| ॥ दक्षिणक्षितिपत्रम् ॥ | ॥ १ ॥ |
| ॥ मन्ध्यायाः ॥ | ॥ १ ॥ |
| ॥ स्वप्नपत्रम् ॥ | ॥ १ ॥ |
| ॥ स्वप्नपाञ्चगोविन्दयो | |
| स्नमाणापस्य | ॥ ११२ ॥ |
| ॥ भीहर्षस्य ॥ | ११५ ॥ |
| ॥ शोकस्य ॥ | ११६ ॥ |
| ॥ निर्वेदस्य ॥ | ११७ ॥ |
| ॥ वृत्तकन्दस्य ॥ | ११८ ॥ |
| ॥ राजगृहगोविन्दगमनस्य ॥ | ११९ ॥ |
| ॥ प्रभातस्य | १२० ॥ |
| ॥ राजगोविन्दाष्टापयोः ॥ | ०१२१ ॥ |

तृतीयोच्छ्वासं

| | |
|---------------------|-----|
| १॥ सन्ध्यायावर्णनम् | १३६ |
| २॥ प्रभातस्य | १३७ |
| ३॥ कृष्णस्य | १३८ |
| ४॥ जगन्नाथपुर्याः | १४१ |
| ५॥ भुवनेश्वरस्य | १४५ |
| ६॥ सन्ध्यायाः | १४६ |
| ७॥ गोविन्दतनयानाम् | १४८ |
| ८॥ वसन्तस्य | १५१ |

न्यायः नानाविधो विद्यमानः विद्वत्सु वा निरु-
पितः सन्तुष्टानामनुष्ठितिः विषयाणां
सूत्रावली ।

[illegible]

दृश्यत्वम्
 काव्यलक्षणम्
 दर्पणकारमतनिरासः
 विदेष्टः
 समाधिः
 ममता
 परिकराङ्कुरः
 अर्थान्तःसङ्गमितवाच्यध्वनिः
 प्रस्तुताङ्कुरः
 गार्दृक्ष विक्रीडितम्
 गणः
 धोत्रियः
 मनोऽकलुपता
 समकम्
 ईश्वरेतर्कः
 आहतविसर्गता
 विभावना
 आयुः
 दीपकम्
 अतिशयोक्तिः
 कवितमयः
 पुनरुक्तद्वयभासः
 उदात्तम्
 व्यापारः
 रस्यस्य
 सस्यस्य

पदसंदिग्धत्वम्
 न्यूनत्वम्
 शपः
 छन्दरीवृत्तम्
 भेयोऽङ्गारः
 वैद्यस्यम्
 मपदादशाक्षम्
 मोक्षोपयोगिपदार्थः
 ऐश्वर्याकृतिगणनम्
 मूलमकृतिः
 योगान्तरायः
 जातिगणनम्
 संख्यान्वयः
 अभिधामूलवृत्तना
 भागवतिरोपपरिहारः
 व्यङ्ग्यस्य नियामकम्
 परमाणुरपरम्पम्
 दितम्
 विधिः
 शास्त्रमार्गोद्देशम्
 आशेषशक्तिः
 नेयार्थता
 कर्मणो शान्तारम्भता
 अद्वयगणनम्
 भद्रपञ्चमता
 शक्तिरूपकता

अग्निः

ब्राह्मणस्य मद्यनिषेधः

,, विजया निषेधः

उल्लेखः

साङ्कर्यम्

गोत्रस्वल्पम्

केन्द्रस्थानम्

उच्चनीचस्थानम्

बाहुल्यम्

वाचिकजपः

षट्कर्म

महायज्ञपञ्चकम्

परिणाम भेदः

अनिर्वचनीयजतम्

अप्रस्तुतप्रशंसा

जगदध्यामः

ब्रह्मणोऽविद्याश्रयत्वम्

“अद्यात्मानसगोचरं मनसैवा

नुदूष्टव्यमित्येतयो विरोधः

परिहारः

ईशाङ्गषट्कम्

शुक्रस्तम्भोपायः

चूळिका

ग्रहमैत्री

संशयात्मिकानुमितिः

शून्यवादः

विषयाणां सङ्कलनेन संख्या १

पक्षेषु कतिपये विषया अनेके

स्थलेषु विभिन्नप्रकारेण प्रतिपा

लघुमः शरीरवृत्ति टीका टिप्पणी प्रतिपादितानां
ग्रन्थानां नामधेयानि ।

| (त्रयाचरणेषु) | | (कामशास्त्रेषु) | |
|---------------------------|----|-----------------------|----|
| वाणिनि सूत्रम् | १ | कामसूत्र भाष्यम् | १ |
| वाल्मीकिन वार्तिकम् | २ | रतिरहस्यम् | २ |
| महा भाष्यम् | ३ | (अष्टङ्कारंघ्रि) | |
| (कोशेषु) | | काव्यप्रकाशः | ३ |
| नाम लिङ्गानुशासनम् | १ | साहित्यदर्पणः | ४ |
| मैदिनी | २ | रसगंगाधरः | ५ |
| विश्वप्रकाशः | ३ | दशरूपम् | ६ |
| रसचन्द्राभिधानम् | ४ | काव्यमदीपः | ७ |
| राजकल्पद्रुमः | ५ | चन्द्रालोकः | ८ |
| शब्दार्णवः | ६ | कुवलयानन्दः | ९ |
| शब्दरत्नावली | ७ | वामनसूत्रम् | १० |
| रघुनन्दम् | ८ | वामनसूत्रवृत्तिः | ११ |
| अनेकार्थध्वनिमञ्जरी | ९ | अष्टङ्कारसर्वस्वम् | १२ |
| एवाक्षरकोशः | १० | साहित्यसारः | १३ |
| (छन्दसु) | | काव्यादर्शः | १४ |
| विश्वसूत्रम् | १ | काव्यादर्शविवृतिः | १५ |
| हृत्तरत्नाकरः | २ | काव्यमदीपोद्योतः | १६ |
| छन्दोमञ्जरी | ३ | रसगंगाधरमर्मप्रकाशिका | १७ |
| दाणीभूषणम् | ४ | शाकुन्तलार्थद्योतनिका | १८ |
| वृत्तरत्नाकरस्य नारायणीय- | | (काव्येषु) | |
| व्याख्या | ५ | पाल्मीकीयशामायणम् | १ |
| वृत्तदर्पणः | ६ | कक्ष्मीसहस्रम् | २ |

| | |
|------------------|----|
| किरातार्जुनीयम् | ३ |
| मेघदूतम् | ४ |
| गीतगोविन्दम् | ५ |
| वासवदत्ता | ६ |
| हर्षचरितम् | ७ |
| कादम्बरी | ८ |
| पारिजातहरणनाटकम् | ९ |
| शकुन्तलानाटकम् | १० |

(वेदेषु)

| | |
|----------------------------|---|
| यजुर्वेदः [पुरुषसुक्तम्] | १ |
| कठः | २ |
| मुण्डकम् | ३ |
| बृहदारण्यकम् | ४ |
| श्वेताश्वतरः | ५ |
| छान्दोग्यम् | ६ |
| तैत्तिरीयम् | ७ |
| ईशः | ८ |

(कल्पसूत्रेषु)

| | |
|---------------------|---|
| पारम्परगृह्यसूत्रम् | १ |
|---------------------|---|

(पुराणेषु)

| | |
|-------------------|---|
| मार्कण्डेयपुराणम् | १ |
| मीनपुराणम् | २ |
| भूमिदत्तागवतम् | ३ |
| | ४ |

| | |
|-----------|---|
| भगवद्गीता | ५ |
|-----------|---|

(धर्म शास्त्रेषु)

| | |
|--------------------------|---|
| स्मृतिदीपिका | १ |
| तन्त्रषेदाधिकारि निर्णयः | २ |

(तन्त्रेषु)

| | |
|---------------------|----|
| स्वतन्त्रः | १ |
| तारापारिजातः | २ |
| ब्रह्मसंहिता | ३ |
| नीलः | ४ |
| समयाचारः | ५ |
| भावचूडामणिः | ६ |
| कुञ्जार्णवः | ७ |
| मेरुः | ८ |
| अगस्त्यसंहिता | ९ |
| बृहच्छ्रीक्रमसंहिता | १० |
| महाकालसंहिता | ११ |
| भैरवः | १२ |
| तारामक्तिसुधारणवः | १३ |

(दर्शन शास्त्रेषु)

| | |
|------------------|---|
| न्याय सूत्रम् | १ |
| न्याय वार्तिकम् | २ |
| न्यायकन्दली | ३ |
| पदवाक्यपरस्नाकरः | ४ |

| | | | |
|----------------|----|--------------------------------|----|
| तन्त्रनिर्वाहः | ५ | प्राचीरक भाष्यम् | १९ |
| तन्त्रनिर्वाहः | ६ | भामती | २० |
| तन्त्रनिर्वाहः | ७ | पञ्चपादिकाविवरणम् | २१ |
| तन्त्रनिर्वाहः | ८ | संक्षेप प्राचीरकम् | २२ |
| तन्त्रनिर्वाहः | ९ | अद्वैतसिद्धिः | २३ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १० | खण्डनखाद्यम् | २४ |
| तन्त्रनिर्वाहः | ११ | चित्तसुखीयम् | २५ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १२ | सिद्धान्तलेशः | २६ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १३ | वेदान्तपरिभाषा | २७ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १४ | पञ्चदशी | २८ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १५ | (ज्योतिषशास्त्रेषु) | |
| तन्त्रनिर्वाहः | १६ | ज्योतिषसारः | ? |
| तन्त्रनिर्वाहः | १७ | सामुद्रिकम् | २ |
| तन्त्रनिर्वाहः | १८ | सङ्कलनेन ग्रन्थानां संख्या १०६ | |



* श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् *

→ ❧ मङ्गलाचरणम् ❧ ←

गुल्लदलिमञ्जुवज्जुल यमुनाकुञ्जे किमपि तिमिरपुञ्जम् ।
जयति समभासि ललितं हरिदम्बाशोभिचपलयाऽऽमिलितम्
॥ १ ॥

टीका ।

पदाम्भोजप्रान्तप्रणतहरिमाणिक्यमुकुट
रफुटोयच्छुभ्रांशुप्रमुदितचकोराक्षियुगला ॥
श्रियं लावण्याब्धिस्मरविहितनिर्मन्यनभवां
दधाना श्रीराधा मम विविधबाधां तिरयतु ॥ १ ॥
नैषा दर्शनसाहित्यदर्पाख्याख्या विधीयते ।
परन्तु कुट्टुकुमामोदो गवाज्येनैव दीप्यते ॥ २ ॥
वितथोक्तिमयीभूतिः परेषां कीर्त्तिदर्पणे ।
नैव निक्षेपणीयेति प्रार्थना मात्सरे गणे ॥ ३ ॥

प्रारिप्सित समज्ञार्था[१]द्यनेकार्थक काव्यविशेष वक्ष्यमाणलक्षण लक्ष्मी-
श्वरीचरिताख्याप्रख्याताख्यायिका समाप्तिपत्तनसन्दिह्यमानान्तरायसन्तति
शान्तिकामस्वान्तेनातन्यमानानि स्तवात्मपङ्क्त्यानि स्वान्तेवासिना मनुशास

(१) आद्यमर्धपदं विम्वस्य, द्वितीयस्य प्रयोजनस्य बोधकम् । आदिना व्यवहारज्ञानादीनापरि-
मदं तदुक्तं पाण्यप्रकाशे “काव्यपदासेऽप्यकृते व्यवहारविदे शिष्येतरथतय,, इत्यादिना

वास(१)नात्मक स्थायिभाव नव[२]कान्यतम निरुत्तरतिगमकसुरतयोग्यता
द्योतक तदीयकलविशेषाभिभावकत्वव्यञ्जकतयो-भययामञ्जुतोपकारि-
तया च गुञ्जदलित्व विशेषणस्य विवक्षितार्थ[३]बाधप्रयोजकानुपादानत्वे
ननापुष्टार्थता । अतएव प्रकृतार्थोपपादकचमत्कारिव्यङ्ग्यकत्वानुमिति
करणत्व सामान्यविशेषभावानाद्विहित (४) प्रकृतार्थनिश्चयजनकज्ञानगो-
चरत्वरूपयोः परिकर(५)काव्यलिङ्गयो रर्थालङ्कारमात्रयोः “लिम्पतीव
तमोऽङ्गानि वर्षतीवाञ्जनं नभः । असत्पुरुषसेवेव दृष्टिर्विफलतां गतेत्यादा-
वुत्प्रेक्षोपमयोरिव परस्परनैरपेक्ष्येण तिलतण्डुलन्यायात् संसृष्टिः “सैषा संसृष्टि
रेतेपांभेदेन यदिहस्थिति, रितिकाव्यप्रकाशोक्तेः । यद्यपि गुञ्जदलित्वमेवा
भिव्यञ्जयितुं प्रभवति मञ्जुतां, तथापीतरथापि तत्प्रत्यायनाय मञ्जु-
पदोपादानम् । वञ्जुलकुञ्जरयातिसान्द्रतया परदर्शनायोग्यत्वं ध्व-
न्यते तेनच रहःकेलिक्षमत्वम् । अत्रादिमावाच्यार्थमूला पराच व्यङ्ग्या
र्थमूला व्यञ्जनावोधा “ सर्वेषां प्रायशोऽर्थानां व्यञ्जकत्वमपीप्यत ” इति
दर्पणाभिधानात् । यमुनापदप्रतिपादित एव व्यक्ति(६)वृत्तिलेन वाच्यार्थ

१ संस्कारः पतजये निखयस्येवेच्छायाअपि संस्कारजनकत्वम् तदवच्छेदके विशेष्यभागस्यानि
येतात् ।

२ रतिकृताहस्तोको विरमयोहासो भय शुश्रूषा क्रोध निर्वोद इति ।

३ अगार्थत्व वाच्यलक्ष्यव्यङ्ग्य साधारणम् ।

४ अनुमानार्थातिरन्त्यासवारणायानालिङ्गितान्तविशेषणम् । न च पद्यग्यादिप्रतिपादितहेतुत्वे व्यव-
मानहेतुत्वविरहिण्यसन्दरेरेतावति व्याप्तिस्तादृशगोचरत्वेन शब्दानोभितत्वस्य निदेश्यत्वात् ।

५ नचापुष्टार्थभावेन शक्यते परिकरधरितार्थयितुं, यमकादावपुष्टार्थताया दोषत्वविरहेण साभि-
प्राय विशेषणे “वनयताञ्जयताभिनिद्रहेत्यादौ तदुपगमस्यावश्यकत्वात् ।

६ ‘व्यक्ति’ व्यञ्जना ।

(४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्रवाहतादात्म्यमतिक्रोडीकृते तदीयतीरे(?)मतिपिपादयिपितस्य शैत्यात्
प्रयोजनस्यात्यन्ततिरस्कृतवान्यध्वनितया तेनच सौम्यश्रमापनोदनगोम्य-
ता, तथापि च रहःकेलिक्षमत्व मर्थशक्तिमूलक संलक्ष्य क्रम(२)तयाव्यज्यते,
पदेनसम मन्वय व्यतिरेकयोरभावात् । एतच्च स्थायिभावाद्गतया गुणीभूतं
नीरक्षीरन्यायेन ध्वनिसङ्कीर्णतामाश्रयति “संकरेण त्रिरूपेण संसृष्ट्या चैव
रूपया वेदस्वाधिविविधन्द्रा,, इतिध्वनिभेदप्रकरणे प्रकाशाभिधानात् ।
किमपीत्यनेन प्रसिद्धतमः पुञ्जापेक्षया व्यतिरेकालङ्कारो बोध्यते, कुञ्ज-
गतत्वं साधारणधर्मसद्भावेन शाब्दत्वार्थत्वयोरभावेऽप्यालङ्कारिकाभ्युपग-
तातिरिक्तपदार्थत्वस्य सादृश्यस्य(३) “कृतिपयद्विवमविलासं नित्य
सुखासङ्गमङ्गलसवित्री । खर्वयति स्वर्चामं गीर्वाणधुनीतटस्थितिर्नितरापि-
ति रसगङ्गाधरोक्ते व्यतिरेकोदाहरणऽवेहापिव्यङ्ग्यत्वापगम्यायाक्षित्व
सत्त्वात् । तिमिरपुञ्जमित्यत्र चपलयेत्यत्रचानुग्राहकस्यनिगरणान्तरस्या-
भावाच्चिरवयवा रूपकातिशयोक्तिस्सङ्कीर्णते पुराभिहिताभ्यामलङ्काराभ्याम्,
साच विपयिवाचकपदज्ञानमात्रकरणकं तदीयवाच्यतावच्छेदकरूपेण विप-
यस्य बोधनम् । जयतीत्यनेन वर्तमानकालिकोत्कर्षाभिधानात् तत्प्रकारक-
ज्ञानानुकूलस्यैतस्य स्तुतिरूपतया मङ्गलत्वमवसेयम् । ननु गुरुकार्यारम्भे
प्रणतिरवश्यं दृश्यते प्रेक्षावताम् अभिहितं च श्रीधराचार्यैः प्रशस्तपादभा-
ष्यविवरणे न्यायकन्दल्यां “नहिकश्चिदपरः प्रेक्षावान् म्लेच्छोऽपि तावत्का-
र्यं प्रवर्तते यावदिष्टान् न नमस्यतीति, तथा च स्तुतिमात्रमाचरन्नेपकविः

(१) यद्वा शक्यतावच्छेदकरूपेणैव लक्ष्यार्थभानं तावताऽपि गङ्गातीरेषोपश्लिप्तप्रयोक्तव्ये गङ्गायाघोष
इति प्रयोगप्रयोजनं सातस्यति ।

विज्ञेयपौर्वापर्येण ।

कथमिव नवाच्योभवेदिति चेत् । न, जयत्यर्थेनैव वक्तृविषयवैलक्षण्यसहकारेण भगवद्विषयकप्रणतेस्सवासना (१) नामभिव्यञ्जनात्, अतएव जयत्विति नाभ्यधायि, तथासति विधिनोत्कर्षस्यानिष्पन्नत्वध्वनेन नमस्कारद्योतकत्वं नोपपद्येत । इयमे (२) वार्थी व्यञ्जना यदाह मम्मटः “वक्तृबोद्धव्यकाङ्क्षनां वाक्यवाच्यान्यसन्निधेः प्रस्तावदेशकालादैर्वैशिष्ट्यात्प्रतिभाजुषाम् योऽर्थस्यान्यार्थधीहेतु व्यापारोव्यक्तिरेवसा,, इति । अनयैवदिशाऽपि समाकलनीयम् । श्रीकृष्णविषयिणीरिति देवावलम्बनतया भावरूपा पुरोदितेन व्यतिरेकालङ्कारेण सम्भोगशृङ्गा (३) रस्य च ध्वनिना जयत्यर्थाभिव्यज्यमानेन नमस्कारेण चानुमाणिता कवितात्पर्यविपर्ययाभूताऽसंलक्ष्य क्रमतया पण्डितराजानुमतया संलक्ष्यक्रमतयावा ध्वन्यते, सचायमष्टविधेभ्यो (४) गुणीभूतव्यङ्ग्येभ्योव्यतिरिच्यमानोऽप्रधानीभूतशब्दार्थालङ्कारोवाच्यातिशयीतिपारिभाष्यध्वन्या (५, त्मकृतयैतदुत्तमकाव्यम् “इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्येवाच्यादिति प्रकाशनिरुक्तेः । एतेन प्रधानव्यङ्ग्यस्यातिशयि विच्छित्तिविशेषाधायकत्वेन तदभावस्य मध्यमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य, कवितात्पर्यगोचरतया च तदनाश्रितव्यङ्ग्यकत्वात्मकस्याधमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य

(१) नवनवोभवेदिति चेत् । न, जयत्यर्थेनैव वक्तृविषयवैलक्षण्यसहकारेण भगवद्विषयकप्रणतेस्सवासना (१) नामभिव्यञ्जनात्, अतएव जयत्विति नाभ्यधायि, तथासति विधिनोत्कर्षस्यानिष्पन्नत्वध्वनेन नमस्कारद्योतकत्वं नोपपद्येत । इयमे (२) वार्थी व्यञ्जना यदाह मम्मटः “वक्तृबोद्धव्यकाङ्क्षनां वाक्यवाच्यान्यसन्निधेः प्रस्तावदेशकालादैर्वैशिष्ट्यात्प्रतिभाजुषाम् योऽर्थस्यान्यार्थधीहेतु व्यापारोव्यक्तिरेवसा,, इति । अनयैवदिशाऽपि समाकलनीयम् । श्रीकृष्णविषयिणीरिति देवावलम्बनतया भावरूपा पुरोदितेन व्यतिरेकालङ्कारेण सम्भोगशृङ्गा (३) रस्य च ध्वनिना जयत्यर्थाभिव्यज्यमानेन नमस्कारेण चानुमाणिता कवितात्पर्यविपर्ययाभूताऽसंलक्ष्य क्रमतया पण्डितराजानुमतया संलक्ष्यक्रमतयावा ध्वन्यते, सचायमष्टविधेभ्यो (४) गुणीभूतव्यङ्ग्येभ्योव्यतिरिच्यमानोऽप्रधानीभूतशब्दार्थालङ्कारोवाच्यातिशयीतिपारिभाष्यध्वन्या (५, त्मकृतयैतदुत्तमकाव्यम् “इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्येवाच्यादिति प्रकाशनिरुक्तेः । एतेन प्रधानव्यङ्ग्यस्यातिशयि विच्छित्तिविशेषाधायकत्वेन तदभावस्य मध्यमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य, कवितात्पर्यगोचरतया च तदनाश्रितव्यङ्ग्यकत्वात्मकस्याधमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य

(१) नवनवोभवेदिति चेत् ।

(२) सच चित्तवृत्तिविशेषयोगकाटाक्षिप्तारति ।

(३) अहम्भवेदिति चेत् । न, जयत्यर्थेनैव वक्तृविषयवैलक्षण्यसहकारेण भगवद्विषयकप्रणतेस्सवासना (१) नामभिव्यञ्जनात्, अतएव जयत्विति नाभ्यधायि, तथासति विधिनोत्कर्षस्यानिष्पन्नत्वध्वनेन नमस्कारद्योतकत्वं नोपपद्येत । इयमे (२) वार्थी व्यञ्जना यदाह मम्मटः “वक्तृबोद्धव्यकाङ्क्षनां वाक्यवाच्यान्यसन्निधेः प्रस्तावदेशकालादैर्वैशिष्ट्यात्प्रतिभाजुषाम् योऽर्थस्यान्यार्थधीहेतु व्यापारोव्यक्तिरेवसा,, इति । अनयैवदिशाऽपि समाकलनीयम् । श्रीकृष्णविषयिणीरिति देवावलम्बनतया भावरूपा पुरोदितेन व्यतिरेकालङ्कारेण सम्भोगशृङ्गा (३) रस्य च ध्वनिना जयत्यर्थाभिव्यज्यमानेन नमस्कारेण चानुमाणिता कवितात्पर्यविपर्ययाभूताऽसंलक्ष्य क्रमतया पण्डितराजानुमतया संलक्ष्यक्रमतयावा ध्वन्यते, सचायमष्टविधेभ्यो (४) गुणीभूतव्यङ्ग्येभ्योव्यतिरिच्यमानोऽप्रधानीभूतशब्दार्थालङ्कारोवाच्यातिशयीतिपारिभाष्यध्वन्या (५, त्मकृतयैतदुत्तमकाव्यम् “इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्येवाच्यादिति प्रकाशनिरुक्तेः । एतेन प्रधानव्यङ्ग्यस्यातिशयि विच्छित्तिविशेषाधायकत्वेन तदभावस्य मध्यमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य, कवितात्पर्यगोचरतया च तदनाश्रितव्यङ्ग्यकत्वात्मकस्याधमकाव्यतायाः प्रयोजकस्य

[५] तयारि द्विविधोऽस्ति । तर्कबोध्यव्युत्पत्त्या यामा । परयोत्तमकाव्यतालङ्कारवाच्यविशेषव्यङ्ग्यविशेषास्तेति ।

(६)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

विरहान्नतयोः प्रसङ्गः । इहापि ध्वनिसङ्करोरसस्याङ्गतया रसवदलङ्कारश्च ।
 “रसभावौ तदाभासौ भावस्य प्रशमस्तथा । गुणीभूतत्वमायान्ति यदाब्ज-
 कृतयस्तदा । रसवत्प्रेयऊर्जस्वि समाहितमितिक्रमादिति वचनात्” । भा-
 स्वरूपं विभावादिव्यज्यमाननिर्वेदाद्यन्यतमत्वं तच्च “निर्वेदग्लानिशङ्का
 श्रमधृतिजडताहर्षदैर्न्योग्रयचिन्तास्त्रासेर्ष्यामर्षगर्वास्मृतिमरणमदासृष्ट नि-
 द्राविवोधाः । व्रीडापस्मारमोहास्समतिरलसतावेगतर्कावहित्था व्याधु-
 न्मादौ विषादोत्सुकचपलयुतास्त्रिशदेते त्रयश्चेति दशरूपके प्रतिपादितम्
 एतदुपलक्षणं गुरुदेवनृपपुत्रादि विषयाणां रतीनाम् एतेन पुत्राद्यालम्बनं वा-
 त्सल्याभिधं रसान्तरमिति परास्तम् । यदाहुः “रतिर्देवादिविषया व्यभि-
 चारी तथाञ्जितः, इति । तदाभासश्चानुचितविभावालम्बनः । ‘प्रशमो,
 नाशः ॥ पुरोदीरितनियताकाङ्क्षया विशेषणत्रितययोजने “जयतीत्यन्तेन
 वाक्यपरिसमाप्तौ पुनस्तदवयवाभिहिते विशेषणान्वये समाप्तपुनराचता-
 प्रसक्तिः, रित्याक्षेपोनिरस्तः, अनियताकाङ्क्षयैव हि तदन्वये भवति तदापाद-
 नं, नियताकाङ्क्षाराहित्यस्य तत्र दूषकता वीजत्वात् । अतएव “प्रागप्राप्त
 निशुम्भशाम्भवधनुर्देवाविधाविर्भवत्क्रोधप्रेरित भीमभार्गवभुजस्तम्भापविद्धः
 क्षणात् । लज्ज्वालः परशुर्भवत्वशिथिलस्त्वत्कण्ठपीठातिथि र्थेनानेन ज-
 गत्सु खण्डपरशुर्देवोहरः ख्याप्यतः, इत्यत्र नोक्तदोषानुवृत्तिरिति प्रति-
 पादितं काव्यप्रदीपे । समभासिता च, तस्यैव भासा विश्वमिदं विभातीति
 श्रुते(क०मु०)रितरेषां जडत्वेन(१)परिच्छिन्नत्वेन(२)तथात्वायोगाच्च । एव

(१) अज्ञानत्वेनानात्मत्वेन वा ।

(२) स्वसमानसत्ताकाल्यन्ताभावप्रतियोगित्वेन तादृशान्योन्यामात्रप्रतियोगित्वेन, ध्वंसप्रतियोगित्वे-
 न चेत्यर्थः । वस्तुन आत्मावृत्तित्वविशिष्टप्रतियोगितासम्बन्धेनात्यन्ताभावेन भेदेन येति
 गौडब्रह्मानन्दकृता यामटैतसिद्ध्याग्यायां द्रष्टव्यम् ॥

ञ्चन शब्दप्रमाणालङ्कारः । णिनिप्रत्ययेनाभिधीयमानेन शीलेनशाश्वतिक
भासनयोग्यत्वं व्यज्यते । एतेनासाधारणधर्माभिधानेन ब्रह्मतादात्म्यं,
ललितत्वेन च कार्येणानन्दरूपत्वं तत्साधकत्वं वा जयत्यर्थसाधनं गम्यते ।
ललितपदं शोभनं ब्रूतइतिवा । अथवा समेत्यादेः समं, सदृशगुटिका
कलितं शोभनं वा 'भासि, दीप्तिमत् । तुल्येन शोभनेन वा भासेनाश्रीय
माणं वा 'कलितं, हारविशेषोयस्येत्यर्थः । नचान्तिमे पक्षे "न कर्मधारया-
न्मत्वर्थाय,, इत्यनुशासनविरोधः भासोस्त्यस्मिन्निति व्युत्पत्तेरेवोक्तार्थो
घायाश्रयणीयत्वादितिवाच्य, 'मसुव्वत, इतिमहाभाष्यनिर्देशात् महाक-
वीनां तादृशप्रयोगबाहुल्याच्च निरुक्तानुशासनं हि भ्रमविषयत्वेनांशतःक-
ल्पनीयम् । वस्तुतस्तु समत्वं भासिपदार्थस्य भासविशिष्टस्य विशेषणमेवश्च
रूपविशिष्टोघटोऽनित्य इत्यत्र वेदान्तपरिभाषोदाहृतेऽनित्यत्वस्य रूप इव
प्रकृतेऽपि भासेऽपि धर्मितावच्छेदके विशिष्टवैशिष्ट्यबोधमर्यादया समत्वस्या
न्वयेनोक्तार्थलाभोऽनपवादएव । ननु शब्दाश्रयो गगनं नित्यमित्यादौ
शब्देऽपि नित्यत्वस्य तुल्यन्यायादान्वयः प्रसज्येत, यद्विशिष्टे यद्भासते
तत्रासतिबाधके'तदन्वयस्य नियतत्वादिति । एतैरशेषैरपि पक्षैर्जयत्यर्थ-
साधनैर्व्यतिरेकाद्वा काव्यलिङ्गाच्छ्रारै रतिः प्रतीयते । "ललितं हार-
भेदेस्यादीप्तिस्तेऽपि चे,, तिविश्वप्रकाशः । किञ्च 'समैः, सकलैर्भासिभि
'ललित, दीप्तिमत् मितिवाऽर्थः सुभगाअपीदमीयदीप्त्यै स्पृहयन्ति, प्रयो-
जनभृतेनच तेन निरतिशयं रामणीयकं तेनचोत्कर्षसाधनेन रतिध्वं-
न्यते । हरिद्वसनपरिधानेन भवति शोभा गौराङ्गनानामिति तच्छोभि-
त्वं प्रकृतेनानुपपन्नम् । हरिदम्बरशोभीत्यनेनावसीयमानं प्रसिद्धच-
पलाविसदृशत्वमुपजीवति प्रधानव्यतिरेक इत्यनयोरङ्गाङ्गिभा-
वसङ्करः । यद्वा हरिचयति खण्डयति हरिदस्तं हरेरिन्द्रस्य काळियाश्री-

(८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितिम् ❀

विपश्यन् खण्डकं दर्पविनाशकं, गोवर्धनाभिधमहीध्रसमुद्धारणे
संवर्तसंवर्तप्रतिमधाराधरनिकरसर्वतो-मुखासारतो व्रजरक्षणात् पारिज
तपादपाहरणात् प्रधर्षणादन्यत्र प्रेषणाच्च । दृश्यन्त उत्कर्षापहारक
ऽपि खण्डन पदस्य प्रयुक्तयः, एतच्च परिपुष्णाति पुरोदीगिता मुत्कृष्टताम्
“ हरिरिन्द्रो हरिस्सर्प ” इत्यनेकार्थध्वनिमञ्जरी । ‘वरशोभिण्या, श्रेष्ठया
कुंकुमेनजनितयावा, ‘शोभया, कान्त्या । ‘वरस्य, वरप्रदानस्य ‘शोभया,
समीहया । स्वोपासकेषु वा श्रितयेत्यर्थः । प्रकृष्टकान्तिमत्या कुङ्कुमानुलेप
विराजितया उपासकेषु साकाङ्क्षयेतियावत् । अन्तिमे सदयत्वं व्यङ्ग्यम्
‘वरोऽभीष्टे देवतादेशश्रेष्ठे काश्मीरजेमत,, इति विश्वः । अत्र लोकोत्तर ति
मिरपुञ्जत्वेन रूपेण भगवतः प्रतिपादने विशेषणाना मानुगुण्यं वेदितव्यम् ।
अथवा वरजुलस्याशोकस्य निरुक्तकुञ्जे तिमिरपुञ्जं तत्त्वेनाध्यवसित
कालीमूर्तिः वृन्दावनाधिष्ठातृ देवता, तस्याश्च चिच्छक्तिरूपत्वेन समभासित
छलित्वञ्च । हरिदम्बरशोभि, दिगम्बरशोभि । “वद्धकाञ्चीं दिगंशुका,
मिति स्वतन्त्रतन्त्रे । ‘चपलया, तत्त्वेनाध्यवसितया तत्परिचारिकया देव्या,
‘मिळिनं’ सेविनम् । ‘चपलया, विभूषया वा ‘गवांलंकारगुक्तां च मुण्डमाला
विभूषिता, मितितच्चिन्तनात् । यद्वा कृष्णरूपा काली । हरिदम्बरेत्यादेः
पुरोदीगित पदार्थः, कृष्णस्य कालीरूपता गाम्भ्यं च नागिणीरूपतेत्यागमस्य
वक्ष्यम् । एतन्पदोऽप्यन्यन्मर्थं पूर्ववद्वो-यमिति ॥ अनुप्रासद्वयार्णः समिद्धि
वैभवं वैभवं वृत्तिरिभोः ग्यानविष्टापुष्टार्थं प्रतिकृष्टवर्षिचाननिगिन्य-
मनेरित् वरं वृत्तिश्रुत्यन्तप्रामा-या समानंमिवदेनान्यानुप्रामेनानाशेन
मन्त्रा लक्ष्मीं स्तेषां पदोऽनेनागता संसृष्टिः । वृत्त्यनुप्रामेन नृपचनुप्रागस्य
मन्त्रा देवाश्चानुप्रामेः नृपदे मन्त्राश्चानुप्रामेन भावं गंकाः ।
नृपदे मन्त्राश्चानुप्रामेः नृपदे मन्त्राश्चानुप्रामेन भावं गंकाः ।

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (९)

मानन्दो भवति ,, इति श्रुतेः, रत्यादि स्थायिभावावच्छिन्नाया विभावाद्या
 "लन विनिवृत्ताद्यतेस्वप्रकाशानन्द चेतनाशक्ते रसात्मिकायाः परम्परयो
 "कारकत्वे सति व्यञ्जनवर्णसाम्यं वा । एतन्मतेऽनुप्राससमाख्याऽपि साधु
 "ङ्गच्छते । नच रसस्य तादृशचैतन्यरूपत्वे रस उत्पद्यते नश्यतीत्यादि
 "तीते नवधा तद्विभागस्य चानुपपत्तिः, तस्य ब्रह्मात्मकत्वेन नित्यत्वादे
 कत्वाच्चेति वाच्यं तदवच्छेदकरत्यादीनामुत्पादविनाशशालित्वेनैव तत्र
 प्रतीतेः रवाश्रयावच्छिन्नत्व आख्यातस्य लक्षणाया उपगमात् । नवधा-
 विभागस्यापि रत्यादिस्थायिभावोपाधिकृत्वात् जीवेश्वरब्रह्मभेदेन त्रिधा
 चैतन्य विभागवत् प्रतिपादितमेतद्विस्तरेण रसगङ्गाधरे ।

वृत्त्यनुप्रासत्वञ्च वर्णविशिष्टवर्णत्वं, वै० स्ववृत्तिव्यञ्जनत्व विशिष्टजा-
 तिमस्त्व स्वाव्यवहितपूर्ववर्तितावच्छेदक निरुक्त जातिमद्वर्णाव्यवहितोत्तरत्व
 स्वाव्यवहित पूर्व स्वरसजातीय स्वराव्यवहितोत्तरत्व समानाधिकरण स्वा
 व्यवहितोत्तरस्वरसजातीयस्वराव्यवहित पूर्वत्व संमर्गावच्छिन्न स्वनिष्ठाव-
 च्छेदकदत्ताक प्रतियोगिताकभेदवत्त्व स्वविशिष्ट वर्ण विशिष्टत्वं तत्सम्बन्ध-
 चतुष्टयावच्छिन्न स्वनिष्ठ प्रकारतानिरूपित प्रतीयदिशेव्यतावत्त्व स्ववि-
 शिष्टभेदवत्त्वान्यतरसम्बन्धेन ।

प्र० वै० स्वसामानाधिकरण्य स्वसामानाधिकरणभेद प्रतियोगितावच्छेदक-
 त्वाभ्याम् । स्वाव्यवहितपूर्ववर्तित्वं च स्वविशिष्टत्वं वै० स्वातुकूलकृतिसम-
 वायिसमवेतकृतिमयोज्यत्व स्वविशिष्टक्षणोत्पत्तिकत्वाभ्याम् । वै० स्वप्राग
 भावाधिकरणत्व स्वविशिष्टव्यञ्जनप्रागभावाधिकरणत्वसम्बन्धावच्छिन्न
 स्वावच्छिन्नभेदवत्त्वाभ्याम् । वै० स्वघटितघटकत्व स्वप्रागभावाधिकरणत्वा
 भ्याम् । अव्यवहितोत्तरत्वमपि स्वप्रागभावस्थाने स्वक्षणध्वंसं व्यञ्जन-
 स्थाने स्वरं निवेश्य निर्वाच्यम् । एषा च परिष्कृतिर्यथायथं कार्या । द्वि. वै.

(८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

विपश्यन्ना खण्डकं दर्पविनाशकं, गोवर्धनाभिधमहीध्रसमुद्धारणे
संवर्तसंवर्तप्रतिमधाराधरनिकरसर्वतो-मुखासारतो ब्रजरक्षणात् पारिज
तपादपाहरणात् प्रधर्षणादन्यत्र प्रेषणाच्च । दृश्यन्त उत्कर्षापहार
ऽपि खण्डन पदस्य प्रयुक्तयः, एतच्च परिपुष्णाति पुरोदीरिता मुत्कृष्टा
“ हरिरिन्द्रो हरिस्सर्प ” इत्यनेकार्थध्वनिमञ्जरी । ‘वरशोभिन्या, श्रेष्ठ
कुंकुमेनजनितयावा, ‘शोभया, कान्त्या । ‘वरस्य, वरप्रदानस्य ‘शोभया,
समीहया । स्वोपासकेषु वा श्रितयेत्यर्थः । प्रकृष्टकान्तिमत्या कुङ्कुमानुलेपन
विराजितया उपासकेषु साकाङ्क्षयेतियावत् । अन्तिमे सदयत्वं व्यङ्ग्यम् ।
“वरोऽभीष्टे देवतादेश्श्रेष्ठे काश्मीरजेमत,, इति विश्वः । अत्र लोकोत्तर ति-
मिरपुञ्जत्वेन रूपेण भगवतः प्रतिपादने विशेषणाना मानुगुण्यं वेदितव्यम् ॥
अथवा वज्जुलस्याशोकस्य निरुक्तकुञ्जे तिमिरपुञ्जं तत्त्वेनाध्यवसिता
कालीमूर्तिः वृन्दावनाधिष्ठातृ देवता, तस्याश्च चिच्छक्तिरूपत्वेन समभासित्वं
ललित्वञ्च । हरिदम्बरशोभि, दिगम्बरशोभि । “वद्धकाञ्चीं दिगंशुका,,
मिति स्वतन्त्रतन्त्रे । ‘चपलया, तत्त्वेनाध्यवसितया तत्परिचारिकया देव्या,
‘मिलितं’ सेवितम् । ‘चपलया, विभूषया वा ‘सर्वाङ्कारगुक्तां च मुण्डमाला
विभूषिता, मितितचिन्तनात् । यद्वा कृष्णरूपा काली । हरिदम्बरेत्यादेः
पुरोदीरित एवार्थः, कृष्णस्य कालीरूपता रामस्य च तारिणीरूपतेत्यागमस्य
रहस्यम् । एतत्प्रक्षेप्यन्यत्सर्वं पूर्ववद्बोध्यमिति ॥ अनुपामदृपणः प्रसिद्धि
वैधुर्यं वैकल्यं वृत्तिविगोचैः ख्यातविद्वद्भाष्यार्थं प्रतिकूलवर्णनानतिरिच्य-
मानैर्गहिताभ्यां वृत्तिशून्यनुपामाभ्यां परार्थावस्थितेनान्त्यानुपामेनतादृशेन
शब्दा लङ्कारि स्तेषा मर्थाङ्काराणां मंगुष्टिः । वृत्त्यनुपामेन शून्यनुपामस्य
सादृश्यं देवाश्रयानुपमेशः नर्भेव तयोरन्यानुपामेन साकं संकारः ।
अनुपामन्वञ्च छेकवृत्त्याद्यन्यतमन्व, “ रसोर्व मः रसं होवायं लब्ध्वा

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (९)

आनन्दो भवति,, इति श्रुतेः, रत्यादि स्थायिभावावच्छिन्नाया विभावाद्याः कलन विनिवृत्ताद्युतेस्वरप्रकाशानन्द चेतनाशक्ते रसात्मिकायाः परम्परयोः प्रकारकत्वे सति व्यञ्जनवर्णमाम्यं वा । एतन्मतेऽनुमाससमाख्याऽपि साधु गङ्गच्छते । नच रसस्य तादृशचैतन्यरूपत्वे रस उत्पद्यते नश्यतीत्यादि प्रतीतेः नवधा तद्विभागस्य चानुपपत्तिः, तस्य ब्रह्मात्मकत्वेन नित्यत्वादे कत्वाच्चेति वाच्यं तदवच्छेदकरत्यादीनामुत्पादविनाशशालित्वेनैव तत्र प्रतीतेः रवाश्रयावच्छिन्नत्व व्याख्यातस्य लक्षणाया उपगमात् । नवधा-विभागस्यापि रत्यादिस्थायिभावोपाधिकत्वात् जीवेश्वरब्रह्मभेदेन त्रिधा चैतन्य विभागवत् प्रतिपादितमेतद्विस्तरेण रसगङ्गाधरे ।

वृत्त्यनुमासत्वञ्च वर्णविशिष्टवर्णत्वं, वै० स्वष्टिचैतन्यजन्यत्व विशिष्टजा-तिमत्त्व स्वाव्यवहितपूर्ववर्तितावच्छेदक निरुक्त जातिसद्वर्णाव्यवहितोत्तरत्व स्वाव्यवहित पूर्वं स्वरसजातीय स्वराव्यवहितोत्तरत्व समानाधिकरण स्वाव्यवहितोत्तरस्वरसजातीयस्वराव्यवहित पूर्वत्व संमर्गावच्छिन्न स्वनिष्ठावच्छेदकताक प्रतियोगिताकभेदवत्त्व स्वविशिष्ट वर्ण विशिष्टत्वे तत्सम्बन्ध-चतुष्टयावच्छिन्न स्वनिष्ठ प्रकारतानिरूपित प्रतीयदिशेष्यतावच्च स्वविशिष्टभेदवत्त्वान्यतरसम्बन्धेन ।

प्र० वै० स्वसामानाधिकरण्य स्वसामानाधिकरणभेद प्रतियोगितावच्छेदक-त्वाभ्याम् । स्वाव्यवहितपूर्ववर्तित्वं च स्वविशिष्टत्वं वै० स्वानुकूलकृतिसम-वायिसमवेतकृतिप्रयोज्यत्व स्वविशिष्टलक्षणोत्पत्तिकत्वाभ्याम् । वै० स्वप्राग-भावाधिकरणत्व स्वविशिष्टव्यञ्जनप्रागभावाधिकरणत्वसम्बन्धावच्छिन्न-स्वावच्छिन्नभेदवत्त्वाभ्याम् । वै० स्वघटिनघटकात्वं स्वप्रागभावाधिकरणत्वा-भ्याम् । अव्यवहितोत्तरत्वमपि स्वप्रागभावस्थाने स्वक्षणध्वंसं व्यञ्जन-स्थाने स्वरं निवेश्य निर्वाच्यम् । एषा च परिष्कृतिर्यथायथं कार्या । द्वि. नै.

(१०)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

पूर्वोक्तसंसर्गत्रयेण । तृ. वै. स्वभिन्नत्व, स्वघटितपादघटकत्वाभ्याम्
च. वै. निरुक्तसंसर्ग युगलावच्छिन्न स्वावच्छिन्न भेदवद्वृत्तित्व. स्ववृत्ति
व्यञ्जनत्व विशिष्ट जातिसामानाधिकरण्य स्वाव्यवहित पूर्ववर्तितावच्छेदक
व्यञ्जनत्वविशिष्टजातिमद्वर्णाव्यवहितोत्तरत्वसम्बन्धावच्छिन्नस्वावच्छि
न्न प्रतियोगिताकत्वैः । इह च वैशिष्ट्ययुगलं पूर्वोक्ताभ्यामेव स
न्धाभ्यां प्रवेश्यम् । प्रकाशतावच्छेदकेषु संसर्गेषु तृतीयस्य निवेशाद
टानुप्रासयमकयोस्तुरीयस्य निवेशाच्छेकानुप्रासस्य व्यावृत्तिः । अत्र
स्वभिन्नत्वमपि तत्र निवेशितम् । अन्यतरत्र द्वितीयसंसर्ग विवक्षणादेक
र्णेन वृत्त्यनुप्रासे अव्यवहितपूर्वत्वोत्तरत्वयोस्तथापरिष्करणत् स्वरैणा
रितेऽनन्तरिते च स्थलविशेषे तत्र नानुपपत्तिः । इतरेषां फलं स्पष्टप्र
मिति न तत्प्रदर्शितम् । अधिकं स्वयमेव सूक्ष्मबुद्धिभिरालोचनीयमित्ये
षा सरणिः ॥ श्रुत्यनुप्रासत्वं च हलवयववर्णविशिष्ट तादृशवर्णत्वं, वै. स्व
भिन्नत्व स्वजनक पवनाभिघातानुयोगि कण्ठादिस्थानानुयोगिक पवना
भिघातजन्यत्वाभ्याम् । विभिन्नसमानोच्चारणस्थानकैर्मकार नकारादि
भिर्घटिते निरुक्तालंकारानभ्युपगमेऽतादृश स्थानानुयोगिक पवनाभि
घातजन्यत्वमपि तृतीयसंसर्गतया निवेश्यम् ॥ अन्त्यानुप्रासत्वं च पदवि
शिष्टपदत्वं, वै० स्वभिन्नत्वसहचरित स्वविशिष्टव्यञ्जनविशिष्ट व्यञ्ज
विशिष्टत्व. स्वघटितपादविशिष्ट[?]पादघटकत्वान्यतरसंसर्गेण । प्र. वै. स्व
घटक व्यञ्जनमागभावानधिकरणत्व स्वघटकत्वाभ्याम् । द्वि. वै. स्ववृत्ति
व्यञ्जनत्व व्याप्यजानिमत्त्व. स्वाव्यवहितपूर्ववर्तितावच्छेदक स्वरत्वावा
न्तरजातिमद्वर्णाव्यवहितोत्तरत्व. स्वाव्यवहितपूर्ववर्तितावच्छेदक व्यञ्जन
त्वाप्यजान्यवच्छिन्नाव्यवहितोत्तरत्वाभाववत्त्व. स्वाव्यवहितोत्तर स्व

विशिष्ट स्वराव्यवहितपूर्वत्वेः । वै. स्ववृत्ति स्वरत्वव्याप्यजातिमत्त्व,
स्ववृत्तिह्रस्वत्व दीर्घत्वान्यतरवत्त्व, स्ववृत्तित्वाभावनद्धर्माभाववत्त्वेः । वृत्ति
त्वाभावप्रतियोगितयोरवच्छेदक्रमम्बन्धश्च स्वावच्छिन्नाव्यवहितोत्तरत्वम् ।
तृ. वै. स्वघटितत्व स्ववृत्तित्वाभ्याम् । वृ. प्रथमवैशिष्ट्यघटकसंमर्गा-
भ्याम् । सर्वं चेदं सहृदय हृदयार्जकत्वेन विशेषणीयम् ॥ चेतोद्रवमया
ह्लादव्यञ्जकानां मध्यवृत्तिमुपेयुषां टवर्गभिन्नानां स्ववर्गान्त्यवर्णाप्रान्त
मूर्ध्नी वर्णानां रचनया सम्भोगशृङ्गारोचितं माधुर्यं गुणः श्रुतिमात्रेणान्वय
स्यावगम्यमानतया प्रसादोऽपि । गुणत्वं च रसस्योत्कर्षकत्वे सति तद-
व्यभिचारि स्थितित्वं, रसपदं च रस्यत इति योगेन भावादीनामपि सङ्-
ग्राहकम् । युक्तिश्चात्र लक्षणम् कुंजगतत्वसमभासित्याप्यन्वयेन तमः पुंज
विशेषत्वस्य सिद्धेः । तदुक्तं चन्द्रालोके “युक्तिर्विशेषसिद्धिष्वेद्विधिप्रार्थान्त
रान्वयात्,, इति ॥ लाटी गीतिः “द्वित्रिपदा पांचाली लाटीया पञ्च सप्त वा
यावत्, शब्दास्सप्तमासवन्तो, भवति यथाशक्ति गौदीया,, इत्यभिधानात् ॥
गीतिकाष्टकम् “आर्या प्रथमार्धममं यस्या अपरार्धमाह सांगीतिम्,, इति
केदारभट्ट भाषितलक्षणात् । प्रकृतभावानुकूलत्वेन नात्र द्रव्यवृत्तता शङ्कितं
शरया । अत्रैतन्मङ्गललोकस्याख्यायिकेतिवृत्तानाक्षेपकत्वेऽपि न क्षतिः,
नान्यादावेव तन्निपमात् कथंचित्प्रकृतेऽपि सम्भवात् । इहादौ भगणः ॥
“भादिगुरुः,, इतिलक्षणात् “भेन्दुर्यशोनिर्मलम्,, इतितत्फलश्रुतेर्नात्र गण
दोषः । तस्य च रेवतीनक्षत्रं, गुरुर्वासरः, देवता जातिः, ह्यवबोर्णः,
प्रभावती पुरी, शुभं फलम्, ॐ भं भगणायनम इतिमन्त्र. इति सर्वं चतुर-
स्रमिति संक्षेपः ॥ १ ॥

रेणामालङ्कारः । आरोपस्य प्रकृतवाक्यार्थानुकूलतायां परिणामः, वत-
मात्वे च रूपकमित्यनयोर्विशेषः । चौर्यमाधनमनतिदीर्घाकृतिरस्रविभेद-
स्तिहेति मैथिलभाषया विश्रुतस्तन्निधः तमिव वंशीं करे धारयन्तम् “शेते
सर्वमस्मिन्निति शयो हस्तः,, प्रायेण कार्यमात्रस्य कराधीनत्वात्,, इति
शब्दकल्पद्रुमः । सन्धेर्वेणुतया सम्भावनाया इव शब्द प्रतिपाद्यमानाया
स्सद्भावात्मकारविशेष्ययो स्त्वपदाभिधेयतयोक्तविषया वाच्या वस्तुत्प्रेक्षा
(१)लङ्कारः तयोरनेकत्वात् । सन्देहे कोटियुगलस्य साम्प्रमिह तु तत्रैकत्र
कोटौ निर्णीत प्रायस्त्व मितिविवेकः । एवं भूतमपि ‘जगता मखिल भु-
वनानाम् न तु जगतः । मान्यम् । अपेर्विरोधमभिदधतोऽनुवत्या “आ-
भामत्वे विरोधस्य विरोधाभामइष्यत्,, इति कुवलयानन्देऽप्ययदीक्षित
विहितलक्षणस्य विरोधाभावालङ्कारस्य ध्वनिः । केचित्तु अपेरनभिधाने
ऽपि विरोधालङ्कारमेवाङ्गीकुर्वन्ति, तन्मते प्रकृते निरुक्तालङ्कारण्येति वि-
भावनीयं साहित्यरसिकैः । युवानं ननु बालं स्थिरं वा, तेन सद्वलिशालि-
नीनां धनाहरणस्यासम्भवात् । जगतां मान्यत्वेन कार्येण भुवननिवहदिति
जनसमुदायनिष्ठा श्रीकृष्णविषयिणीरतिर्भावात्मिका, व्रजमानिनीषु वर्त-
माना तादृशीरतिशृङ्गाररसस्थाविभावरूपा व्यज्यमाना नमाम इत्यनेन
द्योत्यमानायां कविगतायां रतौ भावेऽङ्गभादमाश्रयत इति शेषोऽलङ्कार-
रसवदलंकारयोस्तेऽष्टिः । उदितरीत्या पारिभाष्य भाषध्वनिः, तेनैतद-
प्यारोहमुपैत्युत्तमकाव्यस्य पदवीम् । शब्दालंकारध्वनि संकराद्य विस्तर-
भयेनाप्रपञ्चिता दर्शितदिशा सर्वत्र स्वयम्पूनीया गनीदिभिः । प्रसादोगुणः
“शैथिल्यं प्रसादः,, इति वामननृत्रस्य (१ अधि. १ माध्याय. ५ सं.)

(१) साय स्वतस्त्रिंशे दिने स्वस्थविह्वलः जातवान् । तद्दशमे तु स दान्धस्य शक्तेः भवः । तदा

पौ०२५०६१८३४ देहः । एषा ह्यवस्थानि ॥ २५०७०६१८३४ देहः ।

चेतोवसुनि वृजमानिनीना गामोपिन्तं सद्बलिगालिनीनाः
वेणुं शयेसन्धिगिताद्वानं गान्यं युवानं व्रजानां नमापः

चेतोवसुनीति । गमीनीनाभिगितानिभिरेवनिभिः । (१) परस्परकत्वाच्च, शोभिनीना, श्लेषनिश्चयनयोग्यमेवनाम्नेन
स्कारेणोपमेये शब्दाजिगीगमानम्योपमाननादान्म्यस्य रूपकस्वरूपं
तद्विशेषस्य परस्परभावेक्षरूपतममुदायात्मकस्य मानयवस्य विहाय
त्मकत्वायोगाच्च केवलनिरवगवरूपकस्य नद्वरः । अतएव व्रजाभि
देशस्य, ननु कस्य च नैकग्रामस्य । 'मानिनीनां, गामणीयक नमुस
विषयाभिमानवर्तानाम् । ननु पानिन्याः । मानमान्येव धनानि
यितुम् । सद्बलिगालिनीनामिन्वनेन कार्यकारणभावविधया सौन्द
पूर्णतारूप्यं, तादृशीनां वसुचौर्येऽतिदुष्कृत्वं. तत्र प्रवर्तनेन युनि प्रवीण
च ध्वन्यते । चेतोहरणेन च व्रजमानिनीषु श्रीकृष्णविषयिणी प्रीतिः
अभिमाने सौन्दर्यादिव्यङ्ग्यद्वारा सद्बलिगालित्वस्योपयोगितया ऽनपे
णीयव्यङ्ग्य व्यापारस्य नैयायिकाभ्युपगतलिङ्गव्यावर्तकेन काव्यविशेष
नोपेतस्य काव्यलिङ्गस्याप्रमत्तया पुगेदीरितश्लेषभित्तिक रूपकानुमा
ततया सङ्कीर्णः परिकरालङ्कारः । बलवद्भिगानित्वस्य “ मदीयं धनं ”
केनाप्यपहर्तुंशक्यम्,, इत्याद्यभिमाने नाक्षादेव हेतुतया तथाभूतं काव्यलि
ङ्गं वा । चेतस्तेयस्यासम्भवितया तत्र धननादात्म्यारोपस्य प्रकृतार्थोप
योगितया “ महर्षेर्व्यास पुत्रस्य श्रावं श्रावं वचस्सुधाम् । अभिमन्युसु-
तोराजा परां मुदमवाप्तवान्,, इतिरसगङ्गाधरोक्तोदाहरणइव समासगः प-

(१) सादस्य निमित्तकस्यैव तादात्म्यस्य रूपकत्वम् । अतएव “सुख मनोरमा रामा,, इत्यादौ
नाति प्रसक्तिः ।

(२) पुरस्कारेणेत्यनेनापहर्तुतिश्रान्तिमदति शयोक्ति निदर्शनालङ्काराणा व्युदासः । शब्दादि
त्यनेन प्रात्यशिकाहार्यं गोचरतादात्म्यस्य “ सुखमिदमन्त्र,, इत्यादौ प्रत्यादेशः । निश्ची
रमानस्येत्येतेनोत्प्रेक्षाया निरासः.

रेणामालङ्कारः । आगेपस्य प्रकृतवाक्यान्तुक्लतायां परिणामः, वन-
यात्वे च रूपरूपमित्यनयोर्विज्ञेयः । चौथमाधनमननिर्द्धारानिरस्तविशेष
स्मिहेति मैथिलभाषया विश्रुतस्मान्वितः तमिव वर्णा इते धाम्न्यम् “जेने
सर्वमस्मिन्निति शयो दम्नः,, प्रायेण कार्यगात्रस्य कगार्धानन्वात्,, इति
शब्दकल्पद्रुपः । मन्धैर्वैष्णव्या सम्भावनाया इर शब्द प्रतिपाद्यमानाया
स्तद्धावात्मकाविशेष्ययो स्वरूपदाभिधेयतयोक्तविषया वाच्या यन्नुपेक्षा
(?) लङ्कारः तयोरेनेरुत्थात् । सन्देहे कोटियुगत्तराय साम्यमिह तु सर्वत्र
कोटी निर्णीत प्रायश्च मितिविकेकः । एवं भूतमपि ‘जगता मयि न भु-
वनानाम् न तु जगतः । मान्यम् । अपेक्षितभूमिद्वयोऽन्यस्या “जा-
भामत्ये विरोधस्य विरोधाभासादप्येत,, इति गदल्यानन्ते ऽप्यपदीक्षित
विहितलक्षणस्य विरोधाभावालङ्कारस्य भवतिः । तेनैव अपेक्षाभिधाने
ऽपि विरोधाङ्कारो नाङ्गीकर्तव्यः, तन्मात्रे मात्रे निरस्ताङ्कारणेन वि-
भावनीये साहित्यसर्विकः । युदाने न तु यात्वं रथसिंहा, तेन सद्विद्या
नीनां धनाहरणस्यासम्भवात् । जगतां मान्यत्वेन प्रायेण सुखानिदादिति
जनमुदायनिष्ठौ श्रीरूपविपरिणीतिर्भावात्किञ्चा, तजमानिर्णीष्टौ
माना तादृशीरतिशयङ्कारसरस्याविभाकरा व्यस्यमाना नमाप् स्वगत
योग्यमानाया कविगताया रती भादेऽङ्गभादमाप्यत इति मेधाङ्कार
रसवदलेकारशोरसंज्ञः । इति सर्वात्या पारिभाष्य भाष्येति, तेन ए-
वपारोक्षमूर्तिसुखरात्रस्य पदवीम् । शब्दात्तराणि संज्ञायां एव स-
भवेनाप्रपञ्चितता दर्शितदिशा सर्वत्र स्वयमेवोक्तं नोक्तिः । अत्रैव
“द्वैतियं मतारः,, इति सामान्यस्य (१) उक्तिः । भाष्ये, ६२.

रेणामालङ्कारः । आरोपस्य प्रकृतवाक्यार्थानुकूलतायां परिणामः, अत-
 यात्वे च रूपकमित्यनयोर्विशेषः । चौर्यमाधनमनतिदीर्घाकृतिरस्रविभेद
 स्सिंहेति मैथिलभाषया विश्रुतस्तन्धिः तमिव वंशीं करे धारयन्तम् “शेते
 सर्वमस्मिन्निति शयो हस्तः,, प्रायेण कार्यमात्रस्य कराधीनत्वात्,, इति
 शब्दकल्पद्रुमः । सन्धेर्वेणुतया सम्भावनाया इव शब्द प्रतिपाद्यमानाया
 स्तद्भावात्मकारविशेष्ययो रस्वपदाभिधेयतयोक्तविषया वाच्या वस्तूत्प्रेक्षा
 (१)लङ्कारः तयोरनेकत्वात् । सन्देहे कोटियुगलस्य साम्यमिह तु तत्रैकत्र
 कोटौ निर्णीत प्रायत्वं मितिविवेकः । एवं भूतमपि ‘जगता मखिल भु-
 वनानाम् न तु जगतः । मान्यम् । अपेर्विरोधमभिदधतोऽनुक्त्या “आ-
 भासत्वे विरोधस्य विरोधाभासऽप्यत,, इति कुवलयानन्देऽप्ययदीक्षित
 विहितलक्षणस्य विरोधाभामालङ्कारस्य ध्वनिः । केचित्तु अपेरेनभिधाने
 ऽपि विरोधान्ङ्कारमेवाङ्गीकुर्वन्ति, तन्मते प्रकृते निरुक्तालङ्कारएवेति वि-
 भावनीयं सादृश्यसर्कैः । युवानं नतु बालं स्थविरं वा, तेन सद्बलिशालि
 नीनां धनाहरणस्यासम्भवात् । जगतां मान्यत्वेन कार्येण भुवननिबहवर्ति
 जनसमुदायनिष्ठा श्रीकृष्णविषयिणीरतिर्भावात्मिका, व्रजमानिनीषु वर्त-
 माना तादृशीरतिश्शृङ्गाररसस्थायिभावरूपा व्यज्यमाना नमाम इत्यनेन
 द्योत्यमानायां कविगतायां रतौ भावेऽङ्गभावमाश्रयत इति भ्रयोऽलङ्कार
 रसवदलंकारयोस्संसृष्टिः । उदितरीत्या पारिभाष्य भावध्वनिः, तेनैतद-
 प्यारोढुमर्हत्युत्तमकाव्यस्य पदवीम् । शब्दालंकारध्वनि संकराश्च विस्तर-
 भयेनाप्रपञ्चिता दर्शितदिशा सर्वत्र स्वयमृदनीया मनीषिभिः । प्रसादोगुणः
 “शैथिल्यं प्रसादः,, इति वामनसूत्रस्य (१ अधि. १ माध्याय. ६ सं.)

(१) साय स्वतस्सिद्धे विषयेऽसम्भावितया सातस्य सादृश्येरेतुका तादात्म्य सम्भावना । एषा
 चोत्कटकोटिकस्तन्देहः । उत्पद्यमान विषयताविशेष सम्भावयामीति प्रतीतिषाङ्कः ।

चेतोवसूनि व्रजमानिनीनां गायोषितुं सद्बलिशालिनीनां
वेणुं शयेसन्धिमिवादधानं मान्यं युवानं जगतां नमामः

चेतोवसूनीति । समीचीनाभिनिवलिभिरेववलिमिश्रमात्रं
(१) परहारकत्वाच्च, शोभिनीनां, श्लेषनिबन्धनतयोपमेयतावच्छेदक
स्कारेणोपमेये शब्दान्निर्धीयमानस्योपमानतादात्म्यस्य रूपकरूपत्वे(२)
तद्विशेषस्य परस्परसापेक्षरूपकममुदायात्मकस्य सावयवस्य विरहात् प्राद-
त्पकत्वायोगाच्च केवलनिरवयवरूपकस्य सङ्करः । अतएव व्रजाभिष-
देशस्य, ननु कस्य च नैकग्रामस्य । 'मानिनीनां, रामणीयक' ^{उत्पन्नं}
विषयाभिमानवतीनाम् । ननु मानिन्याः । मानसान्येव धनानि चो-
यितुम् । सद्बलिशालिनीनामित्यनेन कार्यकारणभावविधया सौन्दर्य-
पूर्णतारूप्यं, तादृशीनां वस्तुचौर्येऽतिदुष्करत्वं, तत्र प्रवर्तनेन यूनि प्रवीणत्वं
च ध्वन्यते । चेतोहरणेन च व्रजमानिनीषु श्रीकृष्णविषयिणी प्रीतिः ।
अभिमाने सौन्दर्यादिव्यङ्ग्यद्वारा सद्बलिशालित्वस्योपयोगितया उपेक्ष-
णीयव्यङ्ग्य व्यापारस्य नैयायिकाभ्युपगतलिङ्गव्यावर्तकेन काव्यविशेष-
नोपेतस्य काव्यलिङ्गस्याप्रसक्त्या पुगेदीरितश्लेषभित्तिक रूपकानुप्राणि-
ततया सङ्कीर्णः परिकरालङ्कारः । वलवद्भिगाश्रितत्वस्य “मदीयं धनं न
केनाप्यपहर्तुं शक्यम्”, इत्याद्यभिमाने जाक्षादेव हेतुतया तथाभूतं काव्यलि-
ङ्गं वा । चेतस्तेयस्यासम्भवितया तत्र धनतादात्म्यारोपस्य प्रकृतार्थोप-
योगितया “महर्षेर्व्यास पुत्रस्य श्रावं श्रावं वचस्मुधाम् । अभिमन्युसु-
तोराजा परां मुदमवाप्तवान्”, इतिरसगङ्गावरोक्तोदाहरणञ्च समासगः प-

(१) सादस्य निमित्तकस्यैव तादात्म्यस्य रूपकत्वम् । अतएव “सुख मनोरमा रामा”, इत्यादौ
नाति प्रसक्तिः ।

(२) पुरस्कारेणेत्यनेनापहर्तुतिधान्तिमदति शयोक्ति निदर्शनालङ्काराणां व्युदासः । शब्दादि-
त्यनेन प्राप्त्यशिकाहार्यं गोचरतादात्म्यस्य “पुरमिदमन्द” इत्यादौ प्रत्यादेशः । निधी-
यमानस्येत्येतेनोत्प्रेक्षाया निरासः

रिणामालङ्कारः । आरोपस्य प्रकृतवाक्यार्थानुकूलतायां परिणामः, अत-
थात्वे च रूपकमित्यनयोर्विशेषः । चौर्यमाधनमनतिदीर्घाकृतिरस्रविभेद
स्सिद्धेति मैथिलपापया विश्रुतस्सन्धिः तमिव वंशीं करे धारयन्तम् “शेते
सर्वमस्मिन्नितिगयो हस्तः,, प्रायेण कार्यमात्रस्य कराधीनत्वात्,, इति
शब्दकल्पद्रुमः । सन्धेर्वैणुतया सम्भाषनाया इव शब्द प्रतिपाद्यमानाया
स्तद्भावात्मकारविशेष्ययो स्त्वपदाभिधेयतयोक्तविषया वाच्या वस्तूत्प्रेक्षा
(१)लङ्कारः तयोरनेकत्वात् । सन्देहे कोटियुगलस्य साम्यमिह तु तत्रैकत्र
कोटौ निर्णीत प्रायस्त्व मितिविवेकः । एवं भूतमपि ‘जगता मखिल भु-
वनानाम् न तु जगतः । मान्यम् । अपेर्विरोधमभिदधतोऽनुक्त्या “आ-
भासत्वे विरोधस्य विरोधाभासइष्यत,, इति कुवलयानन्देऽप्यव्यदीक्षित
विहितलक्षणस्य विरोधाभासालङ्कारस्य ध्वनिः । केचित्तु अपेरनभिधाने
ऽपि विरोधान्ङ्कारमेवाङ्गीकुर्वन्ति, तन्मते प्रकृते निरुक्तालङ्कारएवेति वि-
भावनीयं साहित्यरसिकैः । युवानं नतु बालं स्थविरं वा, तेन सद्वलिशालि
नीनां धनाहरणस्यासम्भवात् । जगतां मान्यत्येन कार्येण भुवननिबहवर्ति
जनसमुदायनिष्ठा श्रीकृष्णविषयिणीरतिर्भावात्मिका, व्रजमानिनीषु वर्त-
माना तादृशीरतिशृङ्गाररसस्थायिभावरूपा व्यज्यमाना नमाम इत्यनेन
द्योत्यमानायां कविगतायां रतौ भावेऽङ्गभावमाश्रयत इति भेयोऽलङ्कार
रसवदलंकारयोस्संसृष्टिः । उदितरीत्या पारिभाष्य भावध्वनिः, तेनैतद-
प्यारोढुमर्हत्युत्तमकाव्यस्य पदनीम् । शब्दालंकारध्वनि संकराश्च विस्तर-
भयेनाप्रपञ्चिता दर्शितदिशा सर्वेन स्वयमृदनीया गनीषिभिः । प्रसादोगुणः
“शैथिल्यं प्रसादः,, इति वामनसूत्रस्य (१ अधि. १ माध्याय. ६ सं.)

(१) साधन स्वतरिगदे विषयेऽसम्भवितया सातस्य सादृश्येतुवा तादृश्य सम्भाषना । एषा
योक्तव्योक्तिरसन्देहः । स्वयत्नस्य विषयताविशेष सम्भाषणमिति प्रतीतिरादिष्टः ।

(१४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

“वन्धस्य शैथिल्यं शिथिलत्वं प्रसादः,, इति वृत्तिस्वगतात् । वैदर्भी रीतिः
 “ अट्टितिरल्प वृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यत,, इति प्रतिपादनात् । गीतौ
 वैदर्भ्यादि समाख्या च विदर्भगोडपाञ्चालेषु देशेषु तत्रत्यैः कविभिर्गथा-
 स्वरूपमुपलब्धत्वात् “ विदर्भादिषु दृष्टत्वात्तत्समाख्या,, इति हि वामन
 सूत्रम् (१ मे.अधि. २ याध्याये १० पम्) । इन्द्रवज्रावृत्तं “ स्यादिन्द्र
 वज्रायदितौ जगौग,, इति लक्षणादिति ॥ २ ॥

नवीन विलसत्प्रभश्रितवलाक कादम्बिनी
 विडम्बन सितोरग सगति दीप्त देहद्युतिः ।
 पिशङ्ग फणि सङ्गिनी शिरसि यौवनोद्भासिनी
 मनागपि मदन्तरे स्फुरतु धूर्जटेः कामिनी ॥ ३ ॥

नवीनेति । वृष्टि प्राक्कालिकया विलसत्प्रकृष्टकान्तेः उपसर्गस्य वाचक-
 त्वेन(१)प्रकृष्टत्वस्य विशेषे हेतुतया काव्यलिङ्गम् । वक्पङ्क्तिश्रिताया, नतु
 केवलाया, अतएव रसगङ्गाधरोक्ते “वामाकल्पित वामाङ्गो भासते भाल
 लोचनः । शम्प(२)या सम्परिष्वक्तो जीमूत इव शारद ” इत्यत्रैव
 प्रतिविम्बोपादान विरहकृता नोपमायां न्यूनपदता । जलदमालाया अनु-
 करण कृता धवला-हि माल्येन दीप्ता देह द्युतिर्यस्या इत्यर्थः । अत्र स्वत-
 स्तिद्धेन वस्तुनोपमालङ्कारोऽति स्फुटतया बोध्यते, सा च यथोक्तकाद-
 १. निरूपिता । तादृशेन चालङ्कारेण सपदि तापशान्ति कारित्वं

श्यामल शालित्वञ्च भावपोषकं व्यज्यते । “खर्वमूर्तिं नीलवर्णां” इत्येक
जटाध्यान प्रस्तावे तारा पारिजातवचनात् । न च तयोर्धर्मस्याहिमाल्य व
लाकात्मकस्य पार्थक्यात्साधारणत्वाभावेन कण्डूकारमुदितालङ्कारो गम्ये
तेति वाच्यं, “कोमलातप शोणाभ्र सन्ध्याकाल सद्योदरः । कपाय वसनोपा
ति कुङ्कुमालेपनो यतिः” इत्यादाविव प्रकृतेऽपि निरुक्तधर्मयोर्विम्बप्रति
विम्बभावस्य भेदनिश्चयेऽपीच्छयैकत्वेनारोप रूपस्य सत्तया “साधारण ध-
र्मस्य क्वचिदनुगामितयैक्य रूपेण निर्देशः विम्ब प्रतिविम्बभावो वा दृष्टान्त
वत्,, इत्यलङ्कारमव्वस्वकारोक्तेस्वसाजात्य स्वतादात्म्य स्वाभेद वि-
षयकाहार्यं ज्ञानगोचरत्वान्यतम सम्बन्धेनोपमानगतधर्मं विशिष्टधर्मवस्व
स्योपमानसाधारण धर्मवत्त्व परिष्कृतस्योपमेये सद्भावात् । न च स्ववृत्ति
धर्मवत्त्व स्ववृत्ति धर्मसदृश धर्मवत्त्वान्यतरेणोपमानविशिष्टत्वस्यैवोपमाप्रयोज
कत्वमास्तां कृतं क्लृष्टकल्पनयोदीरितयेति साम्प्रतं, सादृश्यस्य निमित्त
सव्यपेक्षत्वेन तत्प्रवेशेऽनवस्थानात् साधारणधर्मेणोपमानोपमेययोस्तादा-
त्म्य प्रतीति कृतस्यैव चारुत्वस्योपमायामिष्टत्वेनान्तरेण धर्मयोरभेदाध्यव-
सायं तदुपपादनासम्भवात् । नचैव भव्युपमानोपमेय वृत्ति धर्मस्य सा-
धारणत्वेन तदनुपपत्तिर्निरुक्तान्यतम सम्बन्धेन धर्मविशिष्टधर्मस्य तथा
त्वादित्यलमलङ्कार मीमांसयेति । देव्यास्सिता हि माल्यवत्त्वञ्च “स्फुर-
न्ती लसच्छ्रेत नागेन्द्रधाराम्” इति ब्रह्मसंहिता प्रमाणयति । पिशंगेति ।
शिरसि पीतेन फणिना संगता, नतु साधारणेन भुजंगमेन । अयमेव
चाक्षोभ्य ऋषिः, तथा चैकजटा प्रकरणे नील तन्त्रे “मौलावक्षोभ्यभृषि-
ताम्,, इति । यौवनोद्भातिनीति णिनिप्रत्ययेन शीलप्रतिपादकेन यौवने
सार्वकालिकत्वम् उतातुभासस्य शरीरमाग्रे मातृमशक्तत्वेनोद्गमनात्तदतिश-
योव्यज्यते । ईपदपि तादृशी, “धूर्जटेः,, धुरस्त्रैलोवयचिन्ताया ‘जटिः’

कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति कथ्यते । आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येनकेनचित् । अन्यापदेशेनाश्वासमुखे भाव्यर्थसूचनम्, इति । कयालक्षणमपि तत्रैव “कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम् आदौ पद्यैर्नमस्कारः खळादेर्वृत्तकीर्तनम्, इति । आदिनाऽऽदिना चरित्रस्य द्वितीयेन सज्जनस्य परिग्रहः । आश्वासेत्युपलक्षणं लम्बोच्छ्वासोल्लासाभिधानानाम् । वक्त्रलक्षणं वृत्तरत्नाकरे “वक्त्रं नाद्यान्मपौ स्यातामव्येयौऽनुष्टुभि रूपातम्, इति (१) । अपरवक्त्रलक्षणं काव्यादर्शविवृतौ “अयुजिननरलागुरुस्समे तदपरवक्त्रमिदं नजौजरौ, [२] वैतालीयं पुष्पिताग्राञ्चेच्छन्त्यपरवक्त्रकम्, इति । वैतालीयपुष्पिताग्रयोर्लक्षणं छन्दोमञ्जरी “पङ्क्तिपदेऽष्टौ समेकला स्ताश्च समेस्युर्नो निरन्तराः । न समान्तराश्रिता कला (३) वैतालीयेऽन्तेरलौगुरुः । “अयुजिनयुगरेक्तोयकारो युजिनुनजौ जरगाश्चपुष्पिताग्रा, इति । केचित्तु पुष्पिताग्राभिवं छन्दोपच्छन्दसिकमेवमन्वते, तदेतद्वृत्तरत्नाकरस्य नारायणीयव्याख्यायां प्रतिपादितविविक्तेरेण । यत्तु “वृत्तमाख्यायते यस्य नायकेन स्वचेष्टितम्, इति वचसाऽऽख्यायिकानिरूपणप्रकरणेन नायक एवाख्यायिका मभिदध्यादित्युक्तं, तन्नयुक्तम्, “अपित्वनियमोदृष्टस्तत्राप्यन्ये रुदीरणाद्, इत्यार्यनमदण्ड्याचार्यवचनप्रामाण्यात् । एतेनात्रेतिवृत्तस्य नायका नुपनिबद्धत्वेपि नक्षतिर्लक्षणस्य । अत्र महाराज लक्ष्मीश्वरसिंहो नायकः, नायिका च तदीयमहिषी लक्ष्मीश्वरी देवी । तच्चरित्रमिति वृत्तम् । अङ्गतया तयोः पूर्वजानामपि चरितं सुपुन्यस्तं व्यञ्जनया

१) आद्यादयराजसगणौ न स्यातां तुरीयाश्चरायगण स्यात्, तदतिरिक्ताश्चरणाश्चरायगणानिरेक्ष्यन्त्युत्तर्हि अष्टादशपादकेऽदसि ववत्र नामतद्भवति ।

(२) विषयेपादे मन्त्रेण नगणौरगणोत्पुर्गुस्थ, समवादेनजरगणा तदेतदपरवक्त्रकम् ।

(३) ‘समा, द्वितीयाप्रभृति वक्त्रा पराधिता न वार्ता ।

(१८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

तयोरेव प्रशस्ततां बोधय द्रति कविमाश्रितां परिपुष्णाति, सोऽयं मर्थ-
शक्तिमूढकोऽसंलक्ष्यकमः प्रवन्धेध्वनि भावस्य । उक्तेचचरित्रे क्वचित्
शृङ्गारस्य, क्वचित् वीरस्य, क्वचित् करुणायाः क्वचित् अद्भुतस्य, क्व-
चित् भयानकस्य क्वचित् शान्तस्य व्यञ्जकतया रसपदेनभावस्यापिप्रहणा-
दन्ततस्तद्व्यञ्जकत्वेन सरसत्वोपपत्त्याऽऽख्यायिकालक्षणावयवसङ्गतिः।
इतराप्यपि विशेषणानि स्फुटतया स्वयमेव समन्वेयानि ॥ वासुमाकरं पिति
बाशब्द स्सादृश्यमभिधत्ते श्रौतोपमाळङ्कारविचारे “यथेववादिशब्दाना-
म्,, इति प्रदीपेदर्शनात् । सुमाकरं वसन्तमिव मुनीनां प्रहर्षावह महङ्कार-
कारणंवा, अनेनैवत्रूपयोऽभिमन्यन्त इति सर्वेभ्यस्तेभ्यस्तत्कर्षोभावाद्ग-
तया व्यज्यते, “प्रमदस्सम्मदे मत्त,, इतिविश्वः । परत्र मुनीनां तदारूप
विटपिनां प्रमदनं विकाशकं, प्रमदस्य चेतन धर्मतया बाधेन विकाशे जा-
त्स्वार्थलक्षणायां वाच्यार्थस्यात्यन्ततिरस्कृततया तदतिशयो ध्यन्यते, भ-
वतिच वसन्ते मुनिवृक्षेषु प्रसूनोद्गमः “मुनीनामप्युत्कलिकाकरे,, इति
वातवदत्तायांतस्यवर्णनात् । विपिनशोभाभिवर्धनेन तत्रवासिनांतेषां हर्षप्रद
मितिवा ॥ ‘रामस्य, रामचरिस्योद्दीपनं रामायणाभिध महाकाव्यविरचना
त्मकाशकं, ‘रामेण, रामेतिनाम्ना उद्दीप्यत उद्दीपनं “कृत्यल्युटोवहुलम्,,
इति भगवतः पाणिने रनुशासनात्, विराजमानंवा, मत्तर्पिदेशितेन राम-
नामजपेनैव महर्पित्व मसौलेभ इति पौराणिकीकथाऽत्र विज्ञेया । यद्वा रा-
मस्य मनोज्ञस्य गद्गावतरण विश्वामित्रवृत्त तु विलमितादे रुद्दीपनं व-
र्णयित्वाम् । अन्यत्र रामाणां रमणीनां कामाभिवर्धनम् । रामंप्रकृत्य
“रायवेचामिनश्चेतमनोज्ञेय,, इति “रामाऽङ्गना,, इति विश्वप्रकाशः । इयं
च श्रौती वृत्तौरमा अङ्गानां चतुर्णां मुपाटानात् । एतस्याऽत्र श्लेषमूढ-
कृतयः सद्गुरः । काव्यादर्नीकृत्रपेनृ शब्दपङ्क्तिन्यमदत्वेन शब्दश्लेष निमित्त-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१९)

कतया श्लेषोपमाया अप्रसक्तत्वेनेयं समानोपमा, तल्लक्षणोदाहरणे यथातत्रैव
 “सरूपशब्दवाच्यत्वा त्सा समानोपमा यथा । बालेवोद्यानमाळेयं शालका-
 नन शोभिनी,, इति ॥ अत्रच प्रतिपाद्यतोपरागेण शब्दस्यैव साधारण-
 धर्मत्वं बोध्यम् (१७४) पृ० रसगङ्गाधरे तत्प्रतिपादनात् । नच विद्यमान-
 स्य शब्दबोधोधावलम्बनस्यैव तथात्वेन शब्दस्य स्वजन्येशब्दाभिधे ज्ञाने-
 ऽभासमानतया नोदितधर्मता सम्भवतीति साम्प्रतं, वैयञ्जनिकबोधेन वि-
 पयीकृतस्य शब्दस्य क्वचित्तादात्म्येन क्वचिद्वाच्यतया पदार्थांशे शब्दबोध
 विषयत्वस्यालंकारिकै रूपगमात्, नहि न्यायनयइवेशापि शब्दबोधप्रणाली,
 नवाविद्यमानस्य साधारणधर्मस्याभिधेयतैवेति नियमः एवं सति न काप्यनु-
 पपत्तिः, अतएव “उदेति मविताताम्र स्ताम्र एवास्तमेति च । सम्पत्तौ च
 विपत्तौ च महता मेकरूपता,, इत्यादौ प्रस्तुतस्य विशेषस्य सामान्येन
 समर्थनात्मके ऽर्थान्तरन्यासे न कथितपदत्वस्य दोषता प्रसक्तिः, नवा
 “दयातितिक्षासत्यञ्च युक्तं त्यक्तुं ननु त्वया । अपवर्गं व्यञ्जनानि कथं-
 स्यु भीमभूमिपे,, इत्यादौ भीमनामधेयेभूमीपतौ व्यङ्ग्येन भीमभूमिप पदेन
 तदात्मतया श्रुते तथाविधेन पवर्गाघटकव्यञ्जनेन तदात्मतया श्रुतानां दयाति-
 तिक्षादीनामसम्भवस्य कथं स्यु रित्यनेन प्रतिपन्नस्य वाच्यार्थस्योपपादक-
 तयोक्तयो इशब्दात्पार्थयोगुणीभूतव्यङ्ग्यत्वानुपपत्तिरिति ॥ कवीनां, लोको-
 त्तरवर्णनानि पुणानां, वंशएव कुलमेव वंशो, पेणुः ‘दीर्घत्वात् तस्य ‘बीजम्,
 अङ्गुलकारणं, श्लेषनिमित्तकसमर्थसमर्थक भावोपेतारोपयुगललक्षणक-
 मलङ्कारः श्लिष्टपरम्परितरूपकम् । कविकुलकारण मिति वा, कविकु-
 लस्य तत्त्वात्मक मिति वा । “बीजं रेतसि तस्येव हेतावङ्गुल कारणे,, इति
 विश्वः । प्रचेतसो ननु साधारणमुनेरपत्यं प्राचेतसं बाल्मीकि मुपास्महे ।
 भावध्वनिः ॥ ४ ॥

(२०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

यद्गद्यबन्धकलनं किलसन्तनोति

काव्ये कृतौ कुशलतातिशयं सुबन्धुः ।

शक्तिस्फुरत्कविनतालि सुबन्धुराद्धि-

पङ्केरुहोऽजयदयं नितरां सुबन्धुः ॥ ५ ॥

“ बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्,, इति प्रतीततमा युक्तरूपोक्तिर्वाणस्यैव मा
कवेः प्रतिपादयति सर्वतः प्रधानतां, पर मनेनापि हर्षचरिते “ कवीनाम
गलद्दर्पोनृनंवासवदन्तया, शक्तयेव पाण्डुपुत्राणां गतयाकर्णगोचरम्,, इत्यभि
धानात् तदीयन्लायाया निज कादम्बिनीविरचने समुपादानात् तत्पद्या
नामलङ्कार निबन्धेषु निदर्शनदर्शनाच्च कविकुलकैरवकलाकरं महाकवि
मारभ्यमाणै—तद्गद्यकाव्यसमुचितस्तवंतन्निर्मातृषुप्रथमतममुदकुम्भन्या
यात्सुबन्धुं कीर्तयति यद्गद्यबन्धेत्यादिना, यदीय वासवदत्ताभिधा
गद्यकाव्यस्य ‘कलनं, सामान्य दर्शनं किलेतिनिश्चये, काव्यनिर्माणे निष्पु
तरतां सम्यक् विस्तारयति न तु केवलं करोति, यस्यकलनमपि कुशलता
तिशयं सन्तनोति किमुत तत्समाकलन मित्यर्थस्य प्रतीयमानतया दण्डा
पुपिकयाऽर्थान्तरापतनात्मिकायाअर्थापत्त्यलङ्कृतेर्ध्वनिः । सुबन्धुः शोभनो
ऽशयेनवा बन्धुस्तत्कृत्यकरणात्कवीनां श्रवणादिनानन्दनत्वेन परेषामर्पा
सुबन्धुनामिन् योगरूढत्वं व्यङ्ग्य मभिधयेवावयववृत्त्यापि तत्कविप्रत्या
कत्वात् । ‘शक्त्या, “नरत्वं दुर्लभंलोके विद्या तत्र सुदुर्लभा, कवित
दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभा,, इत्याग्नेयाभिनन्दितेनानुपहसनीयकाव्य
कारणतावच्छेदकतयाऽनुमितेन जातिविशेषेणाखण्डोपाधिनावा प्रतिभात
नावच्छिन्नाया इशब्दार्थयुगलोपस्थिते स्साधनत्वेन शक्नोत्यनया काव्यं क
मिति व्युत्पत्तिवल्लभ्येनादृष्टा परपर्यायेण संस्कारेण, ‘स्फुरतां, प्रतिभाशा

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (२१)

लिना, कवीनां नमनान्येव मधुलिङ्गं स्तैः शोभनं चरणपङ्कजं यस्थ
तादृशः । समस्तवस्तु विषयं साङ्गैरूपकमलङ्कारः । “समस्तवस्तुविषयं
श्रौताआरोपितायदा,, इति काव्यप्रकाशश्लक्षणात् । नतुपरम्परितं,
नतावलित्वारोपमन्तरेणापि चरणे पङ्कजस्यारोपयितुं शक्यत्वात् ।
‘अयं, सः, नतु यच्छब्दस्य पृथार्थगतत्वेनोत्तरार्थे तदोऽभावेनानुपपत्ति
रितिचेत्, न, “योऽविकल्पमिदमर्थमण्डलं पश्यतीश निखिलं भवद्गुणः ।
आत्मपक्षपरिपूरितेजगत्यस्य नित्यसुखिनः कुतोभयम्,, इत्यादाविदमोऽपि
तच्छब्द समानार्थकतायाः प्रदीपादौ व्यवस्थापितत्वात् । सुबन्धु रेत-
न्नामधेयः । अजयदित्यत्रार्तोतकाळिकोत्कर्षस्य पूर्वोक्त विशेषणानुगुणक-
तया मालारूपं काव्यलिङ्गम् । इहापि न समाप्त पुनरात्तता, विशेष्य
वाचक पदस्यपश्चादभिधानात् । सत्कविश्रिताभिर्नमनानुभावेन व्यज्यमा-
नाभीगतिभिः परिपोषितायाः प्रकृतकविनिष्ठायाः सुबन्धुविषयिण्यारते
विच्छित्तिविशेषाधायकत्वेनध्वनिः तथा च प्रेयोऽलङ्कारोऽपि । वसन्तति
लकावृत्तम् “ज्ञेयंवसन्ततिलकं तरसाजगौग,, इतिहि तल्लक्षणम् ॥ ५ ॥

सकलं प्रसादयन्ती विमलतमा धूतविधुमाना ।

नवकामिनीव कविजनशरणा सावाणभारती भाति ॥६॥

सुबन्धुकवेः परस्तादौचित्येन महाकविं वाणं वर्णयति ‘सकलमिति नव
कामिनीव’ ‘नतु कामिनीव नवा नवयोपिदिव, ‘सकलम्, अशेषं कञ्चोपेतं
वाजनं ‘प्रसादयन्ती, प्रसन्नतां नयन्ती नतु प्रसादितवती प्रसादयिष्यन्ती
वा, अभिहितं हि दृष्टान्तालङ्कारे दर्पणकृता “अविदितगुणाऽपि सत्कवि
भणितिः कर्णेषु वमति मधुधाराम् । अनधिगतपरिमलापि हि हरतिदृशं
मालतीमाला, इति । अन्यत्र ‘सकलं, निखिलं युवानं वा । ‘सकलं, स

‘मधुरध्वनि । भूगणानामित्यर्थात्, एतच्च प्रसन्ननामयोजके निजर्णं .
 तादात्म्येनान्वेति, अतएवमन्दंगच्छतीतिशब्द्वितीया, भूगणप्रणकारेणास्म
 यन्तीतियाव दिति वा । यद्वा ‘मकलं, मानलोकनं पुरेवैतदपि निजर्णम्
 पारविशेषणम् अवलोकनेन प्रसादयन्तीत्यर्थः । छावण्यातिशयो व्यञ्जने
 “कळास्यान्मूलविवृद्धौ शिल्पादावंशमात्रके । पोडशांशेच चन्द्रस्य कला
 कालयोः कळा । कलं शुके कलोजीर्णेप्यव्यक्त मधुरध्वनौ,, इति विप्र-
 प्रकाशः । विमलतमादुश्रवत्वादिना शब्दगतेन, अपुष्टार्थत्वादिनाऽर्थगते-
 न, स्वशब्दाभिधेयत्वादिना रमगतेन, उद्देयप्रतीतिविघातप्रयोजकत्वव्यञ्ज-
 णेन दोषेणरहिता, परत्रनानाविधै र्यक्षकर्म प्रभृतिभि रङ्गरागै रति
 निर्मला । अतएव ‘भूतः, तिरस्कृतः । विधोश्चन्द्रमसो, ‘मानः, उज्ज्वल
 ताभिमानोयया, चन्द्राधिकसमुज्ज्वलेनित्यावत् । इतरत्र ‘मानस्सौन्द-
 र्याभिमानः’ वियोगिकलेशावहत्वेन सकलप्रसादकत्वस्य कलङ्कितया विमल-
 तमत्वस्य विधौविरहात् कविजनशरणत्व साधारणधर्मसद्भावाद्गम्यसादृश्यो
 निरुक्तनिमित्तको व्यतिरेकालङ्कारः श्लेषसंकीर्ण इत्यनयोस्तद्धरः । व्युत्पत्ति
 वैशद्योपयोगि भूयोवलोकनविषयतया परत्रवर्णनीयतया कविजनस्यशरण
 भूता । यद्वा कविजनएवशरणं यस्या इत्यर्थः, प्रभवन्ति च विलोकितवा-
 त्सयायनीयाः कवयएव नवकामिनीं रक्षितु मित्याशयः । ‘सा वाणभारती,
 प्रसिद्धा हर्षचरितकादम्बिनीरूपा वाणस्य सरस्वती । अत्र च तच्छब्दस्य
 प्रसिद्धार्थकत्वेन “कळा च साकान्तिमतीकळावतः,, इत्येवमन्यच्छब्दा-
 पेक्षा, प्रक्रान्त प्रसिद्धानुभूतव्यतिरिक्तार्थकस्यैवतदस्तदपेक्षणात् । इह
 पूर्वार्धस्थितयोर्विशेषणयोर्व्यतिरेकपोषकत्वेन तदन्तिके कविजनशरणे
 लुपादानं व्यतिरेकाङ्गत्वविभ्रमावहतया नोचित मिति विधुकामिनी भार-
 तीनां साधारणधर्मता प्रतिपत्तये द्वितीयार्धे तदवस्थापनं तथेति नापदस्य

पदत्वदोष प्रसङ्गः । प्रथममियं कामिनी तत्रापि नवीना इतीदमीयो पम-
याऽति स्पृष्टणीयत्वं वाणभारत्यां व्यज्यते । भावध्वनिः । उद्गीतिकावृ-
त्तम् “आर्याशकलद्वितये विपरीते पुनरिहोद्गीतिः, इतितल्लक्षणम् । न
च तुरीयचरणे सप्तदर्शवसन्तिमात्रो इतिनोक्तलक्षणेन गत मितिशङ्क्यं,
पादान्तस्यलघोर्गुरुत्वस्य “गन्ते,, इति पिङ्गलसूत्रेण प्रतिपादनात्, अत
एव पारिजातदरपनाटक इन्द्रायकुपितस्य वैनतेयस्योक्तौ “सिन्दूरपूरकृत
गैरिकरागशोभे शश्वन्मदस्रवणनिर्झरवारिपुरे । सङ्ग्रामभूमिगतमत्तसुरभे-
कुम्भकूटे मदीयनखराशनयो विशन्तु,, इत्यत्रनवसन्ततिलकाढक्षण-
क्षतिः, इति ॥ ६ ॥

शुद्ध मतिभेद ममृतप्रकृति श्रेयोमनीष मतिहृद्यम् ।

परमार्थसत्प्रवृत्ति ब्रह्मात्मो वस्तु सज्जनो जयति ॥७॥

ब्रह्मामाधारणधर्मप्रदर्शनेन तदात्मतया सज्जन माख्यायिकाङ्गतयावर्णयति
शुद्धमिति । निर्मलमानसं, परत्र मत्त्वादि गुणत्रयोपेतया विचित्रानेकश-
क्तिशालिन्या ऽघटितघटनापटीयस्या सदस्रज्या मनिर्वचनीयया ऽनादिभाव
रूपत्वेसनिहाननिवर्त्यया भ्रमोपादानभूतया ऽहमज्ञोनजानामीति प्रतीति
साक्षिण्या “विवादपदं प्रमाणज्ञानं स्वप्रागभावातिरिक्त स्वविषयावरण स्व
निवर्त्य स्वदेशगतवस्त्वन्तर पूर्वकम्, अप्रकाशितार्थप्रकाशत्वा दन्धकारे मय-
मोत्पन्न प्रदीपमभावत्,, इत्यनुमानेन “सर्वाः प्रजा अहरहर्गच्छन्त्य एतं
ब्रह्मलोकं नविदन्त्वनृतेन प्रत्यूढा,, (वृ) इति श्रुत्याच ‘सिद्धया ऽभाव
ज्ञानस्वप्रति योगितावच्छेदकरूपेण प्रतियोगिज्ञानपूर्वकतया ब्रह्माहंनजाना-
मीत्यादि प्रतीतेरन्यथोपपादनस्याशक्यत्वेनावश्यंकल्पनीयाया विषयताया-
निरूपिकया “एवमेवैषामाया स्वाव्यतिरिक्तानि परिपूर्णानिभेदाणि दर्श-

(२४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

यित्वा जीवेशावाभासेनकरोति मायाचाविद्याचस्वयमेवभवति,, इति श्रुत्वा
सिद्ध मायैक्यया शुद्धमलिनसत्त्वाभ्यां विक्षेपावरणशक्तिभ्यां वा प्रधानाभ्यां
मुपाधिभ्यांकल्पिततद्भेदया ऽविद्याऽनवच्छिन्नम् । “ निष्कलं निष्किं
ज्ञान्तं निरवद्यं निरञ्जनम्,, इति (श्वे. ६ अ.) श्रुते रञ्जनपदस्योक्त-
र्थकत्वात् । “ आश्रयत्वविषयत्वभागिनी निर्विभागचित्तिरेवकेवळा, इति
संक्षेपशारीरकानुसाराच्छुद्धब्रह्मणो वाचस्पतिमिश्रोक्तयुक्तेर्जीवस्यवाऽवि-
द्याश्रयत्वमित्यन्यदेतत् । अविद्यायां चित्प्रतिबिम्बो बिम्बत्वाक्रान्त चैतन्यं
वैश्वरः अन्तर्करणे चित्प्रतिबिम्बोजीवः शुद्धचैतन्यं ब्रह्मेति पृथग्विधानि
मतानि प्रत्यपादिपत सिद्धान्तलेशे ॥ ‘भेदं, विग्रह मतिक्रान्तं विग्रहरहित
मितियावत् । परत्र सजातीयेन विजातीयेनवा यद्वैतं तदतिक्रान्त मद्वितीय
मित्यर्थः “एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म,,इति(छा.वृ.) श्रुतेः । न च द्वितीयस्यसत्त्वे
ऽसत्त्वेवोभययाप्यद्वैतंव्याहन्येतेतिशङ्कितुं शक्यं, नहिवयं व्यावहारिकीमपि
प्रतिषेधामो द्वितीयेसत्तां किन्तु पारमार्थिकीम्(?) । अन्योन्याभाव पृथ-
क्त्ववैधर्म्य भिन्नलक्षणयोगित्वलक्षणस्यचतुर्विधस्यापि भेदस्य “प्राग्लोपा
विनिगम्यत्व प्रमाणापगमर्भवेत् । अनवस्थितिमास्थातुरचिकित्सात्रिदोष-
ता,, इत्यादिभिः खण्डनखाद्ये, प्रत्यक्तत्त्वप्रदीपिकाया(२)द्वितीयपरिच्छेदे
विस्तरेण प्रत्याख्यातत्वात् । नचैवं द्वैतप्रपञ्चस्य मृपात्वेकधङ्कारमम-
ताश्रुत्यादिप्रमाणेनाद्वैतं ब्रह्मसिद्धयेदितिवाच्य मादर्शस्थबदनदृष्टान्तेनाह-
तोऽपि मन्माधकन्वस्याद्वैतसिद्धयादौ व्यवस्थापनात् । नच प्रत्यक्षादि
प्रमाणानामत्रविरोधः शब्द प्रमाणानां तदपेक्षयावर्त्तीयत्वात् । युक्त्या
दयश्चतन्मदकारिभूता इति ॥ यद्वा ‘शुद्धः, कल्मषामयोजको, ‘मि

(१) वाचस्पतिमिश्रोक्तयुक्तमिति शङ्कतेऽत्र भेदमिति न सिद्धमिति । “मायया
शब्दः । (२) विष्णुः ।

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (२५)

भेदो, ज्ञानविशेषो, यस्य, अन्यत्र 'शुद्ध्या'ऽनवच्छिन्नया 'मत्प्रा', चैतन्येन
भेद इतरेभ्यो व्यावहारिकोपस्येत्यर्थः । अन्तःकरण तद्वृत्त्याद्यनवच्छि-
न्नस्यैवहि चैतन्यस्य ब्रह्मात्मता "नित्यं विज्ञान मानन्दं ब्रह्म,, इति (तै-
भृ-व-) श्रुतेः विज्ञानपदेनहि निरुक्तमेवाभिधीयते चैतन्यम् अन्तःकर-
णावच्छिन्नस्यचतस्य प्रमातृचैतन्यत्वं, तद्वृत्त्यवच्छिन्नस्यच प्रमाणचैत-
न्यत्वं, विषयावच्छिन्नस्य च प्रमेयचैतन्यत्वं मायावच्छिन्नस्यचेश्वरत्व
मित्येभ्यो भेदस्तस्यशुद्धतयेतितात्पर्यम् तदुक्तं "मोहातीतोविशुद्धोमुनिभि-
रभिहितो मोहसङ्क्रान्तमूर्तिः । साक्षीस्वान्तेतदुत्थेपतिफलितवपुर्गीयतेऽसौ
प्रमाता, वृत्त्यारुढः प्रमाणंफलमपिधिपणावृत्तिसंव्याप्तचैत्यो पाधिर्मोहोत्प-
शब्दप्रमुखविषयगःस्यात्प्रमेयः परात्मा इति,, स्फुटमेतद्वेदान्तपरिभाषाया-
मपि । "भेदो द्वैधेविशेषेस्या दुपजापे विदारणे,, इति मेदिनी विश्वप्रकाशौ ॥
'अमृतस्येव, सुधायाइवानन्दना प्रकृतिः शीलंयस्य, अन्यत्र अमृतं मोक्षः
निरतिशयसुख मितियावत् तदेव प्रकृतिस्स्वरूपं यस्य "तं विद्याच्छुक्र
ममृतम्,, इति (क०२अ-) "योवैभूमातदमृतम् इति (छा-७-प्र-) श्रुति
भ्याम् । नचैवं मोक्षस्य साध्यत्वाभावेन तमुद्दिश्य श्रवणादौ प्रवृत्तिर्नजा-
येतेतिवाच्यं, सिद्धत्वेपितस्यासिद्धत्वभ्रमेण तदुपपत्तेः । दृष्टश्रवणोकेऽपि
विस्मृतस्वकण्ठगतसौवर्णभूषण स्तदवाप्तयेप्रवर्तमानः । ननूक्तसुखस्य मो-
क्षत्वे प्रमाणाभाव इतिचेन्न, "ब्रह्मविद्ब्रह्मैवभवति,, इति (तै-)श्रुतेः । यत्तु
वैषयिकानन्दस्य मुक्तित्वमुक्तं, तत्र मुक्तिदशायां भेदापत्तौ "यत्रत्वस्य-
सर्वमात्मैवाभूत्,, इति (वृ.) श्रुति विरोधो दुष्परिहरणवस्यात् । किञ्च-
तत्राभावेनशरीरस्यतज्जन्यमात्रमुदितानन्दो नोत्पत्तुमीष्टे, नचतत्रशरीर-
मपि कल्पयितुंशक्यम्, "अशरीरंवावसन्तं प्रियाप्रियेनस्पृशतः,, इति (छा.)
श्रुतिर्हिर्व्याकुप्येत । नवाळोकान्तरगमनमपि सम्भवतिब्रह्मविदां, "न-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (२७)

तर्कव्यश्च,, इति (वृ०) “तमेवविदित्वाऽतिमृत्युमेति,, इति [पु० सू०]
 “ब्रह्मविदामोतिपरम्,, इति (तै० ब्र० व० २) श्रुतिभ्यः । तत्र चतुर्णां
 श्रवणादीनां प्राधान्यं पूर्वपूर्वापेक्षयोत्तरोत्तरस्य विज्ञेयम् । श्रवणमनननि-
 दिध्यासनेषु प्रथमं प्रधान मितरयोस्त्वारादुपकारक तयाङ्गत्व मितिकेचित् ।
 मोक्षहेतुत्वञ्चतस्याविद्यादिसकलदृश्य निवृत्तिद्वाराऽवसेयं, नचजन्यत्वेन
 ब्रह्मरूपतामवाप्नु मशक्नुवत्या स्तस्याअविनाशेऽद्वैतभङ्गः, विनाशेचानव-
 स्थाप्रसङ्ग इतिवाच्यं, तत्त्वज्ञानस्या विद्यादिसकलदृश्याश्रय कालपूर्वत्वा
 भाव नियमादिति ॥ “पुण्यश्रेयसी मुकृतं,, “श्रेयोनिःश्रेयसामृतं,, श्रेयान्
 श्रेष्ठः पुष्कलस्यात्, इत्यमरः ॥ ० ॥ अतिहृद्य मुपकारकत्वा त्परमाभीष्टं
 जनानां, परत्रापि आनन्दात्मकत्वेन, “विज्ञानमानन्दं ब्रह्म,, इति [तै.आ.]
 “आनन्दोब्रह्मेतिव्यजानात्,, इति [तै.आ.] “एतस्यैवानन्दस्यान्यानि
 भूतानिमात्रा मुपजीवन्ति इति (तै.) श्रुतिभ्यः । नचैवम् “आनन्दो
 ब्रह्मणोरूपंतच्चमोक्षमतिष्ठितम्,, इतिस्मृतिविरोधः ! तस्याश्श्रुत्यपेक्षयादु-
 र्वलत्वात् “औदुम्बरीं स्पृष्टोद्गायेत्,, इति श्रुते “स्सासर्वा वेष्टयितव्या,,
 इति स्मृत्या विरोधे प्राप्ते श्रुतेः प्रावर्त्यं स्मृति विरोधाधिकरणे “विरो-
 धेत्वनपेक्षंस्या दसतिष्ठानुमानम्, इत्यनेन (न्याय० १अ.) भगवता
 जैमिनिना सिद्धान्तितम् । नचतथापि “आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्,, इति
 (क०) श्रुतिविरोधः, गुणगुणिभावसम्पादकस्य समवायस्य “समवा-
 याभ्युपगमाच्च साम्पादनवस्थितेः,, इति (ब्र० अ० पा०) सूत्रभाष्यभामत्यां
 विस्तरेण प्रत्याख्याततयोक्तश्रुते रारोपितभेद विषयकत्वात् । मकृतमनुस-
 रामः अन्तःकरणपरिणामात्मकस्य सुखस्य क्षयित्वेन दुःखसम्भिन्नत्वेनच
 हेयत्वमेव, ब्रह्मणश्च केवलनित्य निरतिशयसुखात्मतया युक्तमेवाति प्रिय-
 त्वम् “सोऽन्वेष्टव्यः सोऽभिज्ञासितव्यः,, इति (छा०) श्रुतेः । यद्वा

(२८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्रस्तुते हृदि मनसिभवं हृद्यमिति व्युत्पत्त्या हृद्यं मनोज, मतिक्रान्तं कामं जितेन्द्रिय मितियावत् । इतरत्र हृद्यं ज्ञानादि मनोधर्म भूतं परिणामात्मकम् “काम ससङ्कल्पो विचिकित्साश्रद्धाऽश्रद्धा धृति र्हीर्धीर्भी रित्येतत्सर्वं मनएव,, इति “विज्ञानं यज्ञं तनुते, इति, (तै०) श्रुतिभ्यां मनसएव सुखदुःखाद्यखिद्यानर्थाश्रयत्वमिति पादनात् । यद्यपि तत्क्षेत्रज्ञसाधारणत्वादव्याख्येयं, तथापि ज्ञानसुख दुःखेच्छाकर्तृत्ववन्थाश्रयाहङ्कारतादात्म्याध्यासानधिष्ठानत्वरूपस्यातिक्रान्तपदार्थस्य विवक्षितत्वेन नोक्तापत्तिः, भवतिहि अहंजानामि सुखी दुःखीच्छामि करोमीति व्यवहारः । “स्वान्तं हन्मानसं मनः,, “अभीष्टं दयितं हृद्यम्,, इति हृद्यं धवलजीरेच हृत्प्रिये हृद्भवेऽपिच,, इत्यमर विश्व प्रकाशौ ॥ अथवा “अति हृद्यं,, प्रशस्तहृद्यम्, एतदेकविधमेव पक्षद्वितयसाधारणम्, इतरेष्वपि यद्यपिहृद्य—त्वमात्रमस्ति, परञ्च प्राशस्त्य मस्मिन्नेवेत्याशयः ॥ यद्वा ‘हृद्यं, हृदिष्ट कारकम् “हृद्यं जवनेऽथत्रिषु हृज्ज हृद्धित हृत्प्रिये,, अतिशब्दः प्रशंसायां प्रकर्षे लङ्घनेऽपिच,, इति मेदिनी ॥ यद्वा अतिहृत् मनोऽतिक्रान्तं, मनोऽगोचर इतियावत् यं ज्ञानात्मकम् “यन्मनसा नमनुत,, इति श्रुतेः, “अवाङ्मनसगोचरम्,, इति स्मृतेः, “यतोवाचो निवर्तन्ते अप्राप्यमनसा सह,, इति गीतानिरुक्तेष्व । साधुपक्षेऽतिहृत् यो यशोयस्येत्यर्थः मनसाप्यालोचनानर्हं यशस्क इति विवरणम् “यशोयः कथितः प्राज्ञयो वायुरिति शब्दितः । याने यातरि यस्त्यागे कथित इशब्दवेदिभि रित्येकाक्षर कोशाभिधानात्, नचैतस्य ज्ञानार्थकत्वं नायात मितिदेश्यं, “येगत्यर्था स्तेज्ञानार्था,, इति वचनेन यानशब्दस्य ज्ञानार्थकत्वस्यानपायात्, अतएवानते स्सार्वकालिकगमनाभिधायकत्वेऽपि अततीत्यात्मेति तेन पदस्य ज्ञानाश्रयवाचकत्वं मनेकत्रोपपादितं साधुसङ्गच्छते ॥०॥

परमार्थसत्प्रवृत्तीति, परमोऽर्थोयस्मात् यस्येतिवा, आद्येऽर्थपदं प्रयोजन-
परं प्रकृष्टप्रयोजनसम्पादक मिति यावत्, द्वितीये निवृत्तिपरं, साच वाच्य-
विषयात् । सन्, साधुः, नचानन्वयप्रसङ्गः उद्देश्यताया विधेयतावच्छेद-
केनावलीढत्वा दितिदेश्यं पक्तापचतीत्यादि वाक्य प्रामाण्यानुरोधेन
किञ्चिद्भागस्याप्यपूर्वत्वे विशिष्टस्य विधेयत्वसम्भवेन विधेयांशेऽधिकाव-
गाहिन इशाब्दबोधस्याभ्युपगन्तु मुचितत्वात् । ‘सन्, प्रशस्त इतिवा
वेद्यमान इतिवा, सुधीरितिवा, । एतेनै कत्रार्थे सत्पदस्य द्विधोपादाने,
‘रतलीलाश्रमं भिन्ते सलीलमनिलोवहन,, इत्यादाविव कवे निर्माण सा-
क्षामग्री दारिद्र्यस्योन्नयनेन धोतुर्विमुखतापादनेनच कथितपदत्वस्य दो-
षताप्रसक्ति रिति निरस्तम् । एतस्यच समासेऽपि सम्भवेन पददोषतायाः
प्रसङ्गे वाक्यदोषतैव कथमाळङ्कारिकैरभिहितेत्यन्या विचारणेत्युपरम्पते ॥
प्रकृष्टावृत्तिः प्रवृत्तिराचरणं यस्य, नहि साधवो निषिद्धमाचरन्ति ।
सती प्रवृत्तिर्यस्येतिवा । ‘परमार्थेसती, परमार्थानुकूला प्रवृत्तिर्यस्येतिवा ।
परस्य मार्थे सम्पत्तये सत्प्रवृत्तिर्यस्येतिवा । प्रकृष्टाभिधेये ‘सति, ब्रह्मणि
प्रवृत्तिर्यस्येतिवाऽर्थः । अन्त्ये साक्षात्कारानुकूलत्वं सप्तम्या बोध्यते ।
“ अर्थः प्रकारे विषये वित्तकारणवस्तुषु, अभिधेयेऽपिशब्दानां निवृत्तौच
प्रयोजने,, इति विश्वप्रकाशः । “सन् साधौ धीर शस्तयोः । मान्ये
सत्ये विद्यमाने त्रिषु साध्व्युपयोः स्त्रियामिति मेदिनी । “ ॐ तत्स-
दितिनिर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः, इति भ० गीता । परत्र ‘परमार्थसत्,
कालत्रयावार्ध्य, “तस्यहवा एतस्य ब्रह्मणोनामसत्यम्,, इति (छा०) श्रुतेः
“सत्यंज्ञान मनन्तं ब्रह्म,, इति [तै०] श्रुतेः, “ सच्चिदानन्दविग्रहम्,,
इतिस्मृतेश्च सत्यत्वस्य मिथ्यात्वाभावतया तस्यच बाधितत्वात्मत्वेन
निरुक्त रूपत्वात्, धर्तृत्वैव पारमार्थिक व्यावहारिक प्रातीतिकसत्ता भेदेन

प्रस्तुते हृदि मनसिभवं हृद्यमिति व्युत्पत्त्या हृद्यं मनोज, मतिक्रान्तं
 कामं जितेन्द्रिय मितियावत् । इतरत्र हृद्यं ज्ञानादि मनोधर्म भूतं
 परिणामात्मकम् “काम स्मङ्गलो विचिकित्साश्रद्धाऽश्रद्धा धृति
 र्हीर्धीर्भी रित्येतत्सर्वं मनएव,, इति “विज्ञानं यज्ञं तनुते, इति, (तै०)
 श्रुतिभ्यां मनसएव सुखदुःखाद्यखिलानर्थाश्रयत्वमिति पादनात् । यद्यपि
 तत्क्षेत्रज्ञसाधारणत्वादव्याख्येयं, तथापि ज्ञानसुख दुःखेच्छाकर्तृत्ववन्ना-
 श्रयाहङ्कारतादात्म्याध्यासानधिष्ठानत्वरूपस्यातिक्रान्तपदार्थस्य विवक्षित-
 त्वेन नोक्तापत्तिः, भवतिहि अहंजानामि सुखी दुःखीच्छामि करोमीति
 व्यवहारः । “स्वान्तं हन्मानसंमनः,, “अभीष्टं दयितं हृद्यम्,, इति
 हृद्यं धवलजीरेच हृत्प्रिये हृद्भवेऽपिच,, इत्यमर विश्व प्रकाशौ ॥ अथवा
 “अति हृद्यं,, प्रशस्तहृद्यम्, एतदेकविधमेव पक्षद्वितयसाधारणम्, इतरे-
 ष्वपि यद्यपिहृद्य—त्वमात्रमस्ति, परञ्च प्राशस्त्य मस्मिन्नेवेत्याशयः ॥
 यद्वा ‘हृद्यं, हृदिष्ट कारकम् “हृद्यं जवनेऽथत्रिषु हृज्ज हृदित ह-
 त्प्रिये,, अतिशब्दः प्रशंसायां प्रकर्षे लङ्घनेऽपिच,, इति मेदिनी ॥ यद्वा
 अतिहृत् मनोऽतिक्रान्तं, मनोऽगोचर इतियावत् यंज्ञानात्मकम् “यन्मनसा
 नमनुत,, इति श्रुतेः, “अवाङ्मनसगोचरम्,, इति स्मृतेः, “यतोवाचो निव-
 र्त्तन्ते अप्राप्यमनसासह,, इति गीतानिरुक्तेश्च । साधुपक्षेऽतिहृत् यो यशोयस्ये
 त्यर्थः मनसाप्यालोचनानर्हं यशस्क इति विवरणम् “यशोयः कथितः
 प्राज्ञर्यो वायुरिति शब्दितः । याने यातरि यस्त्यागे कथित इशब्दवेदिभि
 रित्येकाक्षर कोशाभिधानात्, नचैतस्य ज्ञानार्थकत्वं नायात मितिदेश्यं,
 “येगत्यर्था स्तेज्ञानार्था,, इति वचनेन यानशब्दस्य ज्ञानार्थकत्वस्यान-
 पायात्, अतएवातते स्सार्वकालिकगमनाभिधायकत्वेऽपि अततीत्यात्मेति
 योगेनात्मपदस्य ज्ञानाश्रयमाचकत्वं मनेकत्रोपपादितं साधुसङ्गच्छते ॥०॥

परमार्थसत्प्रवृत्तीति, परमोऽर्थोऽयस्मात् यस्येतिवा, आद्येऽर्थपदं प्रयोजन-
 मं प्रकृष्टप्रयोजनसम्पादक मिति यावत्, द्वितीये निवृत्तिपरं, साच वाच्य
 विषयात् । सन्, साधुः, नचानन्वयमसङ्गः उद्देश्यताया विधेयतावच्छेद-
 केनावलीढत्वा दितिदेश्यं पक्तापचतीत्यादि वाक्य प्रामाण्यानुरोधेन
 किञ्चिद्भागस्याप्यपूर्वत्वे विशिष्टस्य विधेयत्वसम्भवेन विधेयांशेऽधिकाव-
 गादिन शशाब्दबोधस्या श्रुपगन्तु मुचितत्वात् । ‘सन्, प्रशस्त इतिवा
 वेद्यमान इतिवा, सुधीरितिवा, । एतेनै कत्रार्थे सत्पदस्य द्विधोपादाने,
 ‘रतलीलाश्रमं भिन्ते सलीलमनिलोचहन,, इत्यादाविव कवे निर्माण सा-
 णमग्री दारिद्र्यस्योन्नपनेन धोतुर्विमुखतापादनेनच कथितपदत्वस्य दो-
 तापसक्ति रिति निरस्तम् । एतस्यच समासेऽपि सम्भवेन पददोषतायाः
 असङ्गे वाक्यदोषतैव कथमाळङ्कारिकैरभिहितेत्यन्या विचारणेत्युपरम्यते ॥
 प्रकृष्टावृत्तिः प्रवृत्ति राचरणं यस्य, नहि साधवो निषिद्धमाचरन्ति ।
 सती प्रवृत्तिर्यस्येतिवा । ‘परमार्थेसती, परमार्थानुकूला प्रवृत्तिर्यस्येतिवा ।
 परस्य मार्थे सम्पत्तये सत्प्रवृत्ति र्यस्येतिवा । प्रकृष्टाभिधेये ‘सति, ब्रह्मणि
 प्रवृत्तिर्यस्येतिवाऽर्थः । अन्त्ये साक्षात्कारानुकूलत्वं सप्तम्या बोध्यते ।
 “ अर्थः प्रकारे विषये वित्तकारणवस्तुषु, अभिधेयेऽपिशब्दानां निवृत्तौच
 प्रयोजने,, इति विश्वमकाशः । “सन् साधौ धीर शस्तयोः । मान्ये
 सत्ये विद्यमाने विष्टु साध्युमयोः स्त्रियामिति मेदिनी । “ ॐ तत्स-
 दितिनिर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः, इति भ० गीता । परस्य ‘परमार्थसत्,
 कालत्रयावाध्यं, “तस्यदवा एतस्य ब्रह्मणोनामसत्यम्,, इति (छा०) श्रुतेः
 “सत्यंज्ञान मनन्तं ब्रह्म,, इति [तै०] श्रुतेः, “ सच्चिदानन्दविग्रहम्,,
 त्रैतिस्मृतेश्च सत्पत्वस्य मिथ्यात्वाभावतया तस्यच बाधितत्वात्मत्वेन
 निरुक्त रूपत्वात्, घर्ततेच पारमार्थिक व्यावहारिक प्रातीतिकसत्ता भेदेन

(३०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

त्रिविधासत्तौपनिषदां, तासु प्रथमा ब्रह्मणः, द्वितीया घटादीनां, तृतीया
शुक्तिरूप्यादीनाम्, घटः सन्नित्यादि प्रतीतिस्तु व्यावहारिकी मेव सत्ता
गोचरयति । नचाकाशादीनान्यायनयइवे हाऽपि कालत्रितयावाध्यतं,
“तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सत्प्रभूतः, इति [तै०] श्रुतेः “एत-
स्माज्जायते प्राणो मनस्तर्वेन्द्रियाणि च खं वायुर्ज्योति रापश्च पृथिवी
विश्वस्य धारिणी,, इति [ई०] श्रुतेः तदित्थमेतेषां संक्षेपतस्मृष्टिप्रक्रिया,
यथोक्तस्वरूपाया मायायाः परमेश्वरीयेक्षण सङ्कल्पमयत्नात्मिकाभिः कृ-
तिभि रपञ्चीकृतानि तन्मात्र पदप्रतिपाद्यानि त्रिगुणान्याकाशादीनि
पञ्चभूतानि, तेषु सत्त्वगुणोपेतै नैकैकेन यथाक्रमं पञ्चज्ञानेन्द्रियाणि
मिलितैश्चतैरुक्तगुणवद्भि र्मनोबुद्धय हङ्कारचित्तानि, रजोगुणोपेतै नैकैके-
यथाक्रमं वागादीनि पञ्चकर्मेन्द्रियाणि, मिलितैश्चतै रुदितगुणाश्रयैः प्राण-
दयः पञ्चवायवः, तमोगुणोपेतैश्चतैः [१] पञ्चीकृतानि भूतानि, तैरे-
वापञ्चीकृतभूतैः महत्तत्त्वाख्यातं हिरण्यग(२)र्भशरीरंपर महङ्कारख्यातं
मस्मदादि शरीरमपगमिति द्विविधं परलोक प्रयाण निर्वाहकं मोक्षपर्यन्त
स्थायि मनोबुद्धि द्विविधेन्द्रिय प्राणादिपञ्चकसंयुक्तं लिङ्गशरीरं, तमोगुणो-
पेतैः पञ्चीकृतभूतै श्वरुर्दशभुवनात्मकं ब्रह्माण्डं चतुर्विधं स्थूलशरीरंचजा-
यन्ते ॥ नवा परमाणोरपि पुरोदितावाध्यत्व मनश्च्युपगमात् तत्रहिक्रिया-
यासंयोगस्य चोपपादन मशक्यमेव, किञ्चावयवावयविभावोऽपि दुरुप-
गमः समवायानद्गीकारात् अवयवापेक्षयाऽवयविनि गुरुत्वस्याधिकस्य प्रस-
ङ्गाच्च तदेतत्प्रत्ययादि तर्कपाद भामत्याम् “उभयथापिनकर्मास्तदभावः,,

(१) अक्षौक्येण प्रस्ताव्य पञ्चदश्यां “द्विधाविभाव चैकैक्यबुधाव्यमजगुनः । एतस्येतर द्वितीयाद्ये

येऽनन्त्यञ्च पञ्चवे , इति ।

(२) हिरण्यगर्भस्य सृष्टिप्रत्ययः प्रथमो जीवः ।

“समवायाभ्युपगमाच्चसामान्यादनवस्थितेः,, इत्यादि बैयासिकसूत्र भाष्य व्याख्यानावसरे विस्तरेण भाचस्पतिमिश्रैः । अथवा 'परमो, नित्यः अर्थः पुरुषार्थो यस्मात् मोक्षजनकज्ञानविषय इत्यर्थः, अर्थादिषु चतुर्विधेषु पुरुषार्थेषु त्रयाणां प्रत्यक्षेण श्रुत्याचानित्यत्वस्याधिगतेः साच “तद्यथेह कर्म चेतोलोकः क्षीयते एवमेवामुत्र पुण्यचित्तोलोकः क्षीयते,, इति (मु०) मोक्षस्यच नित्यनिरतिशय सुखात्मक ब्रह्मरूपतेति । 'सत्, यथोक्तस्वरूपं, ननुतार्किकाभ्युपगतेन सामान्येन कालोपाधिसम्बन्धित्वेनवा सत्त्वेनोपेतं, तयो स्सर्वत्र सत्तमदित्यनुगताकारकप्रतीते रूपपादकत्वा सम्भवेन सामान्यस्यच कार्य कारण भावस्थाति प्रसक्ततया ऽवच्छेदकत्वेन साधयितुमशक्यतयाच सत्त्वस्योक्त रूपत्वकल्पनाया अयोगात् मन्मतेत्व द्वितीय ब्रह्म तादात्म्याध्यासेनैव सर्वत्रोदितप्रतीते रूपपादनं सुकरमेवेति ॥ अत एव प्रकृष्टावृत्तिः स्थितिर्यस्यतत् इतरेषान्तु जडत्वेन वृत्तिव्याप्यत्वेनवा किञ्चित्कालावच्छिन्न चित्तादात्म्येनवा स्वातिरिक्त सम्बिदपेक्षाव्याप्य स्वव्यवहारकत्वेनच, स्थितौ प्रकर्ष विरहात् “सवाएष महानजआत्मा,,इति श्रुतेः ॥ एवंसति ब्रह्माभिन्नं सज्जनात्मकं वस्तु जयति । भावध्वनिः । तस्यच श्लेषभित्तिकेन रूपकेण व्यज्यमानाया उपमाळङ्कृते ब्रह्मविषयकरतेश्चाभिव्यक्ति रङ्गम् । एवञ्च प्रेयोळङ्कारोऽपि,, गीतिकावृत्तम् ॥ ७ ॥

काव्यकत्वञ्च वैगुण्य प्रतिपत्ति परायणः ।

न वारणीयः केनापि यातुधानाधिकः खलः ॥८॥

आख्यायिकाङ्गतया खलवृत्तं वर्णयति काव्येत्यादिना, दोषैर्विधुरं गुणा लङ्काराभ्यामन्वितं शब्दार्थोभयंकाव्यम्, ननु दूषितेऽपिकाव्यताया उपगतत्वे न, दुष्टंकाव्य मिति व्यवहारेण, नीरसेऽपि निरलङ्कारेपि बाळविद्वसिते का-

(३२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

व्यत्वस्य महाकवि सम्पदायसिद्धत्वेन नैतत्प्रकाशोक्तं लक्षणं सम्भवतीति-
चेत्, अत्राहु रुदयोतकाराः विकक्षणास्वादव्यञ्जकत्वस्यैव तत्त्व-
दकत्वाद् दूषितादौ तदभावेन नानुपपत्तिः, काव्यंश्रुतं का-
दिव्यवहारस्य शब्दार्थयुगले काव्यपदशक्ति ग्राहकस्य
कथं न काव्यम्, इतिव्यवहारस्य वदम ॥ ८ ॥
काव्यसामान्यलक्षणन्तु चमत्कारित्वेति सति
त्यादौ काव्यत्वप्रसक्तिः दुष्टादपि क ० । ८
व्याप्ति रिति विभावनीयमेतत् । तदेव च
त्वाच्चक्रतुः यागः अतादृशकाव्ये क्रतुत्व
तदङ्गानां दोषव्यतिरेक गुणालङ्काराणां
यणः व्यापारान्तरपरीहारेण तत्रैव
सम्पादनपरायणः परञ्चासौ
न केनापि जनेनोपायेन वा तथा अ-
जीवितेन व्यतिरेकालङ्कारेण स्वतः
व्यज्यते ॥ ८ ॥

(१) यत्तु रसवतो वाक्यस्यैव
प्रसक्त्यानादरणीयम् । १०५
१०५ ॥ १०५ ॥
दत्तादिकमिव शब्दमात्रसाधारण-
नतु “ अन्यस्यान्यार्थक ॥ १०५
॥ वैलक्षण्यं च जातिरक्षण्डो
॥ १०५ ॥
॥ १०५ ॥

भाति श्रौतविधानमेध्यवसुधोवैदेहदेशो बुधे
 र्यस्मिन् व्यासतनूद्बोप्यधिजगावध्यात्मविद्यां सुधीः ।
 तत्राति प्रथितोऽस्ति सोदरपुराभिख्याविभूषान्वयोऽ-
 मुण्याङ्गेर्जितदिग्वनेऽवनिस्तुरस्सर्वोऽनुर्वाञ्छति ॥ ९ ॥

आख्यायिकावयवतयाऽन्वयायादिकं स्वकीयं कीर्तयति, भातीत्या-
 दिना । 'श्रौतविधानैः, धृतिविहित क्रियानुष्ठानैः । 'मेध्या, पूता "पुतं
 रवित्रं मेध्यञ्च, इत्यमरः, वसुधा यत्र, सः । तेन प्रकाशनयोग्यत्वं तदा
 ध्यत्वात्मकवाच्यायोपपादकतया गुणीभूतं व्यज्यते । अतएव परिकरात्
 द्वारः । 'विदेह(१)स्य, सवीज(२)समाधे रसम्प्रज्ञात समाधिसाधनस्य
 तृती(३)यां विधां सानन्दाभिधानामासाद्याहन्तया तत्कार्यं भूतया मदीय-
 त्वविकक्षणया ममतया च विधुरीकृतस्य, जीवन्मु(४)क्तपदेनाभिधे यस्य
 वा, अयं वैदेहः " तस्येदम्,, इत्यनेनाण् प्रत्ययः । नतुयस्यकस्यचिन्नृ-
 पस्य । देशः, मिथिलाभिधानः । वैदेहपदेन पुरोदीरितमेव योग्यत्वं ग-
 म्यते । तथाच परिकराङ्कुरात्कारः, प्रकृतार्थोपपादकचमत्कारिव्यङ्ग्य
 क विशेष्यवाचक पदत्वलक्षणस्य सद्भावात् " साभिप्राये विशेष्येतु भवे-
 त्परिकराङ्कुरः । चतुर्णां पुरुषार्थानां दातादेवश्रतुर्भुजः,, इति दीक्षितोक्तेः ।

१ पिणत देह तदभिमानोपस्थेति योगार्थः ।

२ सम्प्रज्ञातामि यस्य, 'समाधेः, धिसमूहविशेषवृत्तिनिरोधस्य, " योगमित्तवृत्तिनिरोधः"
 इति पातञ्जलदर्शनसूत्रस्याभाष्ये " सर्वशब्दाभरणत्वं सम्प्रज्ञातोऽपि योग इत्याद्यामते " इति
 व्याख्यानात्, यत्किञ्चित्तत्त्ववृत्तिनिरोधस्याति प्रसङ्गकत्वात् ॥

३ तयारि सम्प्रज्ञातश्चतुर्विधः सवितर्कः सविचारः सानन्दः सास्मितश्चेति ॥

४ जीवन्मुक्तपदसाक्षात्कृतात्मतत्त्वः समासनमित्याहानोत्तरागमैर्विमुक्तः अदृष्टोत्पादरीहितः
 प्रारब्धकर्मोपशुञ्जानः विनष्ट समाधिप्रभावाद्युपपन्नोक्ष्यमाणं बाह्यादप्युद्देन तदितरत्वं
 कर्मसामान्यं यस्यतादृशः ॥

(३२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

व्यत्वस्य महाकवि सम्प्रदायसिद्धत्वेन नैतत्प्रकाशोक्तं लक्षणं सम्भवतीति-
चेत्, अत्राहु रुच्योतकाराः विरक्षणास्वादव्यञ्जकत्वस्यैव तल्लक्ष्यतावच्छे-
दकत्वाद् दूषितादौ तदभावेन नानुपपत्तिः, काव्यंश्रुतं काव्यमधिगत मित्या-
दिव्यवहारस्य शब्दार्थयुगले काव्यपदशक्ति ग्राहकस्य सद्भावेन “श्लोकवा-
क्यं न काव्यम्,, इतिव्यवहारस्य शब्दमात्रे लक्षणाश्रयणेनानापादनीयत्वात्,
काव्यसामान्यलक्षणन्तु चमत्कारित्वे सति शब्दार्थोभयत्वं तेन नगौरस्ती-
त्यादौ काव्यत्वप्रसक्तिः दुष्टादपि काव्यादपकृष्ट चमत्कारोजायतएवेतिना-
व्याप्ति रिति विभावनीयमेतत् । तदेव चतुर्वर्गप्रदत्वात् क्लेशातिशयसाध्य-
त्वान्नक्रतुः यागः अतादृशकाव्ये क्रतुत्वारापस्यायुक्तत्वात् । रूपकालङ्कारः ।
तदद्धानां दोषव्यतिरेक गुणालङ्काराणां वैगुण्यस्यासद्भावस्य प्रतिपत्तौ परा-
यणः व्यापारान्तरपरीहारेण तत्रैव प्रवृत्तः, राक्षसोऽपियागाङ्ग वैगुण्य
सम्पादनपरायणः परञ्चासौ मन्त्रादिनावलेनच शक्योवारयितुं, खलस्तु
न केनापिजनेनोपायेनवातथा अतएव ततोऽधिकः । अत्र रूपकश्लेषोप-
जीवितेन व्यतिरेकालङ्कारेण स्वतस्सिद्धेन खलविषयिणीनिन्दा वस्तुरूपा
व्यज्यते ॥ ८ ॥

(१) यत्तु रघुवतो वाक्यस्यैव काव्यनामुपपत्तिकेचित् तच्च बाळविलसितजलध्रमिषण्णादाव
प्रसक्त्यानादानीयम् । रघुगङ्गापरकृतम्तु यन्प्रतिपादितार्थं विषयकभावनाल्लक्ष्यव्याप्य
चमत्कारान्वाप्यपर्यायि (आत्यावृष्टिजनन्यतानिरूपितजनकतापञ्चेदक तत्त्वमेवकाव्यं तदे-
दन्नादिकृष्टिं शब्दमात्रमाधारणमितिप्राहु ॥ यत्कोणिप्रसक्तमेवतत् । साधविलसितगोफिः ।
न्तु “ लव्यस्य न्य र्थक वं इत्यमन्यथायोग्यमदि । केणेन वाकोनि साहित्यदर्पणोक्तलक्ष-
णं । ब्रह्मस्य न जातिमण्डोपाधिर्लोकोत्तरादूल्लङ्घनकज्ञानगोभारं वा । एतेन वाको
नेष्टुत्तरद्वारेण काव्यलक्षणं तेन विवक्षितं मत्तापयमन्त्रादिकदिति दर्शयतामा-
होतिरिक्तमन्त्रं वाकोन्मिह ॥

भाति श्रौतविधानमेध्यवसुधोवैदेहदेशो बुधै
र्यस्मिन् व्यासतनूद्भवोप्यधिजगावध्यात्मविद्यां सुधीः ।
तत्राति प्रथितोऽस्ति सोदरपुराभिख्याविभूषान्वयोऽ-
मुष्याङ्गेऽर्जितदिग्बनेऽवनिमुरस्सर्वोऽजनुर्वाञ्छति ॥ ९ ॥

आख्यायिकावयवतयाऽन्ववायादिकं स्वकीयं कीर्तयति, भातीत्या-
दिना । ‘श्रौतविधानैः, श्रुतिविहित क्रियानुष्ठानैः । ‘मेध्या, पूता “पुतं
पवित्रं मेध्यञ्च,, इत्यमरः, वसुधा यत्र, सः । तेन प्रकाशनयोग्यत्वं तदा
श्रयत्वात्मकवाच्यार्थोपपादकतया गुणीभूतं व्यज्यते । अतएव परिकराळ
ङ्कारः । ‘विदेह(१)स्य, सवीज(२)समाधे २सम्प्रज्ञात समाधिसाधनस्य
तृती(३)यां विद्यां सानन्दाभिधानामासाद्याहन्तया तत्कार्यं भूतया मदीय-
त्वविक्षणया ममतया च विधुरीकृतस्य, जीवन्मु(४)क्तपदेनाभिधे यस्य
वा, अयं वैदेहः “ तस्येदम् ,, इत्यनेनाण् प्रत्ययः । नतुयस्यकस्यचिन्नृ-
पस्य । देशः, मिथिलाभिधानः । वैदेहपदेन पुरोदीरितमेव योग्यत्वं ग-
म्यते । तथाच परिकराङ्कुराळङ्कारः, प्रकृतार्थोपपादकचमत्कारिष्यङ्ग्य
क विशेष्यवाचक पदत्वलक्षणस्य सद्भावात् “साभिपाये विशेष्येतु भवे-
त्परिकराङ्कुरः । चतुर्णां पुरुषार्थानां दातादेवश्चतुर्भुजः,, इति दीक्षितोक्तेः ।

१ विगत देह. तदभिमानोपस्येतियोगार्थः ।

२ सम्प्रज्ञाताभिधस्य, ‘समाधे, क्षिप्तमृदविक्षिप्तवृत्तिनिरोपस्य, “ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः”
इति पातञ्जलदर्शनसूत्रस्यभाष्ये “ सर्वशब्दामहणात् सम्प्रज्ञातोऽपियोग इत्याद्यायते ” इति
व्याख्यानात्, यत्किञ्चित्तवृत्तिनिरोधस्याति प्रसज्जकत्वात् ॥

३ तथाहि सम्प्रज्ञातस्युर्विध. सवितर्क. सविचार सानन्दः सास्मित्येति ॥

४ जीवन्मुक्तश्चसाक्षात्कृतात्मतत्त्वः सवासनमिथ्यादानोत्कटरागद्वेषैर्विमुक्तः अदृष्टोत्पादरहितः
प्रारब्धभूतमोषभुञ्जान विनष्ट समाधिप्रभावापुणपद्मोक्षमार्गं बाकायन्युदेन तदितरत्
कर्मसामान्य यस्यतादृशः ॥

(३४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

सत्येवं परिकर परिकराङ्कुरात्कङ्कारयो स्तंसृष्टिः । काव्यप्रकाशकृतस्तु
 ए(१)तमलंकारं नाधिक तथाऽऽतिष्ठन्ते, पूर्वाभिहितव्यङ्ग्यक पदत्वलक्षणेन
 परिकरलक्षणेन तदङ्कुरस्यापिलक्षित तथा तत्रैवान्तर्भावसम्भवादिति वि-
 भाव्यम् । बुधैः, पण्डितैः । ननु एकेन तेन । भाति, दीप्यते । ननु तैरुप-
 क्षितः केवलमस्ति । बुधेषु दीपनकरणत्वाभिधायकतृतीया श्रुत्या प्रकर्षा
 प्रतीयते, यतोऽपकृष्टैस्तैर् ग्रासस्य गेहस्यापि वा दीप्तिर्न सम्भवति, किमुतजन
 पदस्य । यस्मिन् देशे सुधीः व्यासस्य अष्टादशपुराणमणेतुः भगवदवताररू-
 पस्य, ननु साधारणस्य, तथाच पाण्डित्यातिशयोऽर्थान्तरसङ्क्रमितवाच्यध्व-
 निः । निरुक्तविशेषणाद्युपेतेवादरायणेऽर्थे व्यासपदस्य लक्षणावृत्तेराश्रय-
 णात् । अन्यथा तत्पदोपादानवैयर्थ्यम् । अतएव “ त्वामस्मि वच्मि विदुषां
 समवायोऽतूतिष्ठति । आत्मीयां मतिमास्थाय स्थितिमत्र विधेहितम्,, इत्यत्र
 त्वामस्मि वच्म्यात्मायपदाना मनुष्युक्तार्थतयोपदेश्यात्त्वोपदेशप्रमाणपरिगृ-
 हीतत्वात्मकार्थान्तरसंक्रमितवाच्यकतयाऽवश्यवाच्याहिताहितत्वाद्यर्थ व्य-
 क्तकत्वं काव्यप्रदीपप्रभाया तुरीयोऽल्लासे प्रतिपादितम् । ‘तनुद्भवोऽपि
 ननु क्षेत्रजोऽपि शुकाचार्यः, तत्र पितुर्गुणसंक्रमणासम्भवात् । किमुतान्यः ।
 ‘अध्यात्मविद्याम्’ अष्टादशविद्यास्थानेष्वभ्यर्हिततमाम् अतिदुरवबोधां वेदा-
 न्त विद्याम्, नपर मन्य विद्याम् “ अध्यात्मविद्याविद्यानाम्,, इति भगव
 द्गीता । आत्मनीत्यध्यात्मम् “अनश्च,, इत्यनेन अन्नन्तादृच् । अधिजगौ,
 अध्यैष्ट । पुरोक्तरीत्याऽर्था पत्यलंकारो व्यङ्ग्यः तेनच प्राशस्त्यं देशस्य तथा
 एवञ्च वर्णनीयतया प्रस्तु तस्य देशस्य बुधकरणिकया दीप्त्या वैयासक्यादेर-
 ध्ययनेन वर्णितेन कारणेन तद्देशोत्पन्ने कृले प्राशस्त्यं कार्यभूतं प्रतीयत इति
 प्रस्तुताङ्कुरालंकारः “प्रस्तुतेन प्रस्तुतस्य द्योतने प्रस्तुताङ्कुर,, इत्यभिधानात्

पुराकिञ्चैयासक्तिः पितुस्तुज्ञयाऽऽयाय मिथिळायामध्यात्मविद्यां राजर्षे-
र्जनकादधीतवा नितिपौराणिकीप्रवृत्तिः । 'तत्र, यथोक्तेदेशे । 'अतिप्रथि-
तः । विरूपानतरः । 'सोदरपुराभिख्यायाः, सोदरपुरेतिग्रामनामधेयस्य, विभू-
पाभूतः' ननुभूषणमात्रम् । 'अन्वयः, वंशः । अस्ति । 'अभिजनान्वय्यो'
इत्यमरः । नतुवंशस्यविभूपातच्चामेति । तेनापिवंशस्य श्रेयस्त्वं श्योत्यते ।
'अमुष्य, यस्यअर्जितं दिग्भनं तदभिधानोग्रामोयत्, तस्मिन् वंशे, एकदेशे
मर्वः, ननुकाश्चिदेव, 'अवनिस्तुरः पृथिव्यां देवात्मको द्विजः, जन्तुः, जन्म,
वाञ्छति । एतेनचानुभाव मुखेनसोदर पुरमूलक दिग्भन ग्रामोपलक्षितरथ
कुलस्थानतिज्यायस्त्वंव्यज्यते । इमेचण्ड्यार्थाः कविनिष्ठे श्रेष्ठत्वे प्रबन्ध-
ध्वनावद्गभाव गानादयन्ति । एवमग्रेपिग्राहामिति भव तिमर्गथा गन्दर्भद्व-
द्विः म. स. र. न. म. य. (१) ल. ग. वर्णानां क्रमेण पादेषु न्यासात् ।
शार्दूल विक्रीडितपृन्तम् ॥ ९ ॥

अत्रश्रोत्रियसद्गुणाग्रगणनोवाग्मीसमज्याजजे
कान्तश्शान्ततमोज्ज्वलीकवचनोज्ज्वलानमुख्यः कृती ।
विख्यातेश्वरदत्तनामगहितो मिश्रोपनामोदितो
यत्कीर्तेस्सकलाकलामितरुचेरद्यापिविद्योतते (जेगीयते) । ८

अनेति । सोदरपुराणवश्य दिग्बनग्रामोपवसितेऽङ्गे 'शोचिषाणा, शो
तमार्तादिप्रियानुष्ठानपरायणतां विमलमानसता साधुताञ्च पराध
मदामदिममरितेन पुरातनेन मिथिहानुपतिना हरिसिद्धदेन शोचिदेति

संज्ञा, लक्षणम्, अर्थः, उदाहरणम् । एतन्मते नान्ये
संज्ञा, लक्षणम्, अर्थः, उदाहरणम् ।

(३६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

पदेन सङ्केतितानां द्विजवर्गाणां, सद्गणेषु 'अग्रा, प्रथमागणनायका, मः । असौ प्रथमतोद्विजः, तत्रापि श्रोत्रियः, तेषामपि गतांगणानामग्रे गणित, इत्यदसीयमाहात्म्ये किं विशेषतोवक्तव्यम् । 'समज्यानां, मदमां 'व्रजे' समुदाये, ननु कस्याश्चिदेकस्यां तत्र, 'वाग्मी' नाचोयुक्तिपटुः । ननुवाचाटः । 'कान्तः' सुन्दरः, समज्याव्रजेकान्त इतिवा, ननु गेहेकान्तः । तेनच सौन्दर्यातिशयोव्यज्यते । 'शान्ततमः, अतिशयेनशान्तः, 'अव्यलीकं' सत्यं प्रियञ्च वचनं यस्य, मः । "व्यलीकमप्रियाकार्यवेक्ष्येष्वपि" इति मेदिनी । "अलीकमनृतेऽपिच" इति विश्वः । अथवा 'शान्तं' विलीनं, 'तमः' अज्ञानं, यस्य, मचास्यव्यलीकवचन इति विशेषणयोः कर्मधारय इति । 'अनूचानानां, वेदेषु तदंगेषु च पण्डितानां विनीतानाञ्च, मुख्यः । "अनूचानो विनीतेस्यात्सांगवेदविचक्षणे" इति मेदिनी । 'कृती' पण्डितः योग्यश्च "कृतीस्यात्पण्डितेयोग्ये" इति विश्वप्रकाशः । 'विख्यातेन' प्रसिद्धेन, ईश्वरदत्तेतिनाम्ना 'महितः, पूजितः, अभिधेय इति यावत् माहात्म्यं द्योत्यते, सोऽयमत्यन्ततिरस्कृत वाच्यध्वनिः, अचेतनेन पूज्यत्वस्य बाधात् । यद्वा विख्यात इति पृथगेव विशेषणम्, पूर्ववत्समापः । अथवा विख्यातानां जनानामीश्वरः, 'दत्तं' दानम्, भावेनिष्ठाप्रत्ययः, तेनयत् नाम, तेनमहितः, दानजनितकीर्तिमानिति यावत् । मिश्रेत्युपनामयस्य, सः, ईश्वरदत्तमिश्र इति मिलितार्थः । 'उदितः, उत्पन्नः । 'सितरुचेः' धवलद्युतेः यस्यकीर्तेः, सकला, ननुकाचिदेव, 'कला' भागः, अद्यापि, ननुपुरैव, जेगीयते, अतिशयेनगीयते गैधातोर्यद् । लोकैरितिस्फुटम्, अतएव न न्यूनपदत्व दोषप्रसक्तिः । अथवा विद्योतते इति पाठः, तत्रचनशङ्काप्युक्तदोषस्य । एतैश्चविशेषणै रतिपुष्कलत्वं मिश्रेऽभिव्यज्यते इति ॥ १० ॥

(३८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

न्तं, मन्दिरं “निशान्त पस्त्य सदनम्” इत्यमरः निर्माय. विरच्य, अ-
निशं हरैकमनाभूत्वेति भावः । ‘निर्मायतया, मायारहिततया ‘शं, क-
ल्याणम्, ‘व्यायात्’ प्रापत् । हरैकमानसत्वस्य मायाराहित्येकारणतया
काव्यलिङ्गम् । निर्माय निर्मायेत्यत् यमकाङ्कारः “सत्यर्थेपृथगर्थायाः
स्वरव्यञ्जनसंहतेः, क्रमेणतेनैवावृत्तिर्यमकं विनिगद्यते” इति दर्पणोक्तेः स-
मानार्थत्वाभाववत्समानानुपूर्वीकानेकवर्णावृत्तियमक मितितु परिस्कारिणां
सरणिः, लाटानुप्राससारणाय समानार्थत्वाभाववदिति । विभिन्नार्थकत्व
निवेशे “ममरसमरसोऽयम्” इत्यादौ द्वितीयावृत्तेर्निरर्थकत्वेनाव्याप्तिः
प्रसज्येत, इति तदुपेक्षा । “सरोरम” इत्यादावतिव्याप्तिवारणाय समा-
नानुपूर्वीकेति । तथाविधवर्णद्वयेऽतिव्याप्तेर्व्युदासाय अनेकवर्णावृत्तीती-
ति संक्षेपः ॥ १२ ॥

तज्जातोधिषणावधीरितसुधीसन्दोहमोहप्रदः
स्वच्छान्तर्जितदर्पदर्पणमणि स्सन्तर्पणोजन्मिनाम् ।
पुण्याचागविहापिताखिलपणो राजत्ममज्ञाचणो
लेभेसाधुवशंवदेन्द्रियगणो गोमाजिमिश्राभिधाम् ॥१३॥

तज्जातइति । तस्मात् रतिदत्तमिश्रात् जातः । ‘धिषणया, बुद्ध्या,
‘अवधीरितस्य, तिरस्कृतस्य, सुधियां सन्दोहस्य, मोहप्रदः । अमुष्य
प्रज्ञातिशयं समधिगत्य सर्वएव सुधियोमुह्यन्तीति महामतित्वं व्य-
ङ्ग्यम् । यद्वा विषणयाऽवधीरितः सुधीसन्दोहोयेन तथाभूतस्सन् ‘मोहम्’
अविद्यां, प्रकर्षणयति खण्डयति निवर्तयतीति यावत् तादृशः । अथवा धि-
षणाया अवधिः, काष्ठप्राप्तः निरतिशयबुद्धिमानिति फलितार्थः, अतएव
; कम्पितः सुधीसन्दोहोयेन सचासौ ‘मोहप्रदः, ‘मायाः सम्पत्तेः,

ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॐ

(३९)

‘ऊटः, ‘तर्कः, सत्प्रदः, सम्पत्तिप्राप्त्युपायशिक्षक इत्यर्थः एतेन नोति-
 श्रुत्वं द्योत्यते । ‘मरय, शिवरय, ‘ऊटः, तर्कः, सत्प्रदः, शिवमाधदन-
 कोपदे शितेति वा । सच सर्गाद्यकालिकं द्वयशुभं यदि रघोपादानगोचराप-
 रोक्षज्ञानादिमज्जन्यं नरयातु, तर्हिकार्यं नरयादिन्यादिमपोन्यायद्वयमा-
 खलो प्रतिपादितः “मद्विश्वधन्द्रमायेधा गालक्ष्मीधर्मकारिणा” इत्यादि
 धानात् । रचन्तेन ‘अन्तः, अन्तः कारणेन जितः ‘दणो, विमदन्तर्गो
 यरय तथाविधः ‘दर्पणमणिः, उत्कृष्ट आदर्शः दर्पणः मणिः चेति वा
 येन सः, तदधिकं धवलमानस इति भावः । न्यतिरेकात्कारः । जनिमया
 ननुतद्विशेषाणामेव, ‘सन्तर्पणः, तृप्तिप्रकारकः, सर्वभूतापवाराविभाजः ।
 “सौन्दर्यं तर्पणं तृप्तिः” इत्यमरः । पुण्याचारेण, ननु भगवता, ‘विष्णु-
 पितृ, विसर्जितः, अग्निलः ‘पणः, धनं, येन साक्षाः । एतन्मन्त्र-
 दिग्दर्शं व्यज्यते । “पणो नराटमाने रमान्मूल्यं क्षार्पापणो गतः । पणमण्य-
 टिकापुनः पणवदारे भूतौ धने इति मेदिनी ॥ अतएव साक्षात् ‘पण-
 हया, धीरर्पा, पणः, रूपातः, “तेन विष्णुश्चरुश्च पणो” इत्यनेन
 प । पदार्थं हेतुवं काव्यलिङ्गम् । ‘पराशरदः, आयत्तः, ‘पराशर-
 पदः खभू, अर द्विषदित्यादिना भूमिदिश्याणां पराशरदत्ता क्षार्पापण-
 य, पणो यरय तथा भूतः, इन्द्रिय विजोक्तं रघुनन्दनस्य ।
 अतएव गोलाग्निसंवेद्यमिषां साष्ट, सम्यक्, तेभ्यो । गोलाग्निसंवेद्य-
 इन्द्रियरक्षामिने योमयति, रक्षामिषदस्य साक्षात्तः पणो नराटमाने रमान्मूल्यं
 रक्षामिने निरतिशयात्कारो । “निरतिशयोक्तो नारायणः तर्हि” इत्यनेन
 इति दीर्घलोपोः । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो ।
 एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो ।
 एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो । एतादृशमिहिलो ।

(४०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

क्त्या प्रकृते तदभावात् । अतएव “ श्वपाकोजल्पाकोभवतिमधुपाकोऽपि
गिरा, निरातंकोरंको विहरति ” इत्यादौ भवतीत्यादिनागिरेत्यन्तेनव्य-
वधानान्नोदित द्रवणप्रसंगः । अभिहितञ्च “प्रतिकूलवर्णं मुपहतलुप्तविम-
विसन्धिहतवृत्तम्,, इति काव्यप्रकाशकारिकाव्याख्यायां “ तेनैरन्तर्येण
त्वप्राप्तवहुविसर्गत्वं तथा लुप्तविसर्गत्वं च इति प्रदीपकारैः । अथवा “
हापिताखिलघन स्संज्ञासमज्ञा,, इतिपाठः । अत्रचनैतदोपस्योन्मेषोऽपि
'संज्ञया, निजनाम्ना, समज्ञयाच चणइत्यर्थः । साचेयंख्यातिरुत्तम
पितुर्नामादिनाख्याते रनुत्तमत्वबोधनादिति ॥ १३ ॥

दृष्यद्वेषणदन्तिदारणहरे रज्यत्प्रतापानल

ज्वालाजातवदातकीर्ति हिमगु प्रोद्भासितज्यापतेः ।

यस्साचिव्यपदं प्रसाध्यमिथिलाभूपात्मजस्यातुलं

कंवा नोपचकार्योऽनु दिवसं नोकेन संस्मर्यते ॥ १४ ॥

दृष्यदिति ! ‘दृष्यताम्, पराक्रममाणानां, नतु निर्व्यापृतितयाति
ष्ठताम् । , द्वेषणानां, परिपन्थिनामेव, दन्तिनां, नतुकेवलगजानां, ‘दा-
रणे, पाटने, ‘हरेः, सिंहस्य । अश्लिष्टशब्दनिबन्धनं केवल परम्परितरु-
कमलंकारः । ‘रज्यतः, रागयुक्तस्य, ‘धातुसम्बन्धेप्रत्ययाः, इत्यने-
प्रधानक्रियाकालएव गौणक्रिया बोधक धातूत्तरं प्रत्ययस्यविधानात् प्रोद्भ-
सितेत्यत्रप्रधानीभूत प्रोद्भासनक्रियाया अतीतकालिकत्वेनरज्यत इत्यत्रा-
ल्लोऽतीतकालार्थकत्वात् । ‘प्रतापानलस्य, प्रतापात्मकस्याग्नेः, परिष्ठा-
मालंकारः अग्नौ प्रतापारोपमन्तरेण तज्जातत्वस्य कीर्तिचन्द्रेऽसम्भवात्
ज्वालायाजातेन ‘अवदातेन, शुभ्रेण, ‘कीर्तिहिमगुना, यशश्चद्वेण
रूपकालंकारः । हिमगुपदोपादानात्कीर्तौस्पृहणीयतमत्वं वस्तु शब्दशक्त्य

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (४१)

व्यज्यते प्रोद्भासिताया 'ज्यायाः, पृथिव्याः, पत्न्युः विषमालं-
कारोद्वितीयः, कार्यकारणयोर्वैरूप्यात् ननु अकारणात्कार्यजननरूपाञ्च-
तुर्या विभाषना, प्रतापकीर्त्योः कार्यकारणभावस्यसद्भावात् । वस्तुनस्तु
प्रतापत्वेन कीर्तित्वेन तस्याक्षतत्वेऽपि प्रतापाग्नित्वेन कीर्तिचन्द्रन्वेनाभा-
वात्मम्भवत्येव साविभाषनेति विभाषनीय मलंकारवैधानिर्गः । तथाचोक्ते
न परम्परितरूपकेणेनरेपामलंकाराणां संगृष्टिः । द्वितीयरूपकेण परिणामे
नच विषमविभाषनयो रङ्गाङ्गिभाव मङ्कारः 'मिथिलाभूषण्य, रङ्गमिथ्याः
त्मजस्य वनमाळिसिंहरय, 'भाचिष्पदं' मन्त्रित्वस्य स्थानम्, ननु अ-
न्यस्य, 'प्रवाध्य, अलंकृत्य, ननु प्राप्य । नवातेना लंकृतः अर्धनवन-
स्थानस्य शोभायाउदयात्, नत्वदतीपशोभायास्तेन । यः गीतानिमि-
श्रः, फं प्राणिनम्, अनुक्तं यथास्यात् तथा नोपपत्तार, अपि तु सर्वमष्ट,
तेनैतत्कर्तृक उपकाररखात्मकार्येत्यनन्वयालंकारध्वनिरितिध्येयम् । अतएव
'अनुदिवसे' प्रत्ययं तेन प्राणिना न सम्यक् समर्थते, अपि तु
सर्वं, तदनन्तरं तदधिकगुणशालिन रतत्सत्तास्यदोषकर्तृताचदस्य वि-
दात् । अनुलोपकारकर्तृत्वस्य समरणगाचरताया एतन्मयासावलिपम्,
एतच्च संगृज्यते निरुक्तेरलंकारैरिति ॥ १५ ॥

योदार्था समखानयद्वृत्तमामश्रमिषां दीर्घिकां
शेत्तु प्रोदसृजन्नुभारपदेष्टवावदान्मुदरेः ।
आगादागमयां वपारजनात् सतीर्षितार्पादहृ
भोगांशरविषोदिताननुदभदाहः पल्लव्यतात् ॥ १६ ॥

प्राति । 'परमाहः, द्विषतिरहः एतद्वर्ततेने, अन्तराहः
अपराहः गोसांनिमिषः । एतेन रत्यमाणादेव दयेते परमाहः च

(४२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

समयसम्बन्धदर्शनेन सामर्थ्यं द्योत्यते, तेनचपरिकरालंकारः । दीर्घं
बहुतमाम् 'अग्रा, प्रथमा, 'अभिधा, अभिधानं, यस्यास्ताम् एवञ्च मर्णा
सुरसशिशिरसुरभिविमलजलवत्त्वं दीर्घिकायांव्यज्यते । 'दीर्घिकाम्' या
पुष्करिणीम्, सम्यक् अखानयत् । 'दुश्चरपदेषु, दुर्गमस्थानेषु, 'उच्चा-
चानि, बहुविधान्, "उच्चावचं नैकभेदम्,, इत्यमरः, मधूरव्यंसादिता
समासः 'उच्चकैः, उन्नतान्, शेतून् 'च, अपि, प्रोदसृजत् । 'सत्तीर्थस्य,
वाराणसीप्रमुखस्य 'सार्थान्, समुदायान्, मुहुःस्वयम्, आगात्, जनान्
आगमयां, चकारच । 'चः' समुच्चये । 'नैकविधान्, बहुविधान् नशब्देन
समासः । 'उचितान्, धर्माविरोधिनः, भोगान् अनुवभूव । दीपका
लंकारः "सैवक्रियासुबह्वीषु कारकस्येतिदीपकम्,, इतिप्रकाशोक्तेः ।
तथाच परिकर दीपकयो रसंसृष्टिरिति ॥ १६ ॥

वदान्यतान्यशरणं शरणंयश्शरीरिणाम् ।

निकेतनं विवेकादेर्मिथिलावनिकेतनम् ॥ १७ ॥

वदान्यतेति । 'यः, उक्तमिश्रः, 'वदान्यतायाः, बहुप्रदत्वस्य,
'अन्यत, लौकिकादितरत्, 'शरणम्, गृहम्, अतिशयोक्तिरलङ्कारः, लौ-
किकेऽलौकिकत्वं वर्णनात् । "प्रस्तुतस्पर्शदन्यत्वम्" इत्यतिशयोक्तिप्रका-
शेप्रकाशाभिधानात् । वदान्यतातिशयोवस्तु कविप्रौढोक्ति सिद्धेनालङ्कारेण
व्यज्यते । 'शरीरिणां, नपुनस्तद्विशेषाणामेव, 'शरणं, रक्षिता । 'शरणं
वधरक्षित्रोः शरणंरक्षणंगृहे' इति विश्वः । सर्वभूतेषुदयालुता द्योत्यते ।
'विवेकादेः, विवेकक्षमाशान्ति प्रभृतेर्गुणस्य 'निकेतनं, गृहम् । उक्तगुणा-
तिशयोगम्यः, मिथिलाया 'अवनेः, पृथिव्याः, 'केतनम्' पताका । मि-
थिलावनिशोभाकारित्वं प्रतीयते । 'केतनंतु निमन्त्रणेगृहे केतौचकृत्ये"

इतिमेदिनी । यमकालङ्कारः ॥ १७ ॥

कालव्याजवसद्वियोगिविशरा घेन्दुद्विपि श्रेयस
स्तिथ्यांज्येष्ठदलेसधन्यसहजज्येष्ठोऽदलस्थोऽसताम् ।
गङ्गाभङ्ग समुद्रतामृतपृषत्तमङ्गातिपूताङ्गको
भास्वन्यस्तद्वगोमितिव्यवहरन्नागादनङ्गारिताम् ॥ १८ ॥

कालेति । कालस्य, श्यामलस्यअङ्गस्य 'व्याजेन, छलेन' 'कालश्या-
मकमेचकाः' इत्यमरः । वसत् वियोगिनांजनानां 'विशरेण' घातेन, अर्घं
यत्र "आलम्भपिञ्जविशरघातो न्माथवधाअपि" इत्यमरः । तथाभूतस्येन्दोः
द्विपि' 'ज्येष्ठस्य' तदभिधेयमासस्य, 'दले पक्षे' धवलदलइति यावत्
चन्द्रमण्डलंविश्लोक्य प्रोद्दामकामतया केचन विधुक्ताम्रियन्ते' इति तज्जनितं
पापंचन्द्रमसि कलङ्कात्मनावसतीत्यर्थः । तथाचनायंचन्द्रेकलङ्कः, अपितु वि
योगिवधजनितं कलमप मित्यपह्नुति पूर्वकारोपात्मिकाऽपह्नुतिरलङ्कारः ।
अथस्यचश्यामकत्वं कविसमयसिद्धम् 'मालिन्येव्योम्निपापे यशसि धवल-
तावर्ण्यते हासकीर्त्योः' इत्याद्यभिधानात् । 'प्रकृतं प्रतिपिध्यान्यस्यापनं
स्य.दपह्नुतिः' इत्यपह्नुतिलक्षणंदर्पणे ॥ 'श्रेयसः, पुण्यस्य, तिष्ठ्याम् ए-
कादश्यामिति यावत् । 'धन्यानां, पुण्यशास्त्रिणाम् 'सहजानां, सोदराणाम्,
'ज्येष्ठः ज्यायान् । तेनातितमां पुण्यशालित्वंच्यङ्गयम् । असताम्, पापि-
नाम्, 'अदलस्थः' नपसस्थः, गङ्गायाभङ्गात् तरङ्गात् 'भट्टास्तरङ्गाजर्मिर्वाः'
इत्यमरः समुद्रतस्य 'अमृतपृषदः, जलविन्दोः, सङ्गेन अतिपृतमङ्गयस्यसः,
'भास्वति, प्रोदितेमूर्ये न्यस्तादृक् येनतादृशः ओम् इति द्वात्रिंशच्चकंपदंम-
णवाभिधानं प्यवहरन्, उच्चारयन् अनङ्गारितां शिवत्वम् आगात्

वंशोवर्णेनीयायामातुरङ्ग मित्युदात्तोप्यलंकारः “यदनां यदुपलक्षणमङ्ग-
भावः अर्थाद्वर्णनीये तदप्युदात्तम्” इति काव्यमदीपाभिधानात् : ‘नक्ता
दिभिः, नक्तोपोपणादिभिः, नत्वन्यथा, क्लान्तः कायोयस्या स्तथा
भूता । एवञ्च क्लान्तत्वेऽन्यप्रयोज्यत्वस्य व्यावृत्तेस्नात्पर्य विषयीभूताया
आर्थत्वादार्थीशुद्धा परिसंख्यालङ्कारः । अयञ्च पुरोदितेष्वपि पद्येषु
यथायथं बोध्यः । एवमग्रेऽपि । हरिपदमेवजलजं, तेन रूपकालंकारः,
तस्य ‘ध्यानेन, समानविषयकान्तः करणवृत्ति प्रवाहेण, “तत्र पत्न्यैक
तानताध्यानम्” इति हि पारमर्षे पातञ्जलदर्शनेष्टम् ‘निर्धृता, नितरां
तिरस्कृता माया यया, प्रयोज्यत्वं तृतीयार्थः तेन ध्यानस्य साक्षादविद्याना
शकत्वविरहेऽपिनक्षतिः । यद्वा साक्षात्कारद्वारा तस्यापि हेतुत्वमेवेति वृत्ती
याया एतदर्थकत्वेऽपिनकापि हानिः व्यापारेण व्यापारिणोऽन्यथागिहिवि-
रहादिति विभावनीयम् । अतएव शान्तः ‘अपायः, अविद्याकल्मसीऽ-
न्तरायः यस्यां स्तादृशी अविद्यानाशेनैव तस्यापि नाशात्, इहाऽपि काव्य
लिङ्गम् । ‘अवहिता, अममत्ता नादधानेति यावत्, ‘तारकं, रामेति नाम,
‘चिन्तयाना, मनमाजपन्ती वाचिकोपांशु मानसगणेषु अन्तर्वर्त्यदेतस्य
पेक्षयामाधान्यात् । ममयं नयन्ती, नत्वन्यथा, आरते, केतुन आसिता ।
एतैश्च विशेषणैर्माहात्म्यं मानरिष्यजयते । येन तारण रिसिद्ध ‘एकं,
मधानं कर्मयम्य तादृशः कल्पीकजन्मा परममणिपदं यातः ॥ इहालंकाराणां
संसृष्टिसंस्कारव्यवस्था स्वयमेव सूक्ष्मधिया कायेति । स्वधरावृत्तम् “स्व-
र्म्मर्गानां प्रयेण त्रिमनियतियुता स्वधराकार्तितेयम्” इति वृत्तरत्नादरी-
यलक्षणमगन्ध्यादिति ॥ १८ ॥

तस्मात्ती व्रमतिः पतिव्रतलमदामामणौ जान्तवी

देव्या मत्र सतांप्रियः समजनि श्री बालकृष्णाभिधः ।

(४६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

यः प्रेम्णा चरणाम्बुजन्मयुगलं शुश्रूपमाणोगुरो

विंशाब्दावधि दर्शनेषु परमां शिक्षां समासादयत् ॥१९॥

तस्मादिति । पत्युः व्रतेन मनुनिदेशितेन, लसन्तीनां, योषिणां
 “ नारीरूपं पतिव्रतम् ” इति नीतेः पातिव्रत्यस्य तासां शोभावहत्वात्
 ‘मणौ, श्रेष्ठायाम् । ‘ अत्र , यथोक्तायां, जानकीदेव्यां, ‘ तस्मात्, गो
 सात्विमिश्रात्, तीव्रमतिः एतेन विंशाब्दावधि दर्शनेषु परमशिक्षाममामा
 दनयोग्यत्वं गम्यते, तथाच परिकरालंकारः । ‘ सतां, साधूनां विदुषां
 प्रियः । एतेनच कार्यभूतेन विनयादिगुणगणाति शयोव्यज्यते । सत्प्रि
 त्वे तीव्रमतित्वस्यापि हेतुतया काव्यलिंगमलंकारः । श्रीबालकृष्णाभिध
 समजनि । नच श्रीशब्दस्य नामानन्तर्गततया “ श्रीबालकृष्णाभिध
 इत्युक्तिरसङ्गतेतिदेश्यम्, तस्याः श्रियायुक्तः बालकृष्णाभिधः श्रीबा
 ण्णाभिध इति विग्रह प्रतिपाद्यार्थकत्वात् । एवमेवहि “ संक्षेपतः श्रीर
 नाथनामा ’ इति प्रामाण्यवादप्रत्यक्षमणिदीधिति ग्रन्थे शिरोमणेरभिधा
 तदीयविवृतौ सङ्गमयांचक्रिरेभट्टाचार्य चरणाः । यः बालकृष्णाभिधः
 गुरोश्चरणएवाम्बुजम्, तथा च रूपकालङ्कारः तस्य युगलं ‘प्रेम्णा
 भक्त्या, तस्यगुरुगोचरत्वात् । नतु कार्यानुरोधेन । ‘ शुश्रूपमाणः, सेव
 मानः । विंशतेः पूरणः विंशः, सचासावब्दः, अवधिः यस्य तत् । तद-
 वधित्वञ्च तत्पर्यन्ताभिव्याप्तिकृत्वम् । नत्ववधिपदं मर्यादार्थकम् तथा-
 सति ऊनविंश वर्षाभिव्याप्तस्यैव शिक्षाग्रहणस्य बोधः प्रसज्येत । नचविव-
 क्षिताविवक्षितार्थोभयोपस्थापनानुकूलस्वरूपसन्देह विषयत्वात्मकस्य स-
 न्दिग्धत्वदोषस्य प्रसङ्गः, तादृशस्य संदेहस्य प्रकृतेऽनवतारात् । ‘ दर्श-
 नेषु, आन्विषिकीप्रभृतिशास्त्रेषु, परमां नतु साधारणीं शिक्षां समासाद-

यत् । ननु केवलं भवापत् । नचापादानानुक्त्यान्यूनत्वं दोषः, गुरावपा-
दानत्वस्यार्थताया अनुभवसिद्धत्वात् । यद्वा “यः प्रेम्णा गुरुपादपद्मयु-
गलं शुभ्रूषमाणस्ततः” इति पठनीयम् पञ्चमीचेयम् “आख्यातोपयो-
गे” इति सूत्रानुशिष्टा, अतएव समासाद् यदित्यस्याप्युपपत्तिः । एतेन
च “प्रथमेनार्जिताविद्या” इति निन्दाश्रुतेरगोचरस्य मित्यलम् ॥१९॥

यत्र प्रात्यहिकाध्वगैघहुतभुग्धूमान्वकारावृते
भास्वत्प्रौढमरीचिभिर्नहि शुचौ तापं भजन्ते जनाः ।
अर्चान्यस्तविशस्त धूपपवन व्यासञ्जना मोदना
त्सान्द्रे चैकुरसञ्चये सुरभये नो वा यतन्तेऽङ्गनाः ॥ २० ॥

अथ निजवासग्रामं श्लोकद्वयेन वर्णयति, यत्रेत्यादिना । यत् ग्रामे
शुचौ ग्रीष्मसमये ‘प्रात्यहिकस्य’, अनुदिनं विधीयमानस्य. ‘अध्वरौ-
घस्य’, यज्ञसमुदायस्य, ‘हुतभुजां’, हुताशनानां, धूपैः अन्धकारेण आ-
वृते रावणाद्धेतोः, ‘भास्वतः’, भास्करस्य, ‘प्रौढाभिः’, प्रवृद्धाभिः,
‘मरीचिभिः’, किरणैः, तापं जनान् भजन्ते । अतिशयोक्त्यलङ्कारः । प्रत्य
हमध्वरातिशयविधानेन परमपवित्रत्वं प्रतीयते । एवम् ‘अर्चासु’, देवा
तिथीनामर्हणेषु, न्यस्तानां ‘विशस्तानां’, प्रशस्तानां, धूपानां पवनैः ‘व्या
सञ्जनेन’, व्यासक्ततया आमोदनात् सौरभात् हेतोः, ‘सान्द्रे’ स्निग्धे,
चैकुरसञ्चये, केशकरापे, सुरभये, सौरभाय, अङ्गना नो वा यतन्ते सि-
द्धत्वादित्यर्थः । देवादीनामर्चातिशयोव्यंग्यः । स्नानात्परं सलिलार्द्राने
वचिकुरानङ्गनाधूपैर्वासयन्तीत्याचार इति ॥ २० ॥

प्रयत वंश वतंस विशारद
द्विजकुले बहुलेख गृहाकुले ।

(४८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

वसतियोऽवसथेऽत्र समेऽसमे
श्रितशमेनवटोलपदास्पदे ॥ २१ ॥

प्रयतेति । ' प्रयतानां , पवित्राणां , नत्वतादृशानां , वंगानां ' वतं-
सः , भूषणं , नतुकुठाररूपं , यद्वा प्रयतेति द्विजकुलविशेषणम् । विशिष्टा
' शारदा , सरस्वती , विद्येतियावत् , यस्यतत् । द्विजानां ' कुलं , समुद्रो,
यत्र तथोक्ते , बहुभिः ' लेखगृहैः , देवगृहैः चित्रगृहैश्च , " लेखादिति
नन्दनाः " इत्यमरः । ' आकुले , व्याप्ते । ' समे , सशोभे ससम्पत्ति-
केच , ' असमे , अनुपमे , विरोधालङ्कारः , समत्वासमत्वयोस्सहानव-
स्थायित्वरक्षण विरोधस्यापाततः प्रतिभासनात् , परमार्थस्तूक्तएव ।
श्रितः शमोयं तादृशे , शमोप्येतदीयगुणातिशयं विलोक्यैन माश्रय
दितिभावः । शमस्तु अन्तरिन्द्रिय परिग्रहः । एवञ्च ग्रामे मुमुक्षाधिकारि
जनशालित्वं गम्यते तस्यामेव शमस्य विनियोगात् तदुक्तं विवरणाचार्यैः
" सर्वत्र फल श्रुतयः कामनोत्पादन द्वारा मुमुक्षो रधिकार प्रदर्शनार्था "
इति । नवटोल पदस्य ' आस्पदे , स्थाने , नवटोलाभिधान इति यावत्
' अत्र , यथोक्ते पूर्वोक्त पद्य वर्णित इति यावत् । अवसथे , ग्रामे , " अव-
सथोग्रामे " इति शब्दरत्नावली । यः बालकृष्णः वसतीत्यर्थः ॥ सुन्दरीवृत्तं
तदुक्तं वाणीभूषणे " कुसुमगन्ध रसै रतिभूषिता , चरण सङ्गतनूपुर मण्डिता ।
कर सुवर्णलसद्दलयान्विता , स्फुरतिरस्यनचेतसि सुन्दरी " इति ॥ २१ ॥

कार्णाटा वनिपेन केरलमह्वी पालेन यो गौर्जर-
ज्यानाथेनच मालवक्षितिभुजा वैदेहभूमीभृता ।
दोषज्ञाति विदूर दर्शि विदुषां राजत्समज्ञाजुषां
विज्ञातं सममानि संसदि समालोच्यासकृन्नैकधा ॥२२॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (४९)

काणाटिति । 'यः, वालकृष्णः । कार्णाटावनिपादिना नतुयेनकेनचित्
राज्ञा 'राजत्समज्ञाजुषां, विलसत्कीर्तिमतां, दोषज्ञाना-मतिविदूरदर्शिनां
विदुषाम्, नतु साधारणानाम् । 'संसदि, सभायाम् । 'मसकृत्, नत्वेक
वारम् । 'नैकधा, बहुभिः प्रकारैः, 'समालोच्य, विपश्चिदय मिति विनि-
श्चित्य, नत्वापाततः । 'विज्ञातं, रूपातं, यथास्यात् तथा । 'सममानि,
सम्मानितः । यद्वा 'नैकधा, पारितोषिकरूपाणां प्रभूतमुद्राणाम् ऊर्णतन्तु
निर्मित शीतनिवारकावरणानां दोशाळेति भाषया विश्रुतानां समर्पणेन
सममानीति । तथाच तादृश संसदि निरुक्तैर्महाराजैस्तथाविधेन सम्मानेन
पाण्डित्यातिशयो व्यज्यते ॥ २२ ॥

द्वाविंशेयतिवत्सरे समधराधीशावली मस्तक-
न्यस्तस्रङ्गमकरन्द विन्दु विलसत्पादारविन्दस्य यः ।
यातश्श्रीलरमेश्वरस्य मिथिलानेतुस्स्वविद्यौक(१)सा
माद्येऽध्यापकता मदभ्रशरदोऽनैपीत्तमावर्धयन् ॥२३॥

द्वाविंशइति । 'यः' वालकृष्णः । द्वाविंशे वत्सरे 'यति' गच्छति,
समेपां धराधीशानां या आवली, तस्याः मस्तकेषुन्यस्तायाः स्रजो, मालाया,
मकरन्दविन्दुना विलसत्पादारविन्दं यस्य, तथोक्तस्य, निखिलभूष
प्रणम्यमानस्येति यावत् । मिथिलाया नेतुः, नायकस्य, श्रील रमेश्वरस्य
नतु सामान्यभूषस्य, 'स्वविद्यौकसां' स्वकीय विद्यालयानाम् 'आद्ये'
प्रथमे मुख्ये, अध्यापकतां यातः 'तं' यथोक्तं रमेश्वरम् आवर्धयन् उत्त-
रोत्तर मौन्नत्यं प्रापयन् 'अदभ्रशरदः, बहुनिवर्पाणि "अदभ्रं बहुलं बहु"
इत्यमरः । अनैपीत् इति ॥ २३ ॥

(१) स्वविद्यालये मुख्ये इत्यपि पाठः ।

श्री पद्मारमण प्रधानदिविपत्सद्मानि निर्मापित्वा
निश्छद्मानुरते दिशासु नयनालानानि यः प्राणिनाम्
चन्द्रद्वैत निरूप्य विभ्रमधियो नेताजनान् द्योतिता
शावकूस्फुट साधुकैर विकया कीर्त्याऽभितो भ्राजते २

अथ मिथिलापति रमेश्वरसिंहं वर्णयति श्रीत्यादि श्लोकपदकेन
'यः, रमेश्वरमिश्रो भूपः, श्रीपद्मारमणः प्रधानं येषां, तेषां 'दिविपत्सद्मानि,
स्वर्गौकमां, पद्मानि, प्राणिनां, ननुमानवानामेव, नयनयोरालानानि क
नानि, तेन मद्पसु सौन्दर्याति शयो व्यज्यते । 'निश्छद्मानुरतेः, निष्पा
भक्तेः, दिशासु, ननु एकस्यां दिशि । निर्मापिता, "नलोकाव्ययनि
त्वर्थं त्वनाम्" इत्यनेन पृथ्या निषेधः । दिविपत्पदोपादानेन स
मुपशस्यं प्रतीयते । द्योतिनम् 'आशायाः दिशः, यत्कूपया, तयोक्त
स्फुटं, विकशितं "व्याकोशविकचस्फुटाः" इत्यमरः । साधुरेव कर्मा
नादृश्या, स्फुटस्त्वस्याचेतनवर्षस्य साधोविरहेण कैरवनादात्म्यागोपम्या
दृक् नया परिणामात्तद्गारः । साधुइषां वहाकीर्ति मेतदीयेनिभावः । की
चन्द्रद्वैतेन 'निष्पाः, विषयिण्यः, विभ्रमधियः चन्द्रद्वैतगोचराणि भ्रम
न्मज्ञानानां नियावत् । ज्ञानस्य विषयनिरूप्यत्वात् । तथान चन्द्र
द्योतिनस्य चन्द्रस्य, स्फुटम् अनयव 'मानु, गोमनं, कैरवं गम्भात् नान
न्यं स्फुटम् अस्मिन् चन्द्रे चन्द्रास्मिन्, इति मानान्यात् कीर्त्तौ चन्द्राग्रमे
न चन्द्रस्य चन्द्रे देव भया जायते जनानां मिनिभावः एवंभूतः प्र
'प्र जने दीप्यते । प्रेयः चन्द्राग्रापि पद्मापतिप्रसूयदेवादिविपत्सद्मानि
व चन्द्रस्य चन्द्राग्रापि पद्मापतिप्रसूयदेवादिविपत्सद्मानि
न चन्द्रस्य चन्द्राग्रापि पद्मापतिप्रसूयदेवादिविपत्सद्मानि

वसुस्थितोऽपि द्विजराट् व्रजनेयश्शिवावहः ।

शिवाश्रितोऽपि सुमनो मार्गणो रतिवर्धनः ॥ २५ ॥

यः 'द्विजराट्, चन्द्रः 'सोमोऽवै द्विजानां राजा' इति श्रुतेः, 'वसो', अष्टमस्थाने, स्थितोऽपि 'व्रजने, यात्रायां 'शिवावहः, कल्याणकारकः, यात्रायां चन्द्रस्याष्टमस्थानस्थितत्वे मरणप्रदं त्वं ज्योतिस्त्वन्त्र सिद्धम् एवञ्च विरोधः । वसुपदे विभवार्यकत्वस्य द्विजराजपदे ब्राह्मण प्रत्यर्थकत्वस्यचाभ्युपगमेन तत्परीहारः । आगत जनकल्याणकारक इति पर्यवसितार्थः । 'शिवं' शङ्करम् आश्रितोऽपियः 'सुमनः, प्रसूनं मार्गणो वाणो यस्य सः, काम इति यावत्, रतेः तत्प्रियायाः 'वर्धनः, 'आनन्दनः, शिवज्ञापयोरर्थि प्रत्यर्थि भावाद्विरोधः । 'सुमनाः, शोभनमना, मार्गणो, याचको, यस्येति, 'रतेः' सुखस्यवर्धन इत्यर्थस्या-भिमतत्वेन तत्पूत्यादेशः । 'मार्गणो याचकेश्वरे' इति मेदिनी श्लेष भित्तिको विरोधाभासालङ्कारः तेनतयोस्संकर इति ॥ २५ ॥

प्रजानां मानसे प्रेम्णो बीजाज्जाता दयाऽमृतैः ।

प्रौढा ऽऽशंसालता कापि श्रेयो यस्य प्रसूयते ॥ २६ ॥

प्रजानां मिति । प्रजानां मानसे यस्य प्रेम्णो बीजात्, विषयत्वं पण्यर्थः । जाता यस्य दयामृतैः प्रौढा समयेतत्वं पण्यर्थः । 'कापि, लोकोत्तरा, यस्य आशंसा, समीक्षा, कृता, विषयत्वं पण्यर्थः । यस्य 'श्रेयः' कल्याणं 'प्रसूयते, जनयति । यस्यराशोऽभ्युदयं प्रजाः कामयन्त इति भावः । राजप्रजयो रन्योन्यानुरागवत्त्वं न्ययते । रूपकानुपाणितो व्य-तिरेकालङ्कार इत्यनयो स्मर इति ॥ २६ ॥

विवेकराकापनिकल्पितोदयः

सुधीवर व्रात निषे वितोऽजयः ।

(५०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ धन

श्री पद्मारमण प्रधानदिविपत्सद्धानि निर्मापि
निश्छद्धानुरते दिशासु नयनालानानि यः प्राणिनाम् ।
चन्द्रद्वैत निरूप्य विभ्रमधियो नेताजनान् द्योतिता
शावकूस्फुट साधुकैर विक्रया कीर्त्याऽभितो भ्राजते २

अथ मिथिलापति रमेश्वरसिंहं वर्णयति श्रीत्यादि श्लोकपदकेन
'यः, रमेश्वरसिंहो भूपः, श्रीपद्मारमणः प्रधानं येषां, तेषां 'दिविषय'
स्वर्गौकसां, सद्धानि, प्राणिनां, ननुमानवानामेव, नयनयोरालानानि बन्ध
नानि, तेन मद्मसु सौन्दर्याति शयो व्यज्यते । 'निश्छद्धानुरतेः, निर्व्याः
भक्तेः, दिशासु, नतु एकस्यां दिशि । निर्मापिता, "नलोकाव्यय निष्ठा
खल्वर्थं त्वनाम्" इत्यनेन षष्ठ्या निषेधः । दिविषत्पदोपादानेन सदा
सुप्राशस्त्यं प्रतीयते । द्योतितम् 'आशायाः दिशः, वक्तृवया, तथोक्तया
स्फुटं, विकशितं "व्याकोशविकचस्फुटाः" इत्यमरः । साधुरेव कैरवंय
तादृश्या, स्फुटत्वस्याचेतनधर्मस्य साधौविरहेण कैरवतादात्म्यारोपस्याव
श्यक तथा परिणामालङ्कारः । साधुहर्षावहाकीर्ति रेतदीयेतिभावः । कीर्त्या,
चन्द्रद्वैतेन 'निरूप्याः, विषयिण्याः, विभ्रमधियः चन्द्रद्वैतगोचराणि भ्रमा-
त्मक ज्ञानानीतियावत् । ज्ञानस्य विषयनिरूप्यत्वात् । तथाच चन्द्रेऽपि
द्योतिताशावकूत्वं, स्फुटम् अनएव 'साधु, शोभनं, कैरवं यस्मात् तत्त्वस्व
रूपं स्फुटमाधुकैरवत्त्वंचास्ति, इति साजात्यात् कीर्तौचन्द्रत्वभ्रमेण गगन
तलवर्तिनाचन्द्रेण द्वैत भ्रमो जायते जनाना मितिभावः एवंभूतः अभिता
'भ्राजते' दीप्यते । प्रयोऽलङ्कारोपि, पद्मापतिप्रमुखदेवादिविषयिण्या विभ्रा-
वाऽनुभावाभ्यामभिव्यज्यमानाया वर्णनीयराजनिष्ठाया रतेर्भावस्य प्राया-
न्येनध्वन्यमान राजालम्बन कविनिष्ठ रत्यात्मभावस्याङ्गभावादिति ॥२४॥

भाष्ये अपवादस्य क्रमः तथाहि “वृद्धिरेचीत्यस्य अदेङ्गुण इत्यत्र, एत्ये
 धत्पूर्वस्य इत्यस्य पररूपगुणयोः, व्याङ्ग्यारिभ्यो रय इत्यस्य स्वरितञितः
 कर्त्रभिप्राये क्रियाफले इत्यत्रा पवादकत्वं द्रष्टव्यम् । न्याये गीतमीयदर्शने
 सच्छलता लक्षम् नत्र प्रमाण प्रमेय संशय प्रयोजन दृष्टान्तसिद्धान्ता वय
 वतर्क निर्णयवाद्दल्प वितण्डा हेत्वाभासच्छलजाति निग्रहस्थानानि षोड-
 शपदार्थाः केवत्योपयोगिनो महर्षिणाप्रतिपादिताः । अथ ‘जैमिनिनये,
 मीमांसायां देवाकृतेर्द्वेपिता, तत्र प्रत्याख्यातं किञ्चदेवानां शरीरम्, अन्यथा
 युगपद्विधीयमानेषु क्रतुषुदेवस्य प्रामाणिक सन्निधानं नोपपद्येत इति
 मन्त्रात्मिकैवदेवतेति । नतुलोकेषु ‘अपवादस्य, कलङ्कस्य क्रमः, निषिद्ध
 क्रियानाचरणात् अतएव नवा ‘सच्छलता, व्याजयुक्तता । नवा
 देवस्याकृतेः मूर्तेः द्वेपिता देवमूर्तयो न भव्यन्त इतिभावः साङ्ख्येच
 साङ्ख्य दर्शनएव चोऽवधारणे । पुनरर्थकोवा । ‘प्रकृतेः, मूलप्रकृतेः
 अविकृतिप्रकृतेः तत्त्वञ्च तत्त्वान्तरागम्भकत्वेसति तत्त्वान्तरानार-
 भ्यत्वम् । ‘प्रधानतरता’ सर्वोपादानता, “प्रकृतेर्महान्
 महतोऽहङ्कारः अहङ्कारात्पञ्चतन्मात्राणीत्यादि कापिलदर्शने
 सूतम् । तत्त्वान्तरानारभ्यत्वञ्च “मूलेमूलाभावादमूलं मूलम्” इति
 तत्रत्यसूत्रस्य भाष्ये विज्ञानभिष्टुणा समर्थितम् । नतु सचिवेषु प्रकृतिपदा
 मिधेयेषु प्रधानतरता, प्राधान्यमात्रस्यैव सत्त्वात् तच्च राजन्येव, निन्दि-
 तं हि राज्यं सचिवेनायत्तम् ‘योगे, योगदर्शने, अन्तरायस्य ‘श्रुतिः, श्रव-
 णम् सच एकतत्त्वाभ्यासोपयोगदर्शनाय समाधिपादे “व्याधिस्त्यानसंशय
 प्रमादालस्या विरति भ्रान्तिदर्शनानवस्थितत्वानि चित्तविक्षेपास्तेऽन्तरायाः,
 “दुःखदौर्मनस्याङ्गमेजयत्वश्वासप्रश्वासा विक्षेपसहभुवः” इति सूत्राभ्यां
 प्रतिपादितः ॥ नतुलोकेषु ‘अन्तरायस्य, विघ्नस्य श्रुतिः सर्वेनिर्विघ्नास्ति-

(५२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

अशेषरत्नानवगाहनाशयः

पयोधिवद्भूमिपतिर्विभातियः ॥ २७ ॥

विवेकेति । यः भूमीपतिः, विवेकएव प्रकाशमानत्वादाह्लादकत्वा
राकापतिः, पूर्णचन्द्रः, तेन, नत्वन्यथा 'कल्पितः, जनितः, 'उद-
वृद्धि र्यस्य सः, एतेनोदये चिरस्थेमानं द्योत्यते । सुधीवराणां, विद्वद्गण-
'व्रातेन' समुदयेन 'निषेवितः' सेवितः । तेन तेषां गुणग्राहित्वं राक्षि-
ज्यते । 'अजयः' नजयो यस्य, सः । जयनकर्मत्वाभाववानितिषा
पराक्रमातिशयोगम्यः । 'अशेषाणि, समग्राणि, अनपायानिच रत्नानिष
यद्वा अशेषाणां 'रत्नं, श्रेष्ठः । तथोक्तस्सन् 'अनवगाहनः, ज्ञानाविष-
आशयः, अभिप्रायोयस्य तादृशः नीतिमार्गगामित्वं गम्यम् । अतएव
योधिवत्, समुद्रेणतुल्यः, विभाति । सोऽपि विवेकतुल्येन राकापति-
कल्पितोदयः, 'सु, अतिशयेन धीवराणां, कैवर्तानां "कैरर्तेदाशर्धावरो
इत्यमरः । व्रातेन मत्स्यादिलाभाय निषेवितः, अजयः, अशेषरत्नः, 'अ-
वगाहनः, स्पष्टमशक्यः, 'आशयः, तलं यस्य तादृशश्चेति रूपकश्लेष-
जीवितो पमाद्वद्गारः । तथाचतेषा मद्गूर इति ॥ वंशस्थवृत्तम् "वद-
वंशम्यविलं जतोजगौ" इति लक्षणान्वयादिति ॥ २७ ॥

यस्मिन् मथिलशामके फणिपते भाष्येऽपवादक्रमो
न्याये मच्छलनाऽथजे मिनिनये देवाकृति द्वेपिता ॥
माह्वयेच प्रकृतेः प्रधानतस्ता, योगेऽन्तगयश्रुतिः
वेदान्तेऽनिकभापितेनवद्गुधा मज्जानिवाधस्थितिः । २८

यस्मिन्मिति । मथिलशामके यस्मिन् भूमेमनि 'यस्यच भागेन म
ज्जानिवाध' इत्यनेन मयमी । फणिपते शेषेनानाम्य भाष्ये न्यायानाम्य म

[illegible]

(५४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

एन्ति । वेदान्तेऽधिकभाषितेन 'बहुधा, अनेकाभिर्युक्तिभिः 'सज्जाते,
सत्तात्मिकायाजातेः 'बाधस्य, खण्डनस्य, स्थितिः तथाहि द्रव्यंमत् गुण-
स्सन कर्ममत् इति प्रतीत्युपपादकतया सत्तासामान्यं साधयन्ति वैशेषिकाः
तदसत् जात्यादावपिमत्त्वं प्रतीतेः, द्रव्यादिगतयैवसत्तयाजात्यादां त-
स्याउपादनेविनिगमनाविरहः । यच्च भागभ वावृत्ति प्रतियोगितां सम्-
न्येन ध्वंसंप्रति तादात्म्येन सतः कारणत्दमितिकारणतावच्छेदकतया
सत्त्वस्यसाधनं, तदपिनशोभनम् अन्योन्यसंश्रयापत्तेः कार्यकारणभावे नि-
रुक्ते सिद्धएवहिमत्त्वस्यसिद्धिः सिद्धेचमत्त्वे कार्यकारणभावस्य सिद्धि-
रिति अनयैवदिशाऽन्याअपिजातयो निराकार्या इत्यधिकमन्यत्रविस्तरः ।
ननु लोकेषु, 'सती, सपीचीना जाति ब्राह्मण्यादि यस्मिन् तस्य 'बाध',
पीडनम्, नहि ब्राह्मणादयः पीडयन्ते । आर्था परिमङ्ख्यालङ्कारः ।
शामने प्रकर्षानिश्चयोध्यङ्गय इति ॥ २८ ॥

सन्तापोऽभिगृहे, मदोग्नपतौ, शैलेद्विजिह्वस्थितिः

स्तेयं वामदृशोऽञ्चलस्य सुरत क्रीडाविधौप्रेयसा ।

दम्पत्योः प्रवियोगमाश्रितवतो गजोदयोऽमर्षणो

ज्जातीनां पन्ता प्रमृनसमये मानोवृषत्यागिता ॥ २९ ॥

पन्ताप इति । यस्मिन् पर्यित्तशामक इति पाक्तनश्र्योकेनानुपपत्तेः ।

'द्विजिह्वे, स्वापित श्रोताग्निगृहे, पशानसेवा सन्तापः, ननुवामगृहे, क-
र्मभावात् । गजपती 'पदः, दानगति । 'शैले, पर्वते 'द्विजिह्व, द-
क्षिण स्थितिः । ननु लोकेषु 'पदः, गतिः, 'पदो रेतविकस्त्रयोर्गो गवो रेत-
विकस्त्रयोर्गो इति वेदितं, तथा 'द्विजिह्व' करिह्व स्थितिः । तत्पदः
- २९ -

[illegible]

भारतवर्षमजानंभारतमहोत्सवानामिदम्

दिवा। अलङ्कारेन ननुते यांऽराधगध्यापनम् ।

मोऽहं मेधिलराजपुत्रादिषां निर्लक्ष्मलक्ष्मीश्वरा

देवयारमन्त्रितं यथागतिशेदे ब्रूनामि स्तनंगुणैः ॥३०॥

शास्त्रिणि । यः ज्ञानशतनाभिपः । श्रामनः पञ्चराजार्जरप भारत
 महांसस्य भारवर्षाधिदापतेः, 'अर्धना, अनपराष्टा ' मेदित्, ज्ञानंयस्य,
 निगतिदयप्रसादन इति याचन् " सविद्वन्मतिपञ्चशक्तिचेतना ,, अन्यपरः ।
 मरुति विद्याना 'संजवने, रतुशाले । " संजवने त्विदं चतुशालम् "
 अन्यपरः । 'अदनेन' प्रान्या " अयनं प्रीतीच रक्षणे " इति मेदिनी ।
 'अदायम्, निर्वायम् ' अध्यापनं तनुते, ननु केवलं करोति । अध्यापन
 प्रत्यस्य यशालाभादेः कर्तृगामित्वा दान्मनेषदम् । तथा च एनेन पूर्वोदि-
 तेष्वष्टोके स्माक्षात्परम्परयाच कवि निष्ठ उत्कर्षोध्यन्यते । सोऽहं गैथिल
 राजस्य लक्ष्मीश्वरिणस्य पट्टाहिण्याः निर्लेक्षणाः, निष्कलङ्कायाः तेन
 सर्वान् च व्यज्यते, परिकरशालङ्कारः सचरितशालित्वोपपादकत्वात् ।

(५६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

लक्ष्मीश्वरीदेव्याः सच्चरितं रत्नं पदैर्गुणैः, यथामति ग्रथ्नामि, परिणा
कङ्कारः, । एवञ्च भावध्वनिरिति ॥ ३० ॥

नास्मिन् शामति भारतावनितलं धर्मागमोद्दीयते
पूर्वस्मिन्निव दुर्वले बलवाता वाधानवाऽऽधीयते ॥
नो स्तेनाद्विपिनेपि नेत्रविकलस्यापि त्रसोद्दश्यते
नोवा प्रोषितभर्तृणा प्रियचिरक्लेशेन संयुज्यते ॥३१॥

-अथ षड्भिः श्लोकैर्भारतेश्वरं वर्णयति यस्मिन्नित्यादिभिः
अस्मिन्, पञ्चमजार्जे, भारतावनितलं शासति सति 'धर्मस्य, पुण्यस्य
'आगमः, शास्त्रम्, आचारइति वा धर्मेणसहितआगम इति वा
धर्मः शास्त्रमाचारोवेतियावत् धर्मएव फलप्रदत्वादगमोदृष्टइति वा, "।
लाशीद्रुद्रुमागमाः" इत्यमरः धर्मस्य 'आगमः, प्राप्तिरिति वा । धर्मस्य
'आगमः, ज्ञानं यस्मादिति धर्मोपदेष्टेति वा । 'धर्मस्य, क्रतोः न्यायस्य
अहिंसाया उपनिषदोवा आगम इति वा । 'धर्मस्य, धनुषः, आगमो ध
वेद इति वा । "धर्मोऽस्त्री पुण्यआचारो स्वभावोपमयोः क्रतौ अहिंसोपनि
न्याये ना धनुर्यम सोमपे" इति मेदिनी । 'हीयते, अपचीयते अभ
श्लेषालङ्कारः, पूर्वस्मिन्निव, यवनसाम्राज्यममयइव, दुर्वलेजने बलवताजने
'वाधा, पीडा, नवा 'आधीयते, क्रियते । यवनसाम्राज्ये दुर्वलोबलवतः
ऽवाध्यत इति ऐतिहासिकी प्रवृत्तिः । विपिनेऽपि किमुत ग्रामेनगरंवा
नेत्रविकलस्यापि, अन्धस्यापि, किमुत चक्षुष्मतः । 'स्तेनात्, चौरा
"चौरैर्कागादिक स्तेन दस्युतस्कर मोषकाः" इत्यमरः । 'त्रसो
भीतिः, नो दृश्यते । राजगक्षितत्वेन सर्वत्र सर्वएव निःशङ्कं सञ्चरन्तीति
भावः । अर्थापत्त्यलङ्कारोपपन्नः । "भीत्रार्थानां भयहेतुः" इत्यनेन

[illegible]

नीलमणिपद्मं नृपसखं निर्वाहय यः केशरं
सर्वोद्योगनिर्गन्धर्वणवरः श्यामावभौगोद्युधि ।
तद्वत् नयनाम्बुजना विगल द्वागङ्गे राद्युधि
निःशलोष्णसंगरणश्च विजितः क्षेप्तान् सलज्जोऽभवत् ॥

गीतादेति । सर्वेषामूर्ध्वोपतीना, भूषणा 'गर्वस्य, अभिमानस्य,
स्वर्णिणश्च, अवनमयिता यः शीघ्रित्वेनः सर्वभौमः सर्वान् भूमिषु
स्थितः सर्वदोषविनाशकः । नान्यदपि इतिदन्तमासः । युधि, सङ्ग्रामे,
'मोक्षकापिपत्य, दशरथानामदिदितदंशोद्भवलोकाधिपतेः देवरीतिनाम
प्रेमस्य ददनन्त्यस्य सत्त्वायं ननु यदाकिनं, तेन शौर्याविशयो ध्वन्यते,
'राजाः सन्दिग्धदृष्टा' इत्यनेन दृष्टुं प्रत्ययः । 'कोशरं, जर्मनाभिधान
महाजनपदस्य मन्त्राजं, ननु साधारणं राजानं 'निर्वास्यराष्ट्रात् वशिष्कृत्य,
ननुदत्ता, तस्य संशयस्य बध्वा दद्यां नयनेएव अम्युजन्मनी, रूपकालङ्कारः
साध्या दिशेपेण गन्ता 'वारा' जलाना, 'सुरैः, निर्क्षरैः, वारुणैः, नि-
ष्टामान्मकं कृष्णसर्मारणश्च वायव्यं रायुधैः पादचतुष्टयात्मकविश्वामित्र-
प्रणीतपुनर्देदप्रतिपादितचातुर्विध्यैः करणभूतैः विजितः । तथाच
परिणामाद्धारः । पारिनिर्क्षराणां विजयकरणत्वमुपपादयति रायुध
सादात्म्यारोपः । अतएव सङ्गः राक्षोविजेतृत्वेऽपि तत्पत्न्या विजितत्वात्

(5)

५: श्रीराम श्रीराम नमः ॥ ३

यदपि परिदेयाः सप्तमिं तत्रैव परिदेयोः, यदपि अत्रापि, तदपि
 यदपि, । एवमेव साव अत्रिणि ॥ ३० ॥

नाम्पिन्न शापनि भाग्यान्निवर्त्तं चर्मागमोडीयते
 पूर्वमेवन्निव दवेष्टे वरुता वागानवाग्वागते ॥
 नो म्तेनाद्विषितेपि नेत्रनिध्नस्यापि त्रयोदशते
 नोवा प्रोपितमत्रेता प्रिगचिम्हेशेन संयुज्यते ॥३१॥

अथ षडभिः श्लाघांशोरोश्वरं वर्णयन्ति यस्मिन्निग्राहिनः ।
अस्मिन्, षष्ठ्यमन्तर्जै, भाष्यावन्तिनन्तं आगति मनि 'धर्मस्य, पुण्यस्य,
'आगमः, शास्त्रम्, आचारइति वा धर्मोपदेष्टृआगम इति वा,
धर्मः शास्त्रमाचारोवेति यावन् धर्मएव फलपदत्वाद्गमोवृत्तइति वा, "क-
लाशीद्वद्रुमागमाः" इत्यमरः धर्मस्य 'आगमः, प्राप्तिरिति वा । धर्मस्य
'आगमः, ज्ञानं यस्मादिति धर्मोपदेष्टृइति वा । 'धर्मस्य, क्रनोः न्यायस्य
अहिंसाया उपनिषदोवा आगम इति वा । 'धर्मस्य, धनुषः, आगमो धनु
वेद इति वा । "धर्मोऽस्त्री पुण्यआचारो स्वभावोपमयोः क्रतौ अहिंसोपनिष
न्याये ना धनुर्यम सोमपे" इति मेदिनी । 'हीयते, अपचीयते अमङ्ग
श्लेषालङ्कारः, पूर्वस्मिन्निव, यवनसाम्राज्यमयमयइव, दुर्बलेजने बलवताजनेन
'बाधा, पीडा, नवा 'आधीयते, क्रियते । यवनसाम्राज्ये दुर्बलोवल्बता
ऽवाध्यत इति ऐतिहासिकी प्रवृत्तिः । विपिनेऽपि किमुत ग्रामेनगरेवा,
नेत्रविकलस्यापि, अन्धस्यापि, किमुत चक्षुष्मतः । 'स्तेनात्, चौगत्
"चौरैकागात्कि स्तेन दस्युतस्कर मोषकाः" इत्यमरः । 'व्रतो,
भीतिः, नो दृश्यते । राजरक्षितत्वेन सर्वत्र सर्वएव निःशङ्कं सञ्चरन्तीति
भावः । अर्थापत्त्यलङ्कारोव्यङ्ग्यः । "भीत्रार्थानां भयहेतुः" इत्यनेन

नरेशत्वञ्च, यस्येत्यनुपज्यते, अस्तीतिशेषः “ अस्तिर्भवन्तिपरः ,, इत्या-
द्यनुशासनात् । शब्दप्रतिपाद्यत्वेनैव हि भानमर्थस्योपगतमालङ्कारिकैरि-
त्यावेदितमेव, अधिकन्तु (१) पदवाक्यगत्ना ऊरेऽनुसन्धेयम् । परम्परितरूप-
कमलङ्कारः । संकरसंमृष्टिव्यवस्था मूक्षमदृष्ट्या कार्येति ॥ ३३ ॥

यस्य प्रोद्धतवैरिवर्गकमलोल्लासत्रपाकारके

कीर्तिंश्वेतमयूखमालिनि वरे विद्योतिनामोदिते ।

निश्शेषे सितमाश्रिते प्रियतमाभाशं प्रयासं विना

निः क्राम्यन्त्यभिसारिकाः क्षणदया चन्द्रातपादीप्तया ३४

यस्येति । यस्य भारतेश्वरस्य प्रोद्धतानां वैरिवर्गानां ‘ कमलाया ’
लक्ष्म्या, उल्लासएव ‘ कमलस्य, पद्मस्य, उल्लामः, उल्लसितं कमलमिति
यावत् “ कृद्विहितोभावोद्रव्यवत्प्रकाशते ” इतिन्यायात् । तस्य ‘ त्रपायाः, स-
ङ्कोचस्य, कारके, अतोऽत्यन्ततिरस्कृतवाच्यतया सङ्कोचातिशयोध्वन्यते,
प्रपायाश्चेतनैकधर्मत्वेन मुख्यार्थस्य बाधितत्वात् । विद्योतिनां मध्ये ‘ वरे,
श्रेष्ठे, सकलविद्योतिनिरूपित श्रेष्ठत्ववतीतिवा, कीर्तिरेव श्वेतमयूखमा-
ली, शुभ्रांशुः तस्मिन् नतु चन्द्रमसि, तदुदयस्य श्वैत्यानुपपादकत्वात् ।
‘ आ, सगन्ततः । उदिते सति । श्लिष्टशब्दनिबन्धनं केवलपरम्परितरूप
कमलङ्कारः । मसिद्धचन्द्रापेक्षया व्यतिरेकश्च सर्वत्रोदितत्वेन वीर्तिचन्द्र
स्याधिकात् । निश्शेषे विषये ‘ सितं, शौक्यम्, आश्रिते सति । अभित
उदितत्वस्य निखिले शौक्यत्वावहत्वेन वायपार्थहेतुकं काव्यलिङ्गमङ्गारः ।

१ तथा अस्मदादृष्टपरीतिशेषाचक्र रामराजादिपदस्य ‘ तद्भाषा नारदस्य भवति प
दमानादिनाम् विषय शास्त्रोपाध्यायानवार्थवारम्भादे र्दमिचारस्य’पक्षदया ६।
यतामन्त्रेऽन्वयवदितोत्तरत्वं निपेक्ष्यनादन्तीत्य तन्मन्त्र इत्यादि ६॥

नरेशत्वञ्च, यस्येत्यनुपज्यते, अस्तीतिशेषः “ अस्तिर्भवन्तिपरः ,, इत्या-
द्यनुशासनात् । शब्दप्रतिपाद्यत्वेनैव हि भानमर्थस्योपगतमालङ्कारिकैरि-
त्यावेदितमेव, अधिकन्तु १) पदवाक्यगत्नाकरेऽनुसन्धेयम् । परम्परितरूप-
कमलङ्कारः । संकरसंमृष्टिव्यवस्था सूक्ष्मदृष्ट्या कार्येति ॥ ३३ ॥

यस्य प्रोद्धतवैरिवर्गकमलोल्लासन्नपाकारकं

कीर्तिश्चेतमयूखमालिनि वरे विद्योतिनामोदिते ।

निश्शेषे सितमाश्रिते प्रियतमाभ्युशं प्रयासं विना

निः क्राम्यन्त्यभिसारिकाः क्षणदया चन्द्रातपादीप्तया ३४

यस्येति । यस्य भारतेश्वरस्य प्रोद्धतानां वैरिवर्गानां ‘ कमलाया ’
लक्ष्म्या, उल्लासएव ‘ कमलस्य, पद्मस्य, उल्लामः, उल्लसितं कमलमिति
यावत् “ कृद्विहितोभावोद्रव्यदत्तकाशते ” इतिन्यायात् । तस्य ‘ त्रपायाः, न-
ङ्कोचस्य, कारके, अतोऽन्यन्ततिरस्कृतवाच्यतया सङ्कोचातिशयोध्वन्यते,
प्रपायाश्चेतनैकधर्मत्वेन मुख्यार्थस्य बाधितत्वात् । विद्योतिनां मध्ये ‘ वरे,
श्रेष्ठे, सकलविद्योतिनिरूपित श्रेष्ठत्ववतीतिवा, कीर्तिरेव श्वेतमयूखमा-
ली, शुभ्रांशुः तस्मिन् नतु चन्द्रमसि, तदुदयस्य श्वैत्यानुपपादकत्वात् ।
‘ आ, सगन्ततः । उदिते सति । श्लिष्टशब्दनिबन्धनं केवलपरम्परितरूप
कमलङ्कारः । प्रसिद्धचन्द्रापेक्षया व्यतिरेकश्च सर्वमोदितत्वेन कीर्तिचन्द्र
स्याधिक्यात् । निश्शेषे विषये ‘ सितं, शौक्ल्यम्, आश्रिते सति । अभित
उदितत्वस्य निखिले शौकल्यावहत्वेन वाक्यार्थहेतुकं काव्यम् ॥ ३४ ॥

१ तत्र अन्तर्भावदृष्टरीरविशेषवाचक रामराज्यादिपदस्यरे लक्ष्

२ दमानवादिनाम् किञ्च शान्दनोधावाक्षरानवधारणत्वात्

३ रामचन्द्रकेऽन्यत्रहितोत्तरत्वं नियेयन्मध्यमादधीत्यं तत्र

ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॐ (५९)

नरेशत्वञ्च, यस्येत्यनुपज्यते, अस्तीतिशेषः “अस्तिर्भवन्तिपरः”, इत्या-
द्यनुशासनात् । शब्दप्रतिपाद्यत्वेनैव हि भानमर्थस्योपगतमालङ्कारिकैरि-
त्याद्येदितमेव, अधिकन्तु १) पदवाक्यरत्नाकरेऽनुसन्धेयम् । परम्परितरूप-
कमलङ्कारः । संकरसंमृष्टिव्यवस्था सूक्ष्मदृष्ट्या कार्येति ॥ ३३ ॥

यस्य प्रोद्धतवैरिवर्गकमलोल्लासन्नपाकारके
कीर्तिश्चेतमयूखमालिनि वरे विद्योतिनामोदिते ।
निशेषे सितमाश्रिते प्रियतमाभ्याशं प्रयासं विना
निःक्राम्यन्त्यभिसारिकाः क्षणदया चन्द्रातपादीप्तया ३४

यस्येति । यस्य भारतेश्वरस्य प्रोद्धतानां वैरिवर्गिणां ‘कमलाया’
लक्ष्म्या, उल्लासएव ‘कमलस्य, पद्मस्य, उल्लामः, उल्लसितं कमलमिति
यावत् “कृद्धिदितोभावोद्रव्यवत्प्रकाशते” इतिन्यायात् । तस्य ‘त्रपायाः, म-
ल्लोचस्य, कारके, अतोऽत्यन्ततिरस्कृतवाच्यतया सङ्कोचातिशयोध्वन्यते,
त्रपायाश्चेतनैकधर्मत्वेन मुख्यार्थस्य बाधितत्वात् । विद्योतिनां मध्यं ‘वरे,
श्रेष्ठे, सकलविद्योतिनिरूपित श्रेष्ठत्ववतीतिवा, कीर्तिरेव श्वेतमयूखमा-
ली, शुभ्रांशुः तस्मिन् नतु चन्द्रगति, तदुदयस्य श्वैत्यानुपपादकत्वात् ।
‘आ, समान्ततः । उदिते सति । श्लिष्टशब्दनिबन्धनं केवलपरम्परितरूप
कमलङ्कारः । मसिद्धचन्द्रापेक्षया व्यतिरेकश्च सर्वत्रादितत्वेन वीर्तिचन्द्र
स्याधिक्यात् । निशेषे विषये ‘सितं, शैत्यम्, आश्रिते सति । अभित
उदितत्वरूप निखिले शैवल्यावहृत्वेन वाक्यार्थहेतुकं काव्यलिङ्गमलङ्कारः ।

१ तत्र अन्तर्गतदृष्ट्यातीतिशेषश्च रामराजादिवदस्ये एतन्नामनामस्य भवति प
दभानादिनाम् विषय शब्दोपायश्चास्ति तदर्थमन्यतः इदमिवास्ति प्रसक्तम् ३१
यताप्येतेऽप्युच्यते चरिते निवेदनमप्यनन्तरं च तत्राह इत्यादि ३२ ॥

(६०)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

चन्द्रातपै रादीसया 'क्षणदया, रजन्या, अपवर्गे तृतीया, तेन निर्गमं
सफलत्वं व्यज्यते । प्रयासं धवलवसनभूषणपरिधाने तादृशकुसुमैः केश
साधने हरिचन्दनद्रवानुलेपने अन्यादृशाम्बरपरित्यागे प्रयत्नम्, व्रजन्ति
तथैव ज्योत्स्नीष्वभिसारिकाः तदुक्तं "मल्लिका मालभोरिण्यः सर्वाङ्गी
र्द्रचन्दनाः । क्षौमवत्योनलक्ष्यन्ते ज्योत्स्नायामभिसारिकाः" इति
विना, प्रियतमस्य, नतु पत्युः प्रियस्यवा तदन्तिकगमने साहसासम्भवात्
'अभ्याशं, समीपम्, "समीपे निकटासन्नसन्निकृष्टसनीडवत् । सदेशाभ्या
सविधसमर्पादसवेशवत्" इत्यमरः । अभिसारिकाः "अभिसारयते का
या मन्मथवशंवदा । स्वयं वाऽभिसरत्येषा धीरैरुक्ताऽभिसारिका" इति
दर्पणोक्तलक्षणाः । 'निः क्राम्यन्ति, निर्गच्छन्ति । समुदितराजकीर्ति
तिशुभ्रांशुदीधितिभिर्वसनादीनां धवलद्युतिशालितालाभात् । एताभ्यां
मारिका गणिकाग्रन्याएव तासां प्रयासम्यानावश्यकत्वात् । तथान क
प्रौढोक्तिमिद्वेनानेन वस्तुना अभिसारिकाया अप्युपकारित्वं वस्तु राज
यकीर्त्या व्यज्यते तेनच तद्विषयिणी प्रीतिरिति ॥ ३४ ॥

लोकानमममदयन् दिशोविशदयन् ज्योत्स्नां नयं शीलयन्
यः प्रत्यर्थिदलं तमोविदलयन् कामं समाप्स्यन् ।
मन्तापं निग्यन् सुकैवकुलान्यादीपयन् मण्डलं
मेदिन्याः प्रतिमामयन् करगतं राजश्रियं पुष्यति ॥३५॥

लोकादिति । यः पार्श्वेभ्यः, 'राशो, नृपस्य, अयन्त चन्द्रस्य वि
'सुन्दरं, वर्धयन्ति । यत्ने पार्श्वेभ्यःपार्श्वे राजश्रीत्वेन इतिभावः । अ
रयन्त्यन्तिदृष्टे दृश्यन्ते राजस्य विजेयमवाह लोकादिति । 'लोका
अन्तः, 'लोकदयन् ६६०२, चन्द्रपते पदमूल्यादयंभावति । यः सुन्दरं

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (६१)

काममदस्य भवनात् । दिशो, नतु दिशं, 'विशदयन्' धवलयन्, प्रकृते कीर्त्या, परञ्च ज्योत्स्नया, तेन कविप्रौढोक्तिसिद्धेन वस्तुनैतेन विमलकीर्तिभूयस्त्वं व्यज्यते । "विशदश्चेतपाण्डुरा" इत्यमरः । 'ज्योत्स्नां, चन्द्रिकाम्, 'नयं, नीतिम्, 'शीलयन्' कलयन् । एतच्च विशेष्यविशेषणभावात् प्रातिलोम्यादुभयत्रपक्षे योजनीयम् । विषयप्रकाशकत्वं द्वितयानुगतो धर्मः यमपेक्षते रूपकम् । एवमग्रेऽपि । 'प्रत्यर्थिनां, द्विपतां, दलं तमः 'विदलयन्, विशेषेण निराकुर्वन् । तेनच वीररसो व्यज्यते, तस्यच प्रधानध्वनिभावाङ्गतया रसवदलङ्कारः । 'कामं, 'काम्यते, अभिलष्यत इतिकामः 'इष्टः तं, समापूरयन् नतु किञ्चिदेव पूरयन् । तेन वदान्यतातिशयो व्यज्यते अन्यत्र 'कामम्, अनङ्गम्, 'समापूरयन्, समावर्धयन्, चन्द्रमसः शृङ्गारे उद्दीपनविभावत्वेन तथात्वात् । 'सन्तापं, पीडाम्, विभवनियतकलहादिजन्याम्, परत्र ग्रीष्मादिजन्याम् 'तिरयन्, निवर्तयन्, एतेन कारुणिकतातिशयो द्योत्यते । सुकैरवाणि, शोभनकुमुदात्मकानि, अधिकधवलत्वादाह्लादकत्वाच्च, नतु केवलकैरवरूपाणि, यानि 'कुलानि, पितृ मात्रादिवंशाः, तानि 'आदीपयन्, प्रकाशयन् । तथाच रूपकेण दोषस्य लवेनापि राहित्यं कुले प्रतीयते, इतरत्र कैरवाणां 'कुलानि, वर्गान्, 'सु' अतिशयेन 'आदीपयन्, प्रकाशयन् । "सुपूजायां भृगार्थानुमतिकृच्छ्रममुद्विषु" इति मेदिनी । अतएव "सुभगसल्लिकावगाहाः इति शाकुन्तलश्लोकस्य 'सु, अतिशयेन, 'भगो, यत्नो, येषु ते सुभगा स्तथाविधाश्च सल्लिकावगाहा येषु ते तथा" इत्यर्थद्योतनिकायां व्याख्यानं संगच्छते भट्टचरणानाम् । यद्वा 'सु, शोभनम् प्रकाशयन्नित्यर्थः । 'करगतं, एतन् स्थितम्, नतु करं गच्छत । 'करं, राजग्राहभागम्, 'गतम्, आश्रितमि-

(६२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

तिवा, ग्राह्यकरापादानभूतमितियावत्, सर्वएव मेदिनीमण्डलस्था एतस्मा
एव करं प्रयच्छन्तीति तात्पर्यम् । अन्यत्र 'करः, किरणः, 'वलिहस्तांशः
कराः' इत्यभिधानात् । मेदिन्यामण्डलं, नतु त्रिचतुराशेवदेशान् । 'प्रति
भासयन्, शोभयन्, अभंगश्लेषालङ्कारः । भारतेश्वरे चन्द्रमादृशं
तद्विषयककविनिष्ठप्रीत्यात्मकप्रधान ध्वन्यमानभावांगतया गम्यत
इति ॥ ३५ ॥

असौ विजयतेतरां प्रणतमौलि पृथ्वीपति
विपद्भिपुलवारिधि प्रतिविधान कुम्भोद्भवः ।
प्रतीपनृपवाहिनी प्रलयचित्रभानुः स्फुरत
प्रभृतनिधिमण्डल प्रथित राजराजोमतः ॥३६॥

अमाविति । असौ भारतेगः । विजयतेन गम् मयोत्कृष्टतया अनिग
येन वर्तते । कथमेतदिन्युत्थितायाभाकांक्षायां प्रणतेत्यादि योग्यत्वादि-
लज्जकं विशेषणचतुष्टयम् तेन न गमात्तपुनरात्तनाप्रमक्तिः । प्रामांतिन परि-
कालङ्कारः । 'प्रणतः, प्रकर्षणनतः, नकेवलं नतः । 'मौलिः, मूर्धा यस्य
नादृशः, पृथ्वी प्रतिर्यस्मिन्निति बहुव्रीहिगर्भितोऽद्वैतोद्दिष्टः । प्रभृतनृपवि-
यिर्गतः पृथ्वीपतिनिष्ठारतिभावः प्रवान-ध्वनिभावांगतया व्यप्यते, तेन
मेधा-दृष्टारः । विपदेव दुस्तरतया विपुलवारिधिः, तस्य 'प्रतिविधाने'
निगलाने, 'कुम्भोद्भवः, अगस्मिन्मुनिः । महाविपदोऽपि समुत्थयति इति
निपादः । 'प्रतीपः, विरोधिनो, ये नृपाः तेषां या 'वादिन्यः, मेताः, '
दृष्टवान्, नयः 'वादिनाप्याजगद्गत्या मेता मन्यप्रवेदयोः' ।
मेदिनी । तद्दृष्टवान् भानुः, प्रलयचित्रः कस्म्युः । यथा महाप्रभु-
नन्देव तदा शम्भवेन दित्ये नयान्, शोभयन्ति निपुमेन्यानि नयान्

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (६३)

तिभावः । वीरसो भावांगतया व्यंग्यः, तेन रसवदलंकारः । 'स्फुरन्ति,
प्रकाशमानानि, प्रभूतानि, बहूनि यानि 'निधिमण्डलानि, पद्म शंखा-
दीनि, तदुक्तं शब्दार्णवे " पद्मोऽखियां महापद्मः शङ्खो मकरकच्छपौ
मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयो नव " इति । तेषु 'प्रथितः' रूपातः,
'राजराजः' धनाधिपः । विभवातिशयोव्यङ्ग्यः । श्लिष्टशब्दनिबन्धनं
देवकपरम्परित मरिचिशब्दनिबन्धनमालारूपं रूपकमलंकारः । पृथ्वी
वृत्तेन निबद्धेऽत्र श्लोके पृथ्वीतिपदोपादानेन विच्छित्ति विशेषो भवतीति
बोध्यम् । दृश्यते चैवं गीतगोविन्द लक्ष्मीसद्गुणादौ काव्य इति ॥ ३६ ॥

आनेत्री किलकाञ्चनस्थितिमतिव्याकोशपद्माश्रिता

सा कार्तस्वरकुम्भनिर्यदमृतस्नाता सदा राधिता ।

गोविन्दाङ्घ्रि सरोजसेवनरता श्वेतांशुको दित्वरी

चक्रोद्गामिशया जनस्य जननी लक्ष्मीश्वरी राजते ॥३७॥

आनेत्रीति । किलेति निश्चये । 'काञ्चनानां, सुवर्णानां, स्थितिम्
'आनेत्री, प्रापयित्री, काञ्चनदानकर्त्रीति यावत् । 'काञ्चन' कामपि अ-
पूर्वा, 'स्थिति', मयादां, नेत्रीतिवा, तृन् प्रत्ययान्तोऽयं नेत्रीशब्दः अतो
नरुर्मपञ्च्याः प्रसक्तिः, नलोकाव्ययेत्यादिना तत्प्रतिषेधात् 'अतिव्याको-
शया, प्रकृष्टया प्राणिनामुपकारकाणिष्येति यावत्, शोभाशालिन्या, 'पद्मया'
लक्ष्म्या, आश्रिता, नतु पद्माम्, तेन गुणगणातिशयो व्यज्यते । व्या-
कोशस्य कुसुमधर्मस्य पद्मायां बाधादुक्तार्थे लक्षणायां तदतिशयः पुरोक्त
रीत्याद्योत्यते । नितान्तं काञ्चनस्थितिं प्रापयित्रीतिवा । "अतिशब्दः
प्रशंसायां प्रकर्षे लङ्घनेऽपि च । नितान्तासम्प्रतिक्षेप वाचकोऽप्येव दर्शितः,,
इति मेदिनी । निरुक्तपद्माश्रितत्वस्य पुरोदितप्रापयितृतायां हेतुतया का-

जननीव पाणिनी । दृश्यन्तेच तत्सदृशे तत्प्रयुक्तयः प्रागावेदिताः ।
जनस्येत्येकत्वमविवक्षितं प्रकृत्यर्थतावच्छेदकेऽन्वितत्वेन विवक्षितं वा,
तच्च “जात्याख्यायामेकस्मिन् बहुवचनमन्यतरस्याम्” इति
सूत्रसिद्धम् । अतएव सम्पन्नोब्रीहिरितिषाक्यस्य ब्रीहि सामान्ये सम्प-
न्नत्वबुबोधयिषया प्रयुक्तस्य उपपद्यते प्रामाण्यम् । अधिकं व्युत्पत्तिवादे
व्युत्पादितं जिज्ञासुभिरनुसन्धेयम् । राजते ननु केवलमस्ति । अत्र पूर्वो-
क्तानि विशेषणानि दीपनस्य योग्यत्वं व्यञ्जयन्ति तदाश्रयत्वोपपाद-
कानीति परिकराच्छङ्कारः । अत्र प्रकरणेन प्रथममभिधया निरुक्ते बोधे
जाते पश्चादस्य वाक्यस्यानेकार्थक पदघटितत्वाध्यवसायाज्जायमानं वक्तृ-
तात्पर्यज्ञानमभिधान्तरग्रहेण सध्रीचीनं द्वितीयार्थं व्यञ्जनयैव वृत्त्या
सम्पादयति तदुक्तम् “अनेकार्थस्य शब्दस्य प्रस्तावाद्यैर्नियन्त्रिते । एक-
त्रार्थे ऽन्यधीहेतुर्व्यञ्जना साऽभिधाश्रया” इति । सच द्वितीयार्थः ‘सा,
‘एन, विष्णुना सहिता “अकारो वासुदेवस्स्या दित्यभिधानात् । सकल
जनप्रसिद्धेति वा, कविसमवेतानुभवगोचरीकृत तत्तत्प्रकारवतीति वा ।
‘काञ्चन, अनिर्वचनीयाम् ‘स्थिति, कैवल्यरूपां मत्स्यत्मकतामिति पा-
वत् “यतोवाचो निवर्तन्ते जमाप्य मनसा सह । यद्वत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम
परमं मम” इति भगवद्गीतावचनात् । विभवानामवस्थिति वा, आनेत्री,
अतिआनेत्रीतिवा । ‘अतिव्याकोशे, प्रकृष्टविकशिते, ‘पक्षे, कमले ‘आश्रिता’
स्थिता । कार्तस्वर कुम्भेभ्यः मत्तगजोद्धृतेभ्यः निर्यद्भिः ‘अमृतैः, सुधाभिः
स्नाता, तथाहि तन्त्रे लक्ष्म्याध्यानम् “कान्त्या काञ्चनसत्तिभां हिमगिरि
प्रख्यैश्चतुर्भिर्गजैर्हस्तोत्तिष्ठ हिरण्यमामृतघटैरामिच्यमानां धियम् । वि-
भ्राणां वरमञ्जयुग्ममभयं हस्तैः किरीटोज्ज्वलां सौमावद्ध नितम्बविम्ब
कलितां वन्देरविन्दस्थिताम्” इति एवं “तथैव वैष्णवीशक्तिर्गुरुदोपरि

संस्थिता । शंखचक्रगदाशार्ङ्गखड्गस्ताभ्युपायगौ” (१) इति । यद्वा चक्रो
 द्रासिनि हरी शेते इति चक्रोद्रासिशयेति । “शयः शय्यादिपाणिषु”
 इति मेदिनी । सदाराधितेत्यादि पूर्वोक्तार्थकम् । जनस्य जननी “मार्गस्य
 लोकजननी” इत्यमरः । ‘लक्ष्मीश्वरी, लक्ष्मीरूपा ईश्वरी, राजत इति
 इह द्वितीयार्थवर्णनमसम्बद्धं माप्रमादक्षीत् इति लक्ष्मीश्वरीलक्ष्म्योत्पत्ति
 योपमानभावः कल्प्यते तदत्र लक्ष्मीश्वरी लक्ष्मीश्वरीव इत्युपमाकङ्कारोऽपि
 धा मूलं व्या व्यञ्जनया प्रतीयते, तेन चैयमवश्यमुपास्येति व्यङ्ग्यार्थमूक
 व्यञ्जनया गम्यते, एवञ्च तथैव तद्वर्णनस्यावश्यकत्वमितितद्वर्णनारम्भ
 युक्तियुक्त इति बोध्यमिति संक्षेपः ॥ ३७ ॥

आसीद्वासीभूतासीमभृमीतलासीनसातराशिभृष्टुरसुना
 सीर नासीरवदाचरिता सीमासमासंकशुकसूक्ष्मताधरी
 कृताणुप्रमुखशेसुपीकोच्चण्डपण्डीकृतोद्दण्ड प्रचण्डचण्ड
 वैतण्डिकोपमितस्रवन्मदगण्डवेतण्डपाखण्ड पापण्ड
 मण्डलाखण्डलाभिधान पण्डितप्रकाण्डकाण्डपुण्डरीक
 मार्तण्डमण्डलविस्मारित विपश्चिन्निहुरम्बमण्डनमण्डन
 प्रवेकदूरदर्शि वसुमतीशिखण्डिखण्डिकाताण्डविताण्डीर
 क्षीरनिधि तीरकुण्डलितहिण्डीर पाण्डुरानवदलित शा-

(१) नच चक्रोद्रासिशयाया. पद्माश्रितत्वायोगादयोग्यताप्रसङ्ग इति वाच्यम्, तयोर्भेदाभावात्
 तेषां स्तवेषु बहुलेषु, ब्रह्मण स्मृष्टिकर्तृत्वे विष्णो स्थात्वबोधकानामागमानामपि प्रामाण्य-
 मप्यतत्त्वोपादित वेदितव्यम् । किञ्च द्वितीयव्याख्यायां नोन्मेषोऽपि निरुक्तशङ्काया इति ॥
 (२) श्रोत्रियेति वा पाठः

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (६७)

श्वत प्रभूतभूरिभृषण विज्ञातसमज्ञाश्रित महीवितत महा
मह महिम महितसमहितपरः, शङ्कर इवापरः ।

अथ लक्ष्मीश्वरीचरितं वर्णयितुकामः कविस्तदङ्गतया तरयाः पूर्वजेषु वर्ण
नीयेषु सर्वथा प्राधान्यादादौ गोविन्दठक्कुरं वर्णयति आसीदित्यादिना ।
तत्र आसीदिति गोविन्दोनाममिथिलायामिति परेणान्वितार्थकम् । नामेति
लुप्ततृतीयान्तमव्ययम् । तथा च तादात्म्यं गोविन्दपदेन च रक्षाभिषेयो
सोध्यते, तथा च नामाभिज्ञेन गोविन्दपदेनाभिषेयो मिथिलायामासीदि-
त्यर्थः । षट्पुभिर्विशेषणैर्गोविन्दं विशिनष्टि, दासीभूतेत्यादि, दासीभूता
नतु दासीकृताः, तेन च सज्जिचयनिष्ठा गोविन्दविषयिणीरतिर्ध्वन्यते ।
चित्रमस्येन चाभूततद्वाचबोधकेन तत्र पाठात्प्रत्यातिशयस्तथा । आसीम-
भुमीतले 'आसीनाः' रिपताः, आसेश्शानचः प्रधानक्रियातुरंगेणेनासीत-
कार्थकत्वात् "धातुसम्बन्धे प्रत्ययाः" इति हि भगवतः पाणिनेरभि-
धानम् । नतु कचिदेव भूतले रिपताः । सतामिमारसात्तारताथ रास्यःसतां
विदुषां तापुनां मान्यानाञ्च समुदाया इत्यर्थः । ते यस्य स तथा ।
व्यतिरेकोऽलङ्कारः, सातराशिगतनिकर्षवर्णनात् । श्रुतिहृष्यनुमासी
एवञ्च शब्दार्थलङ्कारयोरसंख्येति, एवाध्यातुप्रदेशसङ्करक्षणे एवाधे-
माप्रवदाप्रदेशे शब्दालङ्कारयोरसंस्कारः, एतस्या संख्येतिरेकस्येति ।
भूतरेति । 'भूतुराणाम्, द्विजानाम्, 'एनासीरः, इन्द्रः । शोभिष एना-
सीरतिपाठेऽपि स्पष्टवार्थः ॥ नासीरिति । 'नासीरद्, सेनाहृत्पट्,
परान पराजेषु सेनाग्रगामिवदितियायत्, आचरिता, "सेनाहृत् इ नासी-
रम्" इत्यमरः । एतद्विरोधञ्च दृश्यमानावरीवरणद्विधादृश्यमान-
गोविन्दानुष्ठ परमाद्विरोधोपलब्धिः, अतोनाहृत्कारितम् । एतद्वि-

(६८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

मुपमाचाकङ्कारौ । तयोस्संसृष्टिः । 'अमीमा, निरवधिविषया, नचैरक्षि-
तपदत्वदूषणमापद्यते, सीमन्निनिपदस्य द्वित्रोपादानादिनिगङ्कनीयम्, एष
सीमन्नितिनान्तपदस्य परत्रमीमा शब्दस्याजन्तस्य मद्भावात् । मुख्यार्थवापे-
न परत्रभिन्नार्थस्यपदर्शितत्वेनोभयत्रसमानशब्दस्य सत्त्वेऽपि क्षत्यभावात् ।
एतेनार्थपौनरुक्त्यमपि पगस्तं वेदितव्यम् । 'अममा, अनुपमा, तेन अनम-
याङ्कारोव्यज्यते । 'असंकशुका, अनस्थिरा, "संकशुकोऽस्थिरे"
इत्यमरः । स्थिरत्वं मती द्योत्यते, नचैतस्य वाच्यभूतस्थिरभिन्नभेदाभेदव-
त्वेन व्यङ्ग्यत्वं न सम्भवतीतिवाच्यम्, स्यादेवं यदि आश्रयभेदस्य व्य-
ङ्ग्यत्वनियामकत्वं स्यात्, नचैवं, पर्यायोक्तालङ्कारव्याकोपप्रसंगात्,
किन्तु स्वावच्छेदकभेदस्य वाच्यतावच्छेदकानुयोगिकस्य, तथैव मम्पटा-
दीनां स्वरसात्, किञ्च तद्धर्मवद्भिन्नभेदस्य तद्धर्मानात्मकत्वपक्षेऽनपवाद-
मेव व्यङ्ग्यत्वमुक्तपक्षेऽपि । पर्यायोक्तालङ्कारः, स्थिरत्वेन
रूपेण विवक्षितस्य स्थिररूपार्थस्य विच्छित्तिविशेषाधायकेन
स्थिरभिन्नभेदेनाभिधानात्, "केनचिद्रूपेण व्यञ्जनया लभ्य-
स्यार्थस्य ततोऽपि चारुतररूपेण यदभिधया प्रतिपादनं, तत्पर्यायोक्तम्"
इति रसगङ्गाधरमर्मप्रकाशिकायां नामेशेन प्रतिपादनात्, अस्ति च स्थिर-
त्वापेक्षयाऽनस्थिरत्वस्य चारुतरत्वं सहृदयहृदयसाक्षिकं, भिन्नत्वञ्च
युक्त्यनुगृहीतमिति विभावनीयम् । सीमासमेत्यत्र च्छेकानुप्रासः, अपम-
पि संसृज्यते परैरलङ्कारैः । सूक्ष्मतया अधरीकृतः, नत्वधरः कृतः, अणूनां
द्व्यणुकानां 'प्रमुखः, प्रधानं परमाणु र्ययेति तादृशी, परमाणुश्च "जा-
लान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः । तस्य पष्ठतमोभागः परमाणुस्त-
म् " इत्युक्तलक्षणः । अत्र "तस्य पष्ठितमोभागः" इति पाठस्त-
द्वाभ्यां परमाणुभ्यां द्व्यणुकं, त्रिभिस्तैस्त्र्यणुकमिति हि

काणादसिद्धान्तः सत्येवं कथमिव त्रयणुरूपस्य दृश्यमानस्य सूक्ष्मरजसः
 पट्टितमभागत्वं परमाणौ भवेदित्यलप्यस्तुतेन विचारेण । शेमुखी, वि-
 शेषबुद्धिः । न तु साधारणी, शेते इतिशे, शेः विच्, मोहः, तं मुष्णा-
 नि या सादि शेमुखी, मुपस्तेये (क्रचा०) मूलविभुजादित्वात् कः, गौरादि-
 त्वाद् ङीप्, “धीः प्रज्ञा शेमुषी मतिः,, इत्यमरः । परमाण्वपेक्षया विशेष
 मतिपादनात् व्यतिरेकालङ्कारः । चित्र प्रत्ययेन चायं मत्यन्तरसापेक्षः प्र-
 तीयते । निरुक्ता शेमुखी यस्य स इति ॥ उच्चण्डेति । ‘उच्चण्डम्, शीघ्र-
 म्, नतु विलम्बेन, ‘पण्डीकृतानि, निष्फलीकृतानि, तेनच विज्ञताति-
 शयोव्यज्यते, एतदन्तरेण वक्ष्यमाणाभिधानस्य निः फलीकरणं हि नोपप-
 द्यते । पण्डपदमुख्यार्थस्य ह्रीवत्त्वस्यायथासंस्थानवत्त्वरूपस्य प्राणिधर्मस्यो-
 क्तौ वाघात्कथितार्थे लक्षणावृत्तेराश्रयणान्नैः फल्यातिशयोऽत्यन्ततिर-
 स्कृतवाच्यं ध्वन्यते, इयञ्च लक्षणा गौणी सारगोपा, सादृश्यसम्बन्धप्रयुक्त-
 त्वात् । नच नेयार्थता, निः फलेऽर्थे पण्डपदस्य रूढेः प्रयोजनस्य च दर्शि-
 तस्य सद्भावात् । अत्रापि चित्र प्रत्ययस्य प्रागुदीरित दिशाव्यङ्ग्यार्थो बोध्यः ।
 ‘उच्चण्डानाम्, उद्गताभिमानवताम्, “अभिमाने ग्रहे दण्डः,, इति विश्वः ।
 ‘प्रचण्डानाम्, प्रतापवताम्, “प्रचण्डो दुर्वहे श्वेतकरवीरे प्रतापिनि”
 इति मेदिनी । ‘चण्डानाम्, तीव्राणाम्, “चण्डस्तु तीव्रे दैत्यविशेषेच”
 इति हेमचन्द्रः । यमकालङ्कारः । ‘वैतण्डिकानाम्, स्वपक्षमसंस्थाप्यैव पर-
 पक्षमुपालभमानानाम्, “स स्वपक्षस्थापनाहीनो वितण्डा” इति प्रथमा-
 ध्यायस्य द्वितीयाह्निके महर्षेर्गौतमस्य सूत्रम् । प्रतिपक्षस्थापनाहीना विज-
 गीषु कथा वितण्डेत्यर्थः पर्यवस्यति तस्य, वितण्डया प्रवर्तमानो वैतण्डिकः ।
 स्रवन् ‘मदो, दानवारि, याभ्याममू स्रवन्मदौ, तौच ‘गण्डौ, कपोळौ, ये-
 पां ते स्रवन्मदगण्डाः, तेच ‘घेतण्डपाः, गजपतयः. ते उपमिता यैस्तेपास्,

मुपमाचाठङ्कारौ । तयोस्संमृष्टिः । 'असीमा, निरवधिविषया, नचेह की-
 तपदत्वदूषणमापद्यते, सीमन्नितिपदस्य द्विधोपादानादिति शङ्कनीयम्, पर-
 सीमन्नितिनान्तपदस्य परत्रसीमा शब्दस्याजन्तस्य सद्भावात् । मुख्यार्थवा-
 न परत्रभिन्नार्थस्य प्रदर्शितत्वेनोभयत्रसमानशब्दस्य सत्त्वेऽपि क्षत्यभावात् ।
 एतेनार्थपौनरुक्त्यमपि परास्तं वेदितव्यम् । 'असमा, अनुपमा, तेन अन-
 यारुङ्कारो व्यज्यते । 'असंकशुका, अनस्थिरा, "संकशुकोऽस्थिरे"
 इत्यमरः । स्थिरत्वं मर्तौ द्योत्यते, नचैतस्य वाच्यभूतस्थिरभिन्नभेदाभेद-
 त्वेन व्यङ्ग्यत्वं न सम्भवतीति वाच्यम्, स्यादेवं यदि आश्रयभेदस्य व्य-
 ङ्ग्यत्वं नियामकत्वं स्यात्, नचैवं, पर्यायोक्तालङ्कारव्याकोपप्रसंगात्,
 किन्तु स्वावच्छेदकभेदस्य वाच्यतावच्छेदकानुयोगिकस्य, तथैव मम्मटा-
 दीनां स्वरसात्, किञ्च तद्धर्मवद्भिन्नभेदस्य तद्धर्मानात्मकत्वपक्षेऽनपवाद-
 मेव व्यङ्ग्यत्वमुक्तपक्षेऽपि । पर्यायोक्तालङ्कारः, स्थिरत्वेन
 रूपेण विवक्षितस्य स्थिररूपार्थस्य विच्छित्तिविशेषाधायकेन
 स्थिरभिन्नभेदेनाभिधानात्, "केनचिद्रूपेण व्यञ्जनया छम्प-
 स्पर्धस्य ततोऽपि चारुतररूपेण यदभिधया प्रतिपादनं, तत्पर्यायोक्तम्"
 इति रमणद्वाधरमर्मप्रकाशिकायां नागेशेन प्रतिपादनात्, अस्ति च स्था-
 र्थापेक्षयाऽनस्थिरत्वस्य चारुतरत्वं सहृदयहृदयसाक्षिकं, भिन्नत्वञ्च
 युक्त्यनुगृहीतमिति विभावनीयम् । सीमाममेत्यत्र च्छेकानुप्रासः, अपम-
 यि संमृज्यते परैरुद्धागैः । गुदमतया मयरीकृतः, नत्वधरः कृतः, अणूनां
 द्वयशुक्रानां 'प्रमुखः, प्रधानं परमाणु र्ययेति तादृशं, परमाणुय "जा-
 बान्नरगते भानौ यन्मृद्वं दृश्यते रजः । तस्य पष्ठतमोभागः परमाणुम-
 उच्यते" इत्युक्तलक्षणः । अत्र "तस्य पष्ठितमोभागः" इति पाठश्च
 मातिक्रम्य, द्वाभ्यां परमाणुभ्यां द्वयशुक्रं, त्रिभिस्तैश्च यशुक्रमिति हि

काणादसिद्धान्तः सत्येवं कथमिव त्रयणुरूपस्य दृश्यमानस्य सूक्ष्मरजसः
 पट्टितमभागत्वं परमाणौ भवेदित्यलमप्रस्तुतेन विचारेण । शेमुखी, वि-
 शेषबुद्धिः । न तु साधारणी, शेते इतिशे, शेः विच्, मोहः, तं मुष्णा-
 णि या साहि शेमुखी, मुपस्तेये (क्रया०) मूलविभुजादित्वात् कः, गौरादि-
 त्वात् ङोप्, “धीः प्रज्ञा शेमुपी मतिः,, इत्यमरः । परमाण्वपेक्षया विशेष
 प्रतिपादनात् व्यतिरेकालङ्कारः । चि्व प्रत्ययेन चायं मत्यन्तरसापेक्षः प्र-
 तीयते । निरुक्ता शेमुखी यस्य स इति ॥ उच्चण्डेति । ‘उच्चण्डम्, शीघ्र-
 म्, नतु विलम्बेन, ‘पण्डीकृतानि, निष्फलीकृतानि, तेनच विप्रताति-
 शयोव्यज्यते, एतदन्तरेण वक्ष्यमाणाभिधानस्य निः फलीकरणं हि नोपप-
 द्यते । पण्डपदमुख्यार्थस्य क्लीबत्वस्यायथासंस्थानवत्त्वरूपस्य प्राणिधर्मस्यो-
 क्तौ बाधात्कथितार्थे लक्षणावृत्तेराश्रयणान्नैः फल्यतिशयोऽत्यन्ततिर-
 स्कृतवाच्यं ध्वन्यते, इयञ्च लक्षणा गौणी सारोपा, सादृश्यसम्बन्धप्रयुक्त-
 त्वात् । नच नेयार्थता, निः फलेऽर्थे पण्डपदस्य रूढेः प्रयोजनस्य च दर्शि-
 तस्य सद्भावात् । अत्रापि चि्व प्रत्ययस्य प्रागुदीरित दिशाव्यङ्ग्यार्थोबोध्यः ।
 ‘उच्चण्डानाम्, उद्धताभिमानवताम्, “अभिमाने ग्रहे दण्डः,, इति विश्वः ।
 ‘प्रचण्डानाम्, प्रतापवताम्, “प्रचण्डोदुर्वहे श्वेतकरवीरे प्रतापिनि”
 इति मेदिनी । ‘चण्डानाम्, तीव्राणाम्, “चण्डस्तु तीव्रे दैत्यविशेषेच”
 इति हेमचन्द्रः । यमकालङ्कारः । ‘वैतण्डिकानाम्, स्वपक्षमसंस्थाप्यैव पर-
 पक्षमुपालम्बमानानाम्, “स स्वपक्षस्थापनाहीनो वितण्डा” इति प्रथमा-
 ध्यायस्य द्वितीयाद्दिने मर्षेर्गौतमस्य सूत्रम् । प्रतिपक्षस्थापनाहीना विज-
 गोष्ठ कथा वितण्डेत्यर्थः पर्यवस्यति तस्य, वितण्डया प्रवर्तमानो वैतण्डिकः ।
 स्रवन् ‘मदो, दानवारि, याभ्याममू स्रवन्मदौ, तौच ‘गण्डो, कपोळो, ये-
 पां ते स्रवन्मदगण्डाः, तेच ‘वैतण्डपाः, गजपतयः. ते उपमिता यैस्तेषाम्,

ननु नामान्तरानाम् । अत्रानेकेष्वेव नामानि नामानि ।
 'अव्ययानाम्, निश्चिन्तानाम्, 'ममत्वं ममत्वं ह्येवमेव सारमुच्यते'
 इत्यमरः । 'गात्राणां, मन्त्रिणां, 'सर्वान्तर्यामिनीः, सर्वान्
 निगच्छते । नं वाचरन्ति ते सर्वान्तर्यामिनी इति । इति नामान्
 मण्डलानाम् 'आत्मजन्म, इत्यमरः । 'अभिज्ञाननि, इत्यमरः, तेन म-
 तथा । एवञ्च नाहमेषां मण्डलानामण्डलमिदमन्तर्यामिनीति ।
 निष्ठितस्य धर्मो अद्यावद्व्यतिशयोध्यन्ते ॥ रजितेति, मन्त्रः मन्त्रि-
 तः, 'रजितमन्त्राण्डम्, 'मन्त्राण्डमुदन्तजो मन्त्रवाचकः सन्मूनि' इति
 नामलिङ्गानुशासनम् । तेषां मण्डलैः यमकाञ्चनः । परं केन्यं
 पाण्डुरत्वात् 'पुण्डरीकं, निताम्नोजम्, तत्र 'मन्त्रेण्डन, मन्त्रः, मण्डल-
 म् । सकलस्य श्रेयसोविश्वितः प्रमोदाब्जः शोभाकारक इति भावः । अ-
 श्लिष्टशब्दनिवन्धनं केचरन्त्यरितत्वरूपमञ्जुः ॥ विष्णवेति । विष्णो-
 रिताः 'विश्वितो, विदुषो, 'निष्ठान्वर, नमूदस्य, 'निष्ठुरम्बं कद-
 म्बकम्' इत्यमरः । 'मण्डनम्, भूषणम्, 'मण्डनः, मण्डनमिश्रः, 'मन्त्र-
 कः, प्रधानं येषां ते दूरदर्शिनः, नतु माधारणाएव विज्ञानः, तेन तथा
 भूतः । निष्ठुरं दूरदर्शि प्रतियोगिकं नाहमेषाधिक्यं वा गोविन्दे व्यज्य-
 ते, सचायं मन्देहस्तद्विशोधनेः । पर्यायोक्तं यमकाञ्चलंकारौ । तयोस्म-
 सृष्टिः ॥ वसुमतीति । 'वसुमत्याः, पृथिव्याः, शिखण्डिखण्डिका, शि-
 रोमुषणम्, तेन तत्र माहात्म्यातिशयोक्त्यते । यमकाञ्चलंकारः ॥ ताण्ड-
 वितेति । 'ताण्डवितानुवृत्त्याया, क्षीरनियेः नत्वन्यस्यक्षीरे, तेन हिन्दीरे
 घावल्यातिशयोव्यज्यमानः कीर्त्तौ वैमल्यातिशयं प्रत्यापयति । 'हिन्दीर-
 तः, पुञ्जीभूतः । यो 'हिण्डीरः, फेनः, 'हिण्डीरोऽविककः फेनः, इत्य-
 ः । 'पाण्डुरया, श्वेतया, लुप्तोपमाञ्जुः । 'अनवदक्षितया,

धुरन्धरावन्ध्यसन्धानविद्धसाधुबुधितानवधिमाधुरीक-
संसिद्धिधवल तमधामधृत प्रवृद्धश्रद्धासमेधितद्वैजा-
ताभिजनप्रधानश्रोत्रियवंशविपुलमौक्तिकप्रसवावतंसः ।

विविधेति । 'विविधेन विधिना, "अनुदिते जुहोति, उदिते जुहोति
सायं जुहोति" इत्यादिना प्रमाणान्तरापाप्तकर्मेविधायकेन वाक्यजातेन, 'वि-
बोधितस्य, इति कर्तव्यतावेदकवाक्यरुहकारेण ज्ञापितस्य, विधेरंशत्रयेण
सापेक्षत्वात् तच्च साध्यं साधनमितिकर्तव्यता च । यथा चैतेषां वाक्यार्थं
बोधेभानं तथोपपादितं न्यायप्रकाशटिप्पण्यामस्माभिः ! अतएव विपर-
मपि सार्थकम् । 'विधानस्य, क्रमस्य, करणे ल्युट् । सच द्विविधः शाब्दः
आर्थश्च यत्र कल्पनागौरवं प्रसज्यते, तत्र शाब्दक्रममपहायार्थक्रमआद्रियत
इति न्यायमालायां स्पष्टम् । अनुरोधिना 'सन्ध्यात्रयस्य, प्रातरादेः, स-
म्बन्धिना तिसृषु सन्ध्यास्वित्यर्थः । 'मेध्यस्य' पवित्रस्य, 'संशोधित-
स्य, प्रोक्षणादिनोत्पादित शक्तिकस्य, इयमेवाधेयशक्तिरित्युच्यते । 'प्रा-
ज्यस्य, प्रचुरस्य, 'सान्नाज्यस्य, हविषः, "प्राज्यसान्नाज्यनिकाप्यधा-
य्येत्यादिना साधुएतत्पदम् । "सान्नाज्यं हविः" इत्यमरः । नीलतिलस्य
शितशूकस्य, यवस्य, "शितशूकयवौ समौ" इत्यभिधानात् । हवनेन
'संवर्ध्यमानात्, वृद्धिं प्रापितात्, 'सामिधेन्या' समिध आनीयन्तेऽनया' ऋचा
इति सामिधेर्नीऋक्' तया "समिधामाधानेऽप्येयन्" । "ऋक्सामिधेर्नी-
घाट्या च यास्यादग्निमग्निन्धने" इत्यनुशासनम् 'समुपधीयमानैः, वितीर्य-
माणैः । इन्धनैः 'समिद्धतरात्, अतिशयेन दीप्तात् । 'श्रीतर्पेश्वानरात्,
श्रीतर्पणैः । 'प्रोद्धतया, प्रोद्धतया, सुगन्धस्य 'धोरण्या, प्रापयिष्या, 'वा-
हनं यानं सुगन्धश्च धोरणम्" इत्यमरः । 'धूम्यया, धूमस्य संख्या, पा-
दादिस्वात् यः । 'आवदाभिः, जनिताभिः, 'बन्धुराभिः, रत्नताभिरा-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (७३)

नताभिश्च, “वन्धुरं तून्नवानतम्” इत्यमरः । धाराभिः, अविच्छिन्न
सन्तानैः, अन्धकारेण ‘अतिवन्धुरम्, अतिमनोह्रम्, धरातलं भूतलं येन
सतथोक्तः । हवनान्वयिकृतिजन्यत्वं विग्रहस्थायास्तृतीयाया अर्थः । ए-
केति । ‘सोत्सेधस्य, उन्नतस्य “उत्सेध उन्नतिः” इत्यनुशासनात् ।
धर्मध्वजस्य ‘एकः, स्वसजातीयद्वितीयरहितः, धुरन्धरः । यद्वा तादृशा
त्रिवन्धुरे धरातले एको धर्मध्वजधुरन्धरः निरुक्तहवन एतत्कर्तृकत्वस्य
व्युत्पत्तिवैचित्र्येण काभइति । अवन्ध्येति । ‘अवन्ध्यम्, अनि प्फलं, स-
न्धानं प्रतिज्ञायस्यसः । नच “वन्ध्यः पण्डः,, इत्यनुशासनं वन्ध्यपदस्या
भिधायकम् एवञ्च निःफलेतत्पदस्याभिधाशक्तेरप्रामाणिकतया क्लीब
प्रतियोगिकसादृश्यसम्बन्धस्यसत्त्वेन साध्यवसानं गौणलक्षणायाएवाश्रय-
णीयतया प्रयोजनस्य रूढेक्षविरहेण नेयार्थताप्रसङ्गः रूढि प्रयोजनान्यत-
रस्याभावे लक्ष्यार्थ बोधजनकत्वस्यैवतात्मकत्वादितिवाच्यम्, “अवन्ध्यं
दिवसं कुर्यात्” “अवन्ध्यकोयस्यविद्वन्तुरापदाम्” इत्यादि मञ्जुर मा-
माणिक प्रयोगस्योक्तार्थे दर्शनात् रूढेः, नैः फलयातिशयात्मकरूप प्रयोजन
स्पचास्तत्त्वेनोक्तदोषानवतारात् । यद्वा अवन्ध्यं ‘सन्धानं, ज्ञानं यस्य
स इति “दीपिकाद्वितयंकान्ये प्रदीपद्वितयं सुतो, स्वमतौ सम्यगुत्पाद्य गो-
विन्दश्चर्म विन्दति” इति काव्यप्रदीपान्ते स्वयमभिधानात् । विन्देति ।
‘विद्धं, सिद्धम् अक्षरीकृतमिति यावत्, “विद्धस्याद्वेधितेक्षिते सटोदा-
धितेश्चिष्टु” इति विश्वमेदिन्यौ । साधूनाम् असकृत्पूर्वोक्तार्थवानाम्, ‘सु-
धितं, ज्ञानंयेन सः भाषेत्प्रत्ययः, साधुसमधिकबुद्धिमानिति भावः ।
व्यतिरेकालङ्कारः यद्वा अवन्ध्यसन्धानेन ररिधन्द्रादिना ‘विदुः, सट्ठाः,
साधु, सम्यक् ‘सुधितं, ज्ञानं यस्य सइति । अनवधीति, अनवधिः प
च्छेदेन सीम्नावरहिता निदिउद्गावा माधुरीपरया रतयाभूता ‘सं

(७२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

धुरन्धरावन्ध्यसन्धानविद्धसाधुबुधितानवधिमाधुरीक-
संसिद्धिधवल तमधामधृत प्रवृद्धश्रद्धासमेधितद्वैजा-
ताभिजनप्रधानश्रोत्रियवंशविपुलमौक्तिकप्रसवावतंसः ।

विविधेति । ‘विविधेन विधिना, “अनुदिते जुहोति, उदिते जुहोति
सायं जुहोति” इत्यादिना प्रमाणान्तराप्ताप्तकर्मविधायकेन वाक्यजातेन, ‘वि-
बोधितस्य, इति कर्तव्यतावेदकवाक्यसहकारेण ज्ञापितस्य, विधेरंशत्रयेण
सापेक्षत्वात् तच्च साध्यं साधनमितिकर्तव्यता च । यथा चैतेषां वाक्यार्थ-
बोधेभानं तथोपपादितं न्यायप्रकाशटिप्पण्यामस्माभिः ! अतएव विपद-
मपि सार्थकम् । ‘विधानस्य, क्रमस्य, करणे ल्युट् । सच द्विविधः शब्दः
आर्थश्च यत्र कल्पनागौरवं प्रपज्यते, तत्र शब्दक्रममपहायार्थक्रमआद्रियत
इति न्यायमालायां स्पष्टम् । अनुरोधिना ‘सन्ध्यात्रयस्य, प्रातरादेः, स-
न्ध्वन्धिना तिसृषु सन्ध्यास्वित्यर्थः । ‘मेध्यस्य’ पवित्स्य, ‘संशोधित-
स्य, प्रोक्षणादिनोत्पादित शक्तिकस्य, इयमेवाधेयशक्तिरित्युच्यते । ‘प्रा-
ज्यस्य, प्रचुरस्य, ‘सान्नाज्यस्य, हविषः, “प्राज्यसान्नाज्यनिकाप्यधा-
य्येत्यादिना साधुएतत्पदम् । “सान्नाज्यं हविः” इत्यमरः । नीलतिलस्य
सितशुकस्य, यवस्य, “शितशूकयवौ समौ” इत्यभिधानात् । हवनेन
‘संवर्धमानात्, वृद्धिं प्रापितात्, ‘सामिधेन्या’ समिध आनीयन्तेऽनया’ ऋचा
इति सामिधेनीऋक्’ तथा “समिधामाधानेऽप्येषण्” । “ऋक्सामिधेनी-
घारया च यास्यादग्निमभिन्धने” इत्यनुशासनम् ‘समुपधीयमानैः, वितीर्य-
माणैः । इन्धनैः ‘समिद्धतरात्, अतिशयेन दीप्तात् । ‘श्रौतवैश्वानरात्,
श्रौताग्नेः । ‘प्रोद्धतया, प्रोद्धतया, सुगन्धस्य ‘घोरण्या, प्रापयिष्या, “वा-
हनं यानं युगपन्नञ्च घोरणम्” इत्यमरः । ‘घूम्यया, घूमस्य संहत्वा, पा-
द्यादित्वात् यः । ‘आवद्धाभिः, जनिताभिः, ‘बन्धुराभिः, उन्नताभिरा-

(७४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्रकृतिर्यस्यसः । “अवधिस्त्ववधानेस्यात्सीम्निकाळेविलेपुमान्” इति
मेदिनी । “संसिद्धिमकृतीत्वमे” इत्यमरः । धवळेति, धवळतमेत
‘धाम्ना तेजसा सात्त्विकेनवाप्रभावेणधृतः, अथवा अनवधिमाधुरीक
इतिच्छेदः, ‘संसिद्धं, मन्त्रादीनामनुष्ठानेन सिद्धं, यत् धवळतमं ध
सामर्थ्यं तेजोवा, तेनधृतइत्यर्थः “धामशक्तौ प्रभावेच तेजोमन्दिरजन्मा
इति विश्वः । “संसिद्धिः प्रकृतौ सिद्धौ” इत्यमरः । नतु धृततादृश
मेति माहात्म्यातिशयोव्यङ्ग्यः ।

नियतिभेद शलभ सुलभोच्छेदिदशाविशेषानपेक्षि
श्रोकान्त संक्रान्त संततोद्योतमानध्यान प्रदीपावधूत
मूल भूतानाद्यविद्याध्वान्ततया स्वधारिताश्रितानेको-
पनिपदङ्गनोद्गीयमानानन्दमन्दिरः ।

प्रवृत्तेति । प्रवृद्धयः, प्रौढया, श्रद्धया ‘समेधितः, समुपनिनः, प
प्रवृद्धाश्रद्धायम्ययः, अनप्य ‘अमयः, अनुकृति एवितः अनुपमर्श
मानिनियावत् । हेतानेति, ‘द्विजाने, विप्रस्य अयम् ‘अभिजनः, अ
बायः, “कृटान्यभिजनान्वयो” इत्यमरः । तत्र प्रधानम् यः श्रोत्रिय
सुगोर्दक्षितानां वंशः सपुत्रवंशोयेगुम्नस्य विपुलो मशान्, मौनितम
न्यके प्रवृत्तः भूयस्य, वशमिगेपे मौक्तिकस्यान्वयेः । श्रुष्टमवद निबन्
केवदपादपरिष्कारमपदप्राप्त इति ॥ ७ ॥ नियतीति । नियम्यन्ते, त
नियतिरिति नियतिरिति “नियतिविधिः इत्यमरः, तस्य वि
विशेषः प्रवृत्तवर्णनिरितिर्मेव अयम्, यत्तद्वः, निरन्तरं
नियन्तारं दृष्टव्यं तन्निमित्तं यामनयोग नः प्रवृत्तं यथागैः प्रवृ

(७६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

पूर्वमवधारितम् विशेषतो निर्णीतम् संगयात्परं विशेषदर्शनाज्जायमानस्य
ज्ञानस्यावधारणत्वात् पश्चादाश्रितम्, अनेकामि रूपनिपद्भिरेवाङ्गना-
भिः उद्गीयमानः, नतु कथञ्चिदुच्यमानः, आनन्दोयस्य तथोक्तम्, परि-
णामालंकारः उपनिषदिब्रह्मनातादात्म्यारोपमान्तरेण तत्कर्तृकस्योद्गान-
स्यासम्भवात् ‘मन्दिरम्, आयतनं हरिस्वरूपं येनसः । ध्यानप्रदीप सं-
क्रान्तेः पूर्वमनाद्यविद्यातिमिरावृततया साक्षात्कारासम्भवेन तादृशमन्दि-
माश्रयितुमशक्य मित्याशयः । प्रसिद्ध प्रदीपापेक्षया ध्यानप्रदीपे व्यतिरेक
प्रतिपादनेन तदभिधानोऽलङ्कारः । सहिनश्चलभमुच्छिनति, नवा ‘दशवि-
शेषं वर्तिकाविशेषम् नापेक्षते’ नवाश्रीकान्तं संक्राम्यति, “नतत्रसूयौभा-
तिनचन्द्रतारकं नेमाविद्युतोभान्तिकुतोऽयमग्निः” इतिश्रुतेः तथाच भक्ते-
रतिशयोध्वन्यते इतिकाव्यमेतदुत्तममिति ॥ ० ॥ प्रज्ञयाऽगणितः किमुत-
कृतस्पर्धः, गीर्वाणगणस्य गुरुः नतुसाधारणः ‘गीरथः, वृहस्पतिर्येन त-
थोक्तः “गीरथस्तुवृहस्पतौ” इतिलघुरत्नकोपाभिधानम् । लोकोत्तरपा-
ण्डित्यं ध्वन्यते ॥ अनुश्रितः भगीरथ दशरथयोः पथोयेन कुलोद्धारयितृत्वं
सत्यप्रतिज्ञत्वंच व्यज्यते । ‘अशिथिलाभ्याम्, गाढाभ्याम्, सौन्दर्यदप-
याभ्यांरामणीयकोपशमाभ्याम्, परिमथितः ‘मन्मथः, कामोयेनसः ।
शमादित्वादथच् प्रत्ययेदमथ इति सिध्यति कामाधिकसौन्दर्यं तद्विज्ञेत्
त्वंच व्यज्यते ॥ कृत्स्नपृथिव्याम् प्रथिता ‘अवितथा, सत्या पृथुळा पुष्टा,
नतुतन्वी, स्यास्तुः, नतुक्षणभङ्गुरासत्कथा, सच्चरित्रं यस्यसः । महामहिमत्वं
प्रतीयत इति ॥

सार्वभौमइव सदाचारेक्षणः । प्रमदवनमिव विमत्सरः ।

जामदग्न्यइव परशुभाकलनवर्धमानप्रमदः । कासारइव

(७८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

दिरनादानुलासी भयूरः । “केर्कामेघनादानुलास्यपि इत्यमरः । कृष्णे-
न सान्द्रेण, घनोपमे कृष्णेवा, अन्यत्रकृष्णेघनेश्यामे मेघे प्रणयेन प-
राधीनं हृदयंयस्येति । नयोमतम्, साहित्येअलङ्कारशास्त्रे भक्तिरनुरागो-
यस्य परत्रसाहित्ये समुदायत्वेभक्तिर्लक्षणायात्रमः । एकस्योद्देश्यतावच्छे-
दकस्यलाभायइतरेतरयोगद्वन्द्वस्यसाहित्येलक्षणाभाश्रयन्तिमीमांसकाः ।
धृतेति । धृतंराष्ट्रं राज्यंयेन तेनविदिताऽर्जुना धवला गुणस्य कीर्तिर्यस्य
अन्यत्र धृतराष्ट्रेण पाण्डोरग्रजेन विदिता अर्जुनगुणयोः पार्थभीमयोः की-
र्तिर्यत्रेति । “गुणः सूदे वृकोदरे” इतिविश्वः । सरइत्यादि । तडागादिया-
गइव समञ्जिता पूजिता ‘सौम्यस्य, सोमात्मजस्यबुधग्रहस्य अन्यत्र
सौम्या रमणीया मूर्तिर्यस्य इति । सुगतोबुद्धः “सुगतोबुद्धः” इत्य-
मरः, तस्य हृदयंरश्मयम् तस्य, अन्यत्र शोभनेन गतेन गमनेन हृदयस्य
मनसः हारी बौद्धमत निगकर्तेतभावः । ‘आम्नायो, वेदः सदा सर्वदा
लोकानां हितैकल्याणे, परब्रमतोब्रह्मगः आलोकः दर्शनम्, तदेवहितकारि-
कत्वात् हितंतत्र, परायणः । सर्वेषां वेदानां साक्षात्परम्यरयावाब्रह्मण्येवता-
त्पर्यम् । मन्त्रः मनुः प्रयोगोनुष्ठानं अन्यत्र मन्त्रो विचारः । कुपयः
निपुणः । यद्वा प्रकृते प्रकृष्टोयोगस्समाधिः प्रयोग इति

विधुखिवुधप्रसाद जनकोऽनन्त पदावलम्बनश्चकि-
न्तु सकललोक कम्पनीयोदयो मित्रपतनेन मोदमा-
नोऽमासुप्रीतान्वयश्च । अम्भानिधिरिवपरितोपित सु-
मनोव्रजः रत्नप्रवन्ध प्रसूतिश्च, किन्तु द्विजरोपागो-
चरोऽजडात्माच ॥ विलसत्कीर्तिलतोप्य विलसत्कीर्ति

समस्तमेदिनीपतिमस्तकानांसरप्रसूनानां माल्यकुसुमानां परागरागैः
अरुणतमीकृतंचरणसरसिजंयस्य, पूर्वरूपालङ्कारः तथाभूतोऽपि राज्ञस्ते
नाभिः विधूतः तिरस्कृत इतिविरोधः । राजसेन रजोगुणसम्बन्धितान्नि-
कारेणअविधूतः अकम्तिपइतिपरीहारः । विरोधाभासालङ्कारः श्लेषोपमा
वक्तव्यातेनसङ्कीर्णद्वितीयश्चसरसं कीर्णः पूर्वरूपेणापीति ॥

प्रोज्ज्वलदनेकाग्निदीपितोऽपि शीतलतरः । कुला-
चार निरतोपिकौलाचारविरतः । अगोत्रभिदपिवृद्धश्च-
वाः । संयातगौरवोऽपि द्विजराजाद्वेषणः । विश्रुतोऽपि
सबहुश्रुतः । समग्रवैष्णवाग्रणीरपि गृहीतसमांसमीनः ।

प्रोज्ज्वलदिति । प्रोज्ज्वलद्विरनेकैरग्निभिर्दीपितोऽपि शीतलतर इति
परमार्थस्तु ‘अग्निभिः, दक्षिणाग्निगार्हवत्याग्न्याहवनीयाग्निभिः
दीपितः, तेषु हवनेन श्रेयसा प्रकाशमान इति ॥ कुलेति विरोधः स्फुट्य
परमार्थस्तु कुलाचारे वंशाचारे ब्रह्माचारेवा, निरतोऽपि कौलाचारादा-
जातिभिन्नेविहितात् वामाचारात् विरतः “नकुलंकुलमित्याहुः कुलं ब्र-
ह्मसनातनम्” इत्यभिधानात् कौलाचारो यथातन्त्रे “वामे वामा रम-
कुशलादक्षिणे मद्यपातूम, अग्रेन्यस्तं मरिचसहितं शूकरस्योष्णमांस-
स्कन्धेवीणा ललितसुमगा सद्गुरुणां प्रपञ्चः कौलोधर्मः परमगहनो यो-
गिनामप्यगम्य, इति । न च “सौत्रामण्यां कुलाचारो ब्राह्मणः प्रपिवेत्सु-
म्” इति समयाचारतन्त्रे, “विनाहेतुकमास्वाद्यं क्षोभयुक्तोमहेश्वर । न-
जांमानसीं कुर्यान्नध्यानं न च चिन्तनम् । तस्मादसुक्त्वा च पीत्वा
पूजयेत्परमेश्वराम्” इति भावचूडामणितन्त्रे, “नासयेनविनामन्त्र-
म्”

इति शब्दशक्तिप्रकाशिका ॥ विगतं श्रुतं यस्यतादृशोऽपि बहुभिः श्रुतैः
 स्सहितइतिविरोधः । विश्रुतः ख्यातइति परीहारः । “वित्तविद्वानविश्रुताः”
 इत्यमरः । गृहीतः आस्वादितः भक्षितइति यावत् समांसमीनः मांसेनसं
 मीनो. मांसं मीनश्चेति यावत् येन स इति विरोधः । गृहीता आत्ता समांस
 मीना प्रतिवत्सरं प्रसविनी गौर्येनेति परिहारः । “समांसमीना सा वै
 प्रतिवर्षं प्रसूयते” इत्यमरः ॥

लोचनगोचरोनक्षिगतः । छन्दोऽनवस्थितः व्यास
 जगतीकः । आदिविद्वानिवानुशासिता शास्त्राणाम् ।
 वादरायणइव उपदेशासत्पथानाम् । मूर्तिमानभिमान
 इव मानवानाम् । अवचनः परापवादप्रतिपादनेषु ।
 अनयनोऽन्यकामिनीस्तनवदनदर्शनेषु । श्रोणोऽन्य-
 दीयद्रविणमोषणेषु । काश्मीरक्षेत्रंक्षमाकुङ्कुमप्रभवस्य ।
 क्षीरनिधिः कारुण्यामृतस्य । निकषोपलोलब्धवर्णरत्न-
 स्य । प्रियपस्थंसत्यस्य । सौहित्यं साहित्यस्य ।

लोचनेति । अनक्षिगतः लोचनागोचरइति विरोधः । अद्वेष्य इति
 परिहारः । अयंचविरोधाभासाळङ्काराध्वनिः तद्वाचकपदाभावात् । “द्वेष्ये
 त्वक्षिगतः” इत्यमरः छन्दस्सु आर्यादिषु अनवस्थितः अवर्तमानः व्या-
 साजगती तदभिधानं छन्दोयेनेतिविरोधः । छन्दसा स्वैरवृत्त्याऽनवस्थितः
 किन्तु शास्त्राज्ञयाऽवस्थितः । जगती संसारः कीर्त्याव्याप्तेनेनेतिसमा-
 धानम् । छन्दोऽपि छित्यस्वैराक्षराभिधायोरिति विश्वाभिधानात् ।
 “जगती सुवनेक्षमायां छन्दोभेदेजनेऽपि च” इतिमेदिनी ॥ आदीति

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (८३)

आदौ सर्गादौ विद्वान् कपिलोमहामुनिः । यया प्रकृपात्परं जगद्दुर्धर्षया
 विलुप्तानि प्राचीनशास्त्राणि कपिलोऽनुशासिता तथाऽसावपि । तदुक्तं “तत्त्व
 कौमुद्यां सर्गादावादि विद्वाननुभवन् कपिलोमहामुनिः प्रादुर्बभूवेति स्मरन्ती-
 ति” ऐतेन परमकारुणिकतावस्त्वलङ्कारेण व्यज्यते । वादरायणो व्यासः ।
 पूर्णोपमालङ्कारः । मानवानाम् मनुष्याणाम् । उत्प्रेक्षा लङ्कारः सदेहमिमा-
 नत्वेन सम्भावनात् । अमुनैव साभिमानतानराणामित्याशयः ॥ अवचनः
 मूकः । श्रोणः पङ्क्त्युः । “श्रोणः पङ्क्तौ” इत्यमरः । अन्यदीयस्य द्विगुणस्य
 धनस्यः मोषणे पुचोर्गेषु । उल्लेखालङ्कारः एकस्यैवानेकधोलेखात् “एकरय
 बहुधोलेखादेकस्योलेखइष्यते । गुरुर्वचस्यर्जनोऽयं कीर्तौ भीष्मशरासने ”
 इति कुबलयानन्दकारिकोक्तेः । समैव कृत्कृतमन्तपभवरय तदुत्पत्तेः शा-
 शमीरक्षेत्रम् काशमीरदेशीयकेदारम् । परस्परितरूपकमलङ्कारः । तेन समैक
 निकेतनत्वं व्यङ्ग्यम् काशमीरगदन्यत्र तदनुत्पादात् । काशयेति काशयं
 कृष्णातदेवामृतं तस्येत्यर्थः । व्यङ्ग्यन्तुपूर्वबद्धोध्यम् । निरूपोपकः परीक्षा
 प्रस्तरः । लब्धवर्णो विद्वान् तदेवरत्नं तस्य, रत्नं लब्धवर्णमपि साधुत्वज्ञा-
 नायनिरूपोपलेपरीक्ष्यते जनैरिति । पण्डितराजत्वं व्यङ्ग्यम् । परत्यम् गृह-
 म् । तदपि न सामान्य मपि तु प्रियम् । “निशान्तपस्त्यसदनम्” इत्यमरः ।
 सौहित्यं वृत्तिः तत्कारक इत्याशयः । हेतुलङ्कारः हेतुभूतरय गोविन्दस्य
 हेतुमत्तासौहित्येन सामानाधिकार्यवर्णनात् । “हेतोरेतुमत्तासार्धं वर्णनं हेतु
 शच्यते ” इत्युक्तेः ॥

उद्धारकारकः रघुविरग्रन्थानाम् । वालसुहृच्छब्द तन्त्रा-
 णाम् । सोमान्तगन्ताकलात्रामाणाम् । लाकरो विदेक
 रमणीयमणीनाम् । सुगन्धस्मितचन्द्रिकात्यवदातीकृत्-

(८४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

कुन्दकुसुममालायमानरदनच्छवि विच्छुरितवदन-
विनिर्यन्मधुरिमधुरीणाग्राम्यममृणाव्यलीकवचनाधरीभूते
धितसुधाभिमानो गोविन्दोनाम मिथिलायाम् ।

स्थविरः, प्राचीनः शब्दतन्त्रम् व्याकरणम् । बहुवचनेनानेकव्या-
करणाभिज्ञत्वं गम्यते । शैशवएवव्याकरणानां परिशीलनाद्वालसुहृद्भाषा ।
कलाग्रामः कलासमूहः । “ग्रामः स्वरेसंवसथे वृन्दे शब्दादिपूर्वकः” इति
विश्वः । सीमान्तगन्ता अन्तर्पर्यन्तस्थाभिज्ञाता । अन्योपि ग्रामसीमान्तं
गच्छतीति । आकरः खनिः विवेकएवरमणीयोमणिस्तेषाम् । उक्तरूपक
मलङ्कारः । मुग्धंस्मितरूपयाचन्द्रिकया इत्यवदातीकृतस्य कुन्दकुसुममा-
लासदृशस्य रदनस्य दन्तस्यच्छविभिः विच्छुरितात् व्याप्तात् वदनात्
विनिर्यद्भिर्निर्गच्छद्भिः मधुरिमधुरीणैः मधुरपदार्थाग्रेसरैः अग्राम्यैर्ममृणैः
कोमलैः अव्यलीकैस्मृत्यैः वचनेरधरीभूतैः एधितः प्रबृद्धः सुधाया
अमृतस्य अभिमानोयेन स तथोक्तः । स्मितचन्द्रिकेत्यत्ररूपकम् अत्यत्र-
दातीकृतेत्यत्रपूर्वरूपम् । मालायमानेत्यत्रोपमा अधरीभूतेत्यत्र व्यतिरेको
ऽलङ्कारः । पूर्वरूपाधिकरूपप्राप्तौ पूर्वरूपम् अप्यव्यदीक्षितेनप्रतिपादितम्
तन्निदर्शनं यथा ‘नीलोत्पलानिदधतेकटाक्षैरतिनीलताम्” इति ॥
इति गभर्नमेन्ट संस्कृतपाठशालाध्यापकमैथिलश्रोत्रियश्री
बालकृष्णमिश्रविचितासूक्ष्मार्थविवेचिकाटीकासमाप्ता ।

(इदमवश्यं विलोकनीयम्)

इदमवश्यं विलोकनीयम् । अत्रोक्तं प्रथमतः मयापेक्षितमित्यादि
वदन्तस्यार्थे दन्तस्य न दन्तमानया मयापेक्षितं श्रीश्रीमत्या लक्ष्मीश्वरीदेव्या महाभाषा अत्र
वदन्तस्य अत्रोक्तं मयापेक्षितं मयापेक्षितं विचिताटीका मया समाविता । अत्र पर विचिताटीका
‘इदमवश्यं विलोकनीयम्’ इति अत्रोक्तं मयापेक्षितं मयापेक्षितं विचिताटीका मया समाविता ।
‘इदमवश्यं विलोकनीयम्’ इति अत्रोक्तं मयापेक्षितं मयापेक्षितं विचिताटीका मया समाविता ।

याचैतदेव सकलेऽवनितले श्रेयः पदमिति द्योतनाय-
विहितयाश्यामसीमयेव विप्रतिपत्तिव्युदमनयमर्थया बृह-
दनं चतुष्टयेन परिवेष्टिता । हस्तिं काननानिधावनोऽध्वर-
धामधूमस्यैकतवेन परिहृतेव विभ्यता दलिताना । मलयशि-
लोचया वयवैरिव शङ्खैरुन्मत्ताश्रितैः, येन्द्रमार्गैरुर्वै रिवनप्र-
स्यावधि मधिगतैः, निदाघममयैरिवानर्थयायज्ञादयगतिनैः,
पार्थिव प्रगथनाथ पूजनैरिव ग्रथपार्थिवकृतवृद्धैः, दर्शन-
प्रबन्धैरिव विचक्षणकृतलक्षण प्रतीप्यैः, मदयहन्तैः सह-
यैः, सदाश्रवै रंजितैर्नैर्जनसकाणां । विगिञ्जितराजैर्विगिञ्ज-
ष्टिता, प्रोषित पतिकेव नैपःकेशानिष्टशय्यालम्बिता, तन्व-
विप्रयुक्ता, सुरपुरीष नाभैर्यागिता, ध्रुवराजक-समिप-
संमितिनेपुण्या बलम्वितागण्यपुण्यैर्जननिषेदिता, विष्णु-
रघलेव सुमनो नन्धुर्जावत् प्रियैर्कापैरागिताहामिता न-
विलासिनीकलिनसमाय विविपतांभीरुतांतिता, हृष्टा-
पिनगौरशुवति विघटैरिव चतुर्भुजैश्चरणात्तमलादि-
भितैः, प्रौढवपुर्वक्षोजैरिव विजैरिवितभितैः, अ-
वमनीरैश्चोऽनुभजित पद्मैश्चरणैः, पादरत्नैश्च-
श्यामलता मनोरैः ।

१. लक्ष्मीश्वरी । २. लक्ष्मी । ३. लक्ष्मी । ४. लक्ष्मी । ५. लक्ष्मी । ६. लक्ष्मी । ७. लक्ष्मी । ८. लक्ष्मी । ९. लक्ष्मी । १०. लक्ष्मी । ११. लक्ष्मी । १२. लक्ष्मी । १३. लक्ष्मी । १४. लक्ष्मी । १५. लक्ष्मी । १६. लक्ष्मी । १७. लक्ष्मी । १८. लक्ष्मी । १९. लक्ष्मी । २०. लक्ष्मी । २१. लक्ष्मी । २२. लक्ष्मी । २३. लक्ष्मी । २४. लक्ष्मी । २५. लक्ष्मी । २६. लक्ष्मी । २७. लक्ष्मी । २८. लक्ष्मी । २९. लक्ष्मी । ३०. लक्ष्मी । ३१. लक्ष्मी । ३२. लक्ष्मी । ३३. लक्ष्मी । ३४. लक्ष्मी । ३५. लक्ष्मी । ३६. लक्ष्मी । ३७. लक्ष्मी । ३८. लक्ष्मी । ३९. लक्ष्मी । ४०. लक्ष्मी । ४१. लक्ष्मी । ४२. लक्ष्मी । ४३. लक्ष्मी । ४४. लक्ष्मी । ४५. लक्ष्मी । ४६. लक्ष्मी । ४७. लक्ष्मी । ४८. लक्ष्मी । ४९. लक्ष्मी । ५०. लक्ष्मी । ५१. लक्ष्मी । ५२. लक्ष्मी । ५३. लक्ष्मी । ५४. लक्ष्मी । ५५. लक्ष्मी । ५६. लक्ष्मी । ५७. लक्ष्मी । ५८. लक्ष्मी । ५९. लक्ष्मी । ६०. लक्ष्मी । ६१. लक्ष्मी । ६२. लक्ष्मी । ६३. लक्ष्मी । ६४. लक्ष्मी । ६५. लक्ष्मी । ६६. लक्ष्मी । ६७. लक्ष्मी । ६८. लक्ष्मी । ६९. लक्ष्मी । ७०. लक्ष्मी । ७१. लक्ष्मी । ७२. लक्ष्मी । ७३. लक्ष्मी । ७४. लक्ष्मी । ७५. लक्ष्मी । ७६. लक्ष्मी । ७७. लक्ष्मी । ७८. लक्ष्मी । ७९. लक्ष्मी । ८०. लक्ष्मी । ८१. लक्ष्मी । ८२. लक्ष्मी । ८३. लक्ष्मी । ८४. लक्ष्मी । ८५. लक्ष्मी । ८६. लक्ष्मी । ८७. लक्ष्मी । ८८. लक्ष्मी । ८९. लक्ष्मी । ९०. लक्ष्मी । ९१. लक्ष्मी । ९२. लक्ष्मी । ९३. लक्ष्मी । ९४. लक्ष्मी । ९५. लक्ष्मी । ९६. लक्ष्मी । ९७. लक्ष्मी । ९८. लक्ष्मी । ९९. लक्ष्मी । १००. लक्ष्मी ।

(८६)

ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॐ

रश्मि, ७ जाड्यामङ्गला गिजिम्मा च । ८ मद्राश्वीः मतांवन्नेमिं
सत्पतिज्ञेय । ९ नवट्टिनैनिःगार्पि रक्कुटिनेय । १० राजमिः मि
राजा मिहानांगजाच । ११ तपः तपस्या गिजिम्मा, १२ उन्नमि
पूजितः, कृतशैत्यानुपनामान । १३ निमगुक्ता निमेषगुक्ता वियोगिताच
१४ नासत्यान्विता न अमत्यान्विता, नामत्याभ्यामायिनेयाभ्यामन्वि
च । १५ समितिस्मभायुद्धञ्च, १६ पुण्यजनः पुण्यान्वा रासमश्च
१७ सुमना मालती शोभनमनाश्च, १८ बन्धुजीवकः बन्धुरसकः बन्धूश्च
१९ प्रियकः प्रियः कदम्बञ्च, । २० अपराजितः नपराजितः, अपरा
जितातदभिधाः प्रमृन्नं च । २१ तीर्थः पुण्यस्थानं घट्टञ्च । २२ प
लकुचः स्थलकमलं तत्तन्नामधेयोवृक्षविशेषः अतिसुरभितः अतिमनोहः
बहुधवलकुचस्यलस्यकमलाशोभायत्रमः, अतिसुरभितः अतिसुगन्वान्वि
तश्च । २३ विभासीतमालस्तदभिधानस्तरुर्यश्च, विशिष्टयाभयादीदय
सितामालायत्रेतिच । २४ वयो विहगः अवस्थाच, २४ पल्लवः किसलयो
विटञ्च । २५ घनयासान्द्रया श्यामया लतया घनस्य मेघस्य श्यामलतया
श्यामलया च ।

वृत्तनिबन्धैरिव हीरकैर्घटित कुण्डलिकामणि मौक्तिक
मालेन्दु वदनावभासित सुन्दरीगीयमान हरिगीतमन्दो
क्रान्तैः, वैरोचनिभवनैरिव अनेकाशोर्कपल्लोशकाञ्चनम
लारोचिरञ्चिनैः, मन्दंकदाचिदमन्दमान्दोलितातिहृद्यहि
न्दोल क्रीडासंविधानवेलितैर्वहुमानचित्रित चीनैर्निचोल
रुचिचञ्चिताभिः, वसनवदनकान्त्या शातक्रतवकार्मुकसो
दामनीप्रभाविभ्रम मावहन्तीभिः पुरुषायित सुरतकेलिम-

भ्यस्यन्तीभिरिव दोलाकुतूहलकला कुशलतावलोकन सं-
जात प्रपादवनदेवता वितीर्णमौक्तिक फलवर्षणैरिव निम्नो
त्रयनश्रमस्त्रेदोन्मिषत्स्वेद कणिकाकलापैर्व्यापृत प्रतिप्रती
काभिः दृशानवयौवनेन त्रिजगतीं तृणायमन्यमानाभिर्वि-
लासिनीभिरुपशोभितैः, अविरतविरसैरविवर्तनोच्छलच्छली
कगनिकररुचिगाभिः, चक्रवर्तिस्थितिभिरिव कुवलेयासीन
पक्षिभिः वेशीवीथीभिरिवेतस्ततो आग्यमाणमधुपावलीभिः
सरसीभिर्विभासितैः, अनारतमधुलुब्धगन्धवाद घृतान्न
प्रसूनै रुपवनैः प्रियदर्शना । यत्र सदृहा अपि श्रयन्ति विदे
हताम्, कलहंता अपि नाकलयन्ति कलहंसताम्, कुशाभिन
समासीना अपि न पश्यन्ति कुशासनम्, मधुक्षीणाधिपेक्षनि
क्षिता अपि साक्षात्कुर्येति किमपि रूपम्.

२६ दीरकं वल्लं तन्मृदय एवमग्रेऽपि । २६ मन्दागान्ता २७१,
मन्दमागान्तं गमनं यमेति च । २७ बंगोद्यानवेलिद्वयिताः ।
२८ असोबोदसः शोकरत्तिश्च पलाशं पतं पलाशोपातमशवधः ।
२९ काञ्चनं काञ्चनारवाहपः सुवर्णम् । ३० भावा तदुदायः सप्तमः ।
३१ दोदित रिक्तम्, ३२ ददुमानम् ददुमून्यकम् । ३३ चीननि २४
चीनदेशेभवं घसनम् तदा सुहृदं भवति । ३५ विहासी भातः । ३६ इ-
षयम् रुदनमण्डलम्, ३७ पक्षी विरगो भिन्नः । ३८ री-
वीपी देशान्तरमन्तराद्वारम्भा, ३९ मधुपौरान्तरमण्डपोदयः २ । ४०
दिरापा भासेनवर्णयति यत्रोपाद । ४१ विदेह २४१२४१-२४२४२
मृत्ति ४५ आकञ्चयति मापुदति हृदयि ४६ ४७ ४८ ४९ ५०

सस्यभावंः सतांकलदृष्टम् । ४१ कुशासनम् कौपृथिव्यां शासनं कुशास्यासत्
 कृत्सितं शासनञ्च । ४२ मंशु सपदि, ४३ अक्षिनेत्रम् अक्षीकृत्
 ४४ किमपि रूपंकोपि गुणविशेषः भागवतं स्वरूपं च ।

सुरभिसमयेष्याषाढ विलसितम्, अधरतोऽपि दि-
 जानाममृतावापनम् याञ्चरन् सानुमिव नजहाति जा-
 त्वपिसुवर्णता, यदवनीं स्पृष्टवती सुरापगापि पावयति
 प्राणिसामान्यानि, यदीय विश्वम्भरातोऽवतताराद्यश-
 क्तिरूपा विदेहनन्दिनी, यत्राश्रितकुवेरोदवसितवशी-
 कृतचारुतोर्वशी प्रभृतिविलासिनी त्रपाकारि सौन्दर्य-
 शालिनीनां नीलनलिननिभाः कालिन्दीकल्लोल कुटि-
 लकटाक्षच्छटाः सुतनुश्रितकामिनीनां व्यपनयन्ति तनुवा-
 णतांपञ्चवाणस्य, विमुग्धमुग्धाङ्गनापाङ्ग भङ्गयइव कृतयः
 कवीनां प्रसह्यहृदयं प्रविशान्तियमिनोऽपि, यत्र च व्यसनं
 शास्त्रेषु नदुरोदरादिक्रीडासु, हृदयग्रहण ममिषोमीयपशू-
 नां, नपराङ्गनानाम्, वादिप्रतिवादिभावो विचारेषु नव्यव-
 हारेषु, कर्कशता प्रत्यग्रवधूवक्षोजेषु नान्तः करणेषु, मार्गण-
 ताकार्मुकेषु, अधीरतापिप्पलदलेषु, विपदाकलनमुपवनेषु
 अपचीयमानता युवतिमध्यभागेषु नलोकेषु, अश्रुप्रवृत्तिर्भग-
 वद्गुणाकर्णनेन, नशोकेन, श्रुतीनामाक्रमणं सुन्दरीलोचनेः,
 नपापण्डदुर्वादेः, सारसतासरसीरूपेषु नजनतासु, स्नेहवि-
 च्छेदो वैभातिकदीपभाजनेषु नदम्पतिमानसेषु, तर्कशास्त्रे-
 जातिसङ्करः, सुरतेषु अधरप्रीतिः, प्रायपि गोत्रस्वलनम् ।

सुरभिर्वसन्तोयोषिष्व, समयः कालआचारश्च, आषाढोषासोव्रतिनां
दण्डश्च । अधरतः नीचात् अधरौष्ठतश्च । द्विजानां विप्राणां रदानांच । अमृतं
मुक्तिः सुधाच, सुरार्पं गच्छति या सा सुरापगा मद्यपगामिनी सुराणामा-
पगानदीगङ्गाच । सुवर्णताकनकत्वं शोभनचातुर्वर्ण्यतासुरूपताच । उदव-
सितं गृहम्, तनुः, स्तोकः । मैथिलीपूर्वशीप्रभृत्यपेक्षयासौन्दर्येणसुतनुपतित्वे
नच व्यतिरेकः, तासांकटाक्षामदनशररूपाभवन्तीतिप्रौढोत्स्य रूपकध्वनिः ।
बिभृग्वा विशेषेणसुन्दरी । दुरोदरं धूतम् । शाब्दपरिसंख्यालङ्कारः ।
ग्रहणमचदानाय । विचारोन्मायप्रयोगः । मार्गणतावाणत्वं याचकत्वं च ।
सन्तोषातिशयः समृद्धयतिशयोवाध्वनिरितितस्यसन्देहसङ्करः । अधीरता
चाञ्चल्यमप्राज्ञत्वं च । विषद्वपक्षिपदम् आपत्तिश्च । आकर्णनेनेति तथाच
भक्त्यतिशयोव्यङ्ग्यः । श्रुतीनां कर्णानां वेदानाञ्च । सारसता सरसी-
रुहत्वम् अलसजनवत्त्वं च । रलयोरभेदात् । स्नेहःतैलं प्रेमाच । जाति
सङ्करः परस्परात्यन्ताभावसमानाधिकरणयोरेकत्रसमावेशोजातित्वबाधकेष्व-
न्यतमः, विजातीयवर्णजातत्वं च । एवञ्चनलोकेषु इतिअर्थतः प्रतीयतेभतः
आर्यपरिसङ्ख्यालङ्कारः । अधरोऽधरौष्ठोनीचश्च । नान्यदेतिआर्थः एव
मग्रेऽपि । प्रावृषि वर्षातमये गोत्रस्खलनम् हृदयस्थितयोरन्यनायकयोर्नाम
स्खलनम् मार्गस्खलनं च ।

वालिशतायामसद्भावः, अपवर्गयोर्लोभः, प्रति-
पादनेऽसन्तोषः, वृषविदूषके द्वेषः । यस्यांचक्वचिदा-
म्नायक्रियाकलापेषु(१), कचिदीशाननवानुमानेषु(२),

(९०) ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॐ

कचित् पीलुपाकप्रक्रियासु(१), क्वचित् श्रुतेरपौमेय
तायाम्(२), क्वचिद्दृष्टिमृष्टिवादे(३), क्वचित् मत्कार्य
संस्थापने(४), क्वचिन्निर्विकल्पममाधौ[५], क्वचिद्
सध्वन्यलङ्कारकवनेषु(६), क्वचिन्नागेशोक्ति प्रदी-
पोद्योतेषु(७), क्वचित् ग्रहगणगणितेषु (८) क्वचि-
त्कुण्डमण्डली निर्माणेषु, (९) क्वचिपञ्ची प्रवन्धेषु
[१०] विचारोजनानाम् ।

क्वचिद्बु द्रीय विधानमनुसेव्य केचित् भूतिभूषित
भालाद्यवयवाच्छतगक्षुद्ररुद्राक्षच्छायाविच्छुरितविग्रहा
श्शिवलिङ्गं स्नपयन्ति परमपूतघनसारघनचन्दन
शिशिर सलिलैः, क्वचिन्मार्तण्डमण्डलव्यस्तलोचना
मनागप्यस्पन्दमानापघना अनाकलितरदना ध्यानं
दधाना एकचरणाङ्गुष्ठस्पृष्टकुशासनाश्चित्रार्पिता इव
केचित् प्रजपन्तिगायत्रीं निखिलागमैकावलम्बनीम्,
क्वचित् बहुमान्यमन्येन्यासं विन्यस्यन्ति, । क्वचिद्ब्र-
ह्मपरायण पुराणानि केचिद्वाचयन्ति, क्वचित्स्वाहा-
कारैः क्वचित्स्वधाकारैः क्वचिच्च वषट्कारैः केचिद्ग-
गनवल्यं वाचालयन्ति, किं बहुना, येन च कामपि

१ काणाददर्शनस्य । २ मीमांसायाः । ३ वेदान्तस्य । ४ सात्यस्य । ५ योगस्य ।
६ साहित्यस्य । ७ व्याकरणस्य । ८ ज्योतिषस्य । ९ तन्त्रस्य । १० पत्नीशास्त्रस्य ।
एतेनसकलशास्त्राभिज्ञजनवत्स्य व्यज्यते ।

सुपमां सुखं विलोकमानास्तत्र जनाःस्पृहयन्तिनाम-
र पुरायाऽपि ॥

बालिशता अज्ञता । असज्जावः असाधुता अनस्तित्वंच । नतुजने-
ष्टमः । अपवर्गयोः परापरमुद्यत्योः, नतुधनेसः । मतिपादने दाने ज्ञा-
नेच, नतुतत्र । दृष्टविद्रूपके धर्मविरोधिनि, नतुसाधौ 'आम्नायोवेदः,
ईशानः शिवः । नवानुमानेषुनवसंख्याकेषुनूतनेषुचतेषु पीलुः परमाणुः,
दृष्टौमत्पांसृष्टिःदृष्टिः सृष्टिस्तस्यावादः एतदेवपरमरहस्यंवेदान्तस्य, सत्
नित्यम्, निर्विकल्पः असम्प्रज्ञातः, नागेशः शेषः, घनसारः कर्पूरम्, अ-
पघनोऽवयवः, न्यासम् मातृकादिकमागमोक्तम्, सुपमापरमाशोभा । इति
मिथिञा वर्णनम् ॥

योऽनुवासरमवसरेहरेः पूजनस्याधिमहारजनभाजन
कलङ्कविकल कलकलाधर विमल सकलहरिद्विसृत्व-
रपरिमलमेदुर हरिचन्दनद्रवं परेणपात्रेणापिधायाध्या-
त्मदृग्ध्यातवेदत्रातविन्दु वृन्दारकवृन्दवृन्दारक पुर-
न्दरोपहत मन्दमन्द स्यन्दि सुन्दर मकरन्द विन्दुम-
न्दिरोपगुञ्ज दिन्दि निदर पुञ्जमञ्जुमन्दारमरन्दा
ति रोहित वृन्दारिकादिवन्दारुत्रिजगदिन्दिगावन्दित
शारदारविन्द श्रीमन्मुकुन्दचरणद्वन्द्वलाञ्छनं निःपक्ष-
स्पन्दं स्वच्छन्द मौपम्यक्षेत्रीकृत शरदाशतच्छदेना-
क्षियुग्मेन क्षिप्ततरपत्रेऽतिक्षितिक्षणं तत्रसंवीक्ष्य क्ष-
पितानूनकाक्षेपक्षेणतपः क्षामक्षामतामुपेयुषा यो-

गिच्छत्रलक्षेणप्रतनुविटपिनेव जटापटलान्वितेन पा-
 टीरद्रुमेणेव नागनिर्मोकधवलीकृतकलेवरेण निवात-
 प्रदीपेनेवनिश्चलेन, विधिनेवपद्मासनस्थायिना,
 हरेणेव निगृहीत विषयिणाऽपि दुरासदं परमतमान-
 न्दसन्दोहकन्दलं विन्दन् चिरमर्चनमचर्चिकांचकार ।
 यस्याभ्याशमासाद्यापश्यन्तश्शरणान्तरंवनदहनतुलि-
 ततापत्रितयात्यन्तिकोपशमननिदानोत्कलिकाकला-
 पाकुल विकलमानसाः कलिकलांकलयतो विततानु-
 भावां प्रहीणवैष्णवमनुप्रादेशनस्यानुक्रोशेन सरहस्या
 मधिगम्यागमीयदीक्षामञ्जसा समानयन्नात्मनःस्पृ-
 हणीयसिद्धिसमृद्धि शालितां वादविजितसभाजनस-
 भावजनता हितसभाजन सभाजन मिथिलाभिजनाः
 पुरातनाः । सविधवर्तिनिच यदीयवदने प्राद्रवन् चन्द्र-
 कान्तदृपदोऽपि । यञ्च स्वकीयरामणीयक प्रवणी-
 भृतां नाकामयन्निकामं स्पृहयन्तीमपि परकामिनीम् ।

महारजनं सुवर्णम्, मेदुरः सान्द्रः । विन्दुः क्लृप्ता, । वृन्दारकोदे
 मुख्यश्च । इन्दिन्दिरः भ्रमरः, मन्दारः पारिजातः, मरन्दः पुष्परमः,
 रदा शरत्समयः । अतिक्षिति, क्षितिपति क्रान्तम्, । सण उत्तमकः, छत्रं श्रेष्ठ
 प्रतनुः विपुलः । जटा, लम्बकचः । शिफाच, पद्मामन मामनविशेषः पद्मा-
 वमामनश्च, विषयि इन्द्रियम् । विषयीकामश्च । कन्दलं मूलम्, अर्चनमः
 चिक्रा प्रशस्तपूजनम् । मनुः मन्त्रः । प्रादेशनं दानम्, अनुक्रोशोदया,

असा शीघ्रम्, सभाजनः सभायास्तदसोजनः सभाजनंसपर्या, भाजनं
पात्रम्, सभाजननं सट भायाः दीप्ति जननेन, अभिजनोदेशः, वदन इति
प्रौढोक्त्या रूपकालङ्कारध्वनिः ।

अथासौकदाचिदतिविस्तारविकरालदुःपार संसार
कान्तारस्फुरत्स्फारसार सपरिवार मारप्रवेकनैकप्रकार-
साभिहारमञ्चार श्वापदवारकवलितारालजङ्घाल नि-
स्त्रास प्राप्तविषय महाशीविषग्रासजासोढप्रौढतर
कालकूटज्जालालजटाल जीवजातपरीतापकलापा-
त्यन्तिकनिवर्तनैकसाधनदर्शनम्, नैदाघदिवसाव-
सानजायमानपावमानापदिशलसद्दनघटामेव क-
च्छयां वैभवाश्रितोऽपि मूर्तिमादधानम्, कलुषे सरोष
मिव निस्तललोचनम्, करचरणयोरथनासादनेनत्या-
गयोग्यतामुपदिशन्तमिवकैवल्यपरिपन्थिभूतादानक-
र्माशेषविषयेषु, चक्रेणापिदण्डाकृतिमुपेयुषा सुदर्शनेन
प्रोद्भासितम्, कृतात्मानमिवसुभद्रान्वितम्, अन्तःस्थि
तजगन्निवासतरयांस्वधीरितिगिरिगणाग्रगणनीयगौरवे,
नवकामिनीमानइव प्रोन्नतमेघनादपरिगोपिते, महा
गहनइव मातङ्गदुग्धमकेशरिसुगक्षिते, कनकाचलइव
वैकुण्ठाधिष्ठितोत्तरप्रदेशे, अनङ्गेनापिभीमेन, प्रत्या-
ख्यात सुगतेनापि सुगतशालिना, निर्मापिते, कलु

ञ्चनकमलाञ्जिते काञ्चनेनकमलयालङ्ग्याकमलेनचाञ्जिते । वाणस्त-
जा, उपा, मदनमोहनोदेवः पित्तलविग्रहः, मदनस्य अनिरुद्धस्य मोहनं वि-
त्रलेखावचनप्रपञ्चश्च, प्रमदा जगन्नाथदासी युवतिश्च, तस्याः शतैः नि-
वितम् । प्रावृषेण्यम् प्रावृषिवर्षासमयेभवम्, नीलाचलावस्थितम् नील-
चलः नीलपर्वतनामधेयोगिरिः अन्यत्र नीलाचला श्यामावनी, तत्रावस्थि-
म् । विमलासन्नम् विमलादेव्याः । परत्र विमलस्य निःपापस्यासन्नम्
“ विमलाभैरवीतत्रजगन्नाथस्तुभैरवः ” इत्यागमाभिधानम् । सरस्व-
समुद्रः सरसश्च, अमर्देशातिरिच्यमानम् अन्तिकमितियावत् । श्रुतिश्च
विलसितम् श्रुतिशतं वेदशतंच, तेनतत्रवा विलसितम् । प्रधानं प्र-
मुख्यञ्च । दक्षिणाशादक्षिणाया द्रव्यरूपाया स्तृष्णा, दक्षिणा दिशा
सङ्कर्षणोवल्कदेवः । सनाथः नाथसहितः युक्तश्च, अनाथोनाथरहितोऽन-
ष्टश्च । उदन्तोवृत्तम् । तिष्ठामीत्यादौ सर्वत्र वर्तमानसामीप्ये लट् ॥

मसौ निवर्तयितुं नैव प्राभवत् । अनन्तरं चादसीया-
मवसायातिभूमि मुत्कलिकां कथंकथमपितैरनुज्ञात-
गमनोऽनुकूलचन्द्रतारकेन्द्राधिष्ठितोच्चस्थशुभग्रहसमु-
दये चरलभावलमेशोभनवासरे प्रयाणाय विशेषेण भग-
वतः पर्यातितानसपर्यां पर्यायेण, जजापचेष्टमनुम्, प-
पाठचभूयांमिस्तोत्राणि, जुहावचदक्षिणाश्रितशिश-
संस्कृतेजातवेदसिहविश्रान्तिमन्त्रैः, विदधौ चान्या-
न्यापिकल्याणोदकाणिकर्माणि, ततः प्रवर्धितो राशि-
भिर्गाशिपां गुरुभिरभिवादितैः, अभिनन्दितस्समाजै-
स्सामाजिकानाम्, साशुधारं समालिङ्गितो वयस्यैः

कभिदा बहुप्रकारा, अप्रतिपत्तिर्भङ्गता, मुग्धता नवयौवनत्वं मोक्षतं
विशेषणद्वयेन अद्भुतसौन्दर्यातिशयोव्यङ्ग्यं, शातजातम् सुखसंहतिः
स्मरणीयतामुपगतेषु व्यतीतेषु । पर्यायोक्तमलङ्कृतिः ॥

तेषु वासरेषु नातिदूरेऽतिमेदुरपृथुलसालप्रभृति विटपि
नां पटलैर्नभस्वतान्दोलितेन मूर्ध्ना निवारयद्विस्मिदवी
य सामपि पथिकानामागतानि, सुपर्णतथोचितहरिवि-
लसितैः, लक्ष्यतया निपतितपतत्रिभिः, रविरथपथं
प्रतिरोद्धुमभिलषद्भिरिव कौतूहलेन, वारणमदवारण
प्रसवजाम्भवानोकह निवह दीर्घताभिमानं तिरस्कृ-
वर्णैः परिवृताम्, शिखरिविस्तारितशिखण्डशिखिग-
णमयूखजनिताशेष सुषमाम्, राजसम्पदमिव प्रभूत
कनकखर्जुरावर्जिताम्, सत्पुरुष क्रियामिव 'दर्शित
वंशोन्नतिम्, प्रावृषमिव घनाघनघनगर्जिताम्, स-
म्परायक्रियामिवस्वच्छन्द खड्गवर्गाम्, केशवकरा-
कृतिमिव सारङ्गसङ्गताम्, भारतकथामिव भीम
सत्त्वकृत पराक्रमां कीचकविलसितां सकौस्वाञ्च,
राजरमणीमिव सहचरी शतसेवितां नवप्रवालरुचिां
प्रोद्धतमदनांच, मानवविवर्जितामपि पुंनागनिपेवि-
ताम्, अनलकामपिरम्भासम्भाविताम्, नेत्रविकला
मपिसनेत्राम्, कुष्ठाश्रितामपि वेदनानभिज्ञाम्, वा-
हिनीरहितामप्यनेकगुल्मिनीम्, क्वचिद्विवौकोभिरि-

वामृताशनैर्विहङ्गमैः कृतकलकलाम्, क्वचित्-
लाहकै रिव वनगतै स्समदश्वापदकुलै विहित निश्वा
नसंकुलाम्, क्वचित् विस्मितामिवशब्दरहिताम्,
क्वचित् जरदजगर प्रमुखविषधरवर निकर शरण्या
मरग्यानीं दूरतो ददर्श ।

निवारयद्भिरिवेत्युत्प्रेसा, एवमभिलषद्भिरिवेत्यत्र । सुपर्णः शोभ-
नपर्णाश्रयः वैनतेयश्च, हरिः कपिविष्णुश्च । लक्ष्यता दृश्यता शरव्यताच,
तत्रो पक्षीवाणश्च । वारणोगजः, निवारकश्च, जाम्बवानोकहोजम्बुवृक्षः
शेखरीपर्वतः, कनकोधस्तुरः कनकं सुवर्णं च, खर्जूरः तदभिधोवृक्षः
खर्जूरं रजतं च, वंशोवेषुः कुलं च । घनाघनः घातकगजः वर्षदम्भोदश्च,
घनसान्द्रम् । सम्परायो युद्धम्, खड्गः गण्डकः असिश्च सारङ्गो मृगः
वेष्यां धनुश्च । भीमसत्त्वम् भयानकोजन्तुः भीमसेनस्पवल्च । कीचकः
तन्नामधेयोवीरः अनिलाघातेन शब्दकारकोवेषुश्च, कौरवः दुर्योधनादिः
मृगालश्च । सहचरी अनुचरी पीतकुरण्टकश्च । प्रवालः कितलपः विद्रु
पश्च । मदनोमखकवक्षः कामश्च । पुं नागः प्रशस्तः पुमान् केसरश्च ।
अलका कृपेपुरी, रम्भा स्ववैश्या कदर्लावृक्षश्च । नेत्रं नयनं सरित् द्रुम
मूलं कस्तूरिकामृगश्च । कुण्डो घ्रणविशेषः भेषजविशेषः आमलकीच,
गुलिमनीकतेतिवा, वहनं वाहः सोऽस्त्यस्मिन्नितिवाहि, नीरंजलं हितं यस्या
मितिवा । अमृताशनैः आमल की भक्षकैः सुषामक्षकैश्च बलाहको मेघः,
वनगतैः वनं विपिनं गतैः प्रासैः, गतंवनं जलंयेभ्यस्तैः त्यक्त जलैरिति
पावत् । जातिकालमुखादिभ्यः परानिष्ठावाच्चेति वार्षिकानिष्ठान्नस्यपरत
निपातः । जरदजगरः वृद्धोऽजगरनाम धेयस्सर्पः । अरण्यानी मदारण्यम् ॥

अचिन्तयच्चेतमिनिः मगालोऽय भीमनां तदीयाः।
 साकं चक्रवाकविलगितेन आतगप्रतापेन कौशिककु-
 क्लेशेन नवनवविनोदेनन पण्णितोदिवमः, मधुपा-
 जिराजित राजीवगदनान्तर्विलम्बवमन्त्रनां विगय-
 निपेवणादिवकरैः, वरुणवग्गणिनी प्रोक्षितवक्षोऽङ्ग-
 क्षितिधर निगीक्षणप्राप्त प्रौढगाढानुगगादिव, समुदे-
 योन्मुखद्वेषणपीयूषकम्मस्य केसव कदम्बकावलोकनो-
 द्यद्रोपादिव, कालमेपिकारुणतामुपयाति मैद्विरमहः ।
 आश्रयितु मनुमगतिमूरः परिहृतवसुतवेवस्तनाकरम्,
 निजनिजशावकावनाय गृहीतविधसआवासनीड-
 दिशमभिप्रयन् प्रयातिगणः खगानाम्, तदिहैवपुरि-
 पुरोभागमलङ्कुर्वति दिव्यदिव्योपपाद कोदवपिते-
 नेतव्या यामिनीति, तनस्तत्रैव समुपेत्यावस्थिति-
 मकरोत् । तदनु भगवती सुपास्यसन्ध्यां विधानैरप-
 चित्यचेत सानन्येनदेवं केवलं प्रत्यवसिततदीयनैवे-
 द्यो विभाव्य वालामिव तरुणिमानमाश्रयन्ती, प्रवर्त-
 मान यामिकजनारवां युवतिमिव कलाकरगृहीतम-
 ध्याम्बरां रजनीमवलम्बित कम्बलासनः सुखं सुष्वा-
 प । अथ त्रियामापरिणतिं पिशुनयति मागधनिकर-
 इव कलरुतं कलयति कलविद्धे, सान्द्रनिद्रान् प्रबोध-
 यितुमिव प्रणिनददतितारं दयिताश्लेषसुखद्वेषकारके

अचिन्तयच्चचेतसिचिरं समालोच्य भीमतां तदीयां,
 साकं चक्रवाकविलसितेन आतपप्रतापेन कौशिककुल
 क्लेशेन नववधूविनोदेनच परिणतोदिवसः, मधुपरा
 जिराजित राजीवसदनान्तर्विलसन्नवमधूनां विराय
 निषेवणादिवकरैः, वरुणवरवर्णिनी प्रोक्षितवक्षोरुह-
 क्षितिधर निरीक्षणप्राप्त प्रौढगाढानुरागादिव, समुदे-
 योन्मुखद्वेषणपीयूषकरसख कैरव कदम्बकावलोकनो
 द्यद्रोषादिव, कालमेषिकारुणतामुपयाति मैहिरंमहः ।
 आश्रयितु मनुसगतिमूरः परिहृतवसुनषेवरत्नाकरम्,
 निजनिजशावकावनाय गृहीतविधसआवासनीड
 दिशमभिप्रयन् प्रयातिगणः खगानाम्, तदिहैवपुरि
 पुरोभागमलङ्कुर्वति दिव्यदिव्योपपाद कोदवमिते
 नेतव्या यामिनीति, ततस्तत्रैव समुपेत्यावस्थिति
 मकरोत् । तदनु भगवती मुपास्यसन्ध्यां विधानैरप-
 चित्यचेत सानन्येनदेवं केवलं प्रत्यवसिततदीयनैवे-
 द्यो विभाव्य वालामिव तरुणिमानमाश्रयन्तीं, प्रवर्त
 मान यामिकजनारवां युवतिमिव कलाकरगृहीतम-
 ध्याम्बरां रजनीमवलम्बित कम्बलासनः सुखं सुष्वा-
 प । अथ त्रियामापरिणतिं पिशुनयति मागधनिकर
 इव कलरुतं कलयति कलविद्धे, सान्द्रनिद्रान् प्रबोध
 यितुमिव प्रणिनददतितारं दयिताश्लेषसुखद्वेषकारकं

ताम्रचूडे, शीतलं वहति मृदुलमनारतकेलिश्रमस्वे-
दशीकरनिकरापहारिणि चुम्बितचन्दने परिशीलित-
कावेरिणिमलयसमीरणे, प्रियागमनप्रतीक्षाक्षपिता-
खिलक्षपाक्षणाहितामर्षेणैव

अचिन्तयदिति, यामिनीतीत्यनेनान्वेति । साकमिति सहोक्तयक-
ङ्कारः । कौशिकः बलूकः । दिनेतस्य दर्शनशक्तितिरोभावात् क्लेशः ।
विनोदेनेति, रात्रौ तासां क्लेशोदयादिव स एव सुखम् । मधुपोऽमरो मध्यपश्च
राजीवं कमलं तदेव सदनम् । मधूनां पुष्परसानां मद्यानाञ्च, करैः किर-
णैः हस्तैश्च । मद्यालये मद्यपास्तीष्ठन्तीति वस्तुस्थितिः । वरुणवरवर्णिनी
पश्चिमाशा, प्रोच्छ्रितः उत्तुंगः । श्लेषादिति अन्योऽप्यरातिसपक्षोऽस्ति
विलोक्य कृप्यतीति । काळमेविका मंजिष्ठा । इमा अलंकारान्तरोत्था उ-
त्प्रेक्षाः । शूरः सूर्योऽवीरश्च, वसुकान्तिर्धनं च, रत्नाकरः समुद्रः रत्नाना-
गाकरो भूपतिश्च, वीरस्नेजमारहितोज्ज्वालो प्राणान्जहाति, इतरोऽपि
विगलितविभवः प्रभूतरत्नं पुरुषमाश्रयते । विघसः स्वभुक्तावशिष्टः ।
दिव्य उत्तमे, दिव्योपादकादेवः । अपचित्य सम्पूज्य । प्रत्यवसितं
उक्तम् । कलाकरश्चन्द्रः सकलफलाभिघ्नो नायकश्च, अम्बरमाकाशं व-
र्तनं च । पिशुनयति सूचयति, कलरुतं मधुरशब्दम् । कलविद्धे चटके ।
ताम्रचूडे कुक्कुटे ।

लोहितवदनायां पुरोदिगङ्गनायाम्, सुचिरसमय
व्यापृतनिधुवनरमसपरिश्रमालस विलासिन्यामिव
निमीलित प्रायतारकायां क्षणदायाम्, परिव्राजकेष्विव
स्निग्धदशाविधुरितेषु भ्राम्यत्सु विशिखेषु प्रदीप नि

अचिन्तयच्चचेतसिचिरं समालोच्य भीमतां तदीयां,
 साकं चक्रवाकविलसितेन आतपप्रतापेन कौशिककुल
 क्लेशेन नववधूविनोदेनच परिणतोदिवसः, मधुपरा
 जिराजित राजीवसदनान्तर्विलसन्नवमधूनां विषय
 निषेवणादिवकरैः, वरुणवरवर्णिनी प्रोक्षितवक्षोरु-
 क्षितिधर निरीक्षणप्राप्त प्रौढगाढानुरागादिव, समुदे-
 योन्मुखद्वेषणपीयूषकरसख कैरव कदम्बकावलोकनो
 द्यद्रोषादिव, कालमेषिकारुणतामुपयाति मैहिरंमहः ।
 आश्रयितु मनुसरतिमूरः परिहृतवसुतषेवरत्नाकरम्,
 निजनिजशावकावनाय गृहीतविधसआवासनीड
 दिशमभिप्रयन् प्रयातिगणः खगानाम्, तदिद्वैवपुरि
 पुरोभागमलङ्कुर्वति दिव्यदिव्योपपाद कोदवभिते
 नेतव्या यामिनीति, ततस्तत्रैव समुपेत्यावस्थिति
 मकरोत् । तदनु भगवती मुपास्यसन्ध्यां विधानैरप-
 चित्यचेत सानन्येनदेवं केवलं प्रत्यवसिततदीयनैवे-
 द्यो विभाव्य बालामिव तरुणिमानमाश्रयन्ती, प्रवर्त
 मान यामिकजनारवां युवतिमिव कलाकरगृहीतम-
 ध्याम्बरां रजनीमवलम्बित कम्बलासनः सुखं सुष्वा-
 प । अथ त्रियामापरिणतिं पिशुनयति मागधनिकर
 इव कलरुतं कलयति कलविद्धे, सान्द्रनिद्रान् प्रबोध
 यितुमिव प्रणिनददतितारं दयिताश्लेषसुखद्वेषकारकं

ताम्रचूडे, शीतलं वहति मृदुलमनारतकेलिश्रमस्वे-
दशीकरनिकरापहारिणि चुम्बितचन्दने परिशीलित-
कावेरिणिमलयसमीरणे, प्रियागमनप्रतीक्षाक्षपिता-
खिलक्षपाक्षणाहितामर्षेणैव

अचिन्तयदिति, यामिनीतीत्यनेनान्वेति । साकमिति सहोक्तयक-
कारः । कौशिकः बलूकः । दिनेतस्य दर्शनशक्तितिरोभावात्तत्त्वलेशः ।
विनोदेनेति, राज्ञोतासां लेशोदयादिव स एव सुखम् । मधुपोऽमरो मधुपश्च
राजीवं कपलं तदेव सदनम् । मधूनां पुष्परसानां मद्यानाञ्च, करैः किर-
णैः हस्तैश्च । मद्यालये मद्यपास्तीष्ठन्तीति वस्तुस्थितिः । वरुणवरवर्णिनी
पश्चिमाशा, प्रोच्छ्रितः उत्तुंगः । शेषादिति अन्योऽपरातिसपक्षोन्नति
विलोक्यकृष्यतीति । काळमेपिका मंजिष्ठा । इमा अलंकारान्तरोत्था व-
त्पेक्षाः । शूरः सूर्योऽवीरश्च, वस्तुकान्तिर्धनं च, रत्नाकरः समुद्रः रत्नाना-
माकरो भूषतिश्च, वीरस्तेजसारहितोज्ज्वालो माणान्जहाति, इतरोऽपि
विगलितविभवः प्रभूतरत्नं पुरुषमाश्रयते । विघसतः स्वभुक्तावशिष्टः ।
दिव्य उत्तमे, दिव्योपादको देवः । अपचित्य सम्पूज्य । प्रत्यवसितं
शुक्तम् । कलाकरश्चन्द्रः सकलकलाभिज्ञो नायकश्च, अम्बरमाकाशं व-
सनं च । पिशुनयति सूचयति, कलरुतं मधुरशब्दम् । कलविज्ञेयवटके ।
ताम्रचूडे कुक्कुटे ।

लोहितवदनायां पुरोदिगङ्गनायाम्, सुचिरसमय
व्यापृतनिधुवनरभसपरिश्रमालस विलासिन्यामिव
निमीलित प्रायतारकायां क्षणदायाम्, परिव्राजकेष्विव
स्निग्धदशाविधुरितेषु आम्यत्सु विशिखेषु प्रदीप नि

वहेषु, विद्युक्तजनायतोपचित निःश्वासवैश्वानर नि-
 तान्तपरीतापेनेव प्रोन्नतसपत्नारुणवैजयन्ती प्रदर्शन
 जनितासोढ शोकेनेव क्षणमप्यविषह्य प्रेयसी वियोगे
 नेव अधिपश्चिम सलिलनिधि निमज्जति निशाना-
 यके, वटुपटलसमारब्धस्वाध्यायाध्ययनध्वान प्रबुद्धा
 ध्वनीन धृतासुपद्धतिषु, प्रमथगणेष्विव भैरवरागानु
 रञ्जितमानसेषु लोकेषु प्रत्यूषसि विसृष्टशयनो निर्व-
 र्तित स्नानादिक्रियो नातिदूरसुरपदं समारूढे सारस
 मिव जगतीतलं विकाशयितरि सवितरि दक्षिणादे-
 शाययिनीं पदवी मशिश्चियत् । अशृणोच्च

“हरिभक्तिभरशरीरिणां, यदि बाधैरतिरस्कृताभवेत् ।
 जनविस्मय दायिनीतदा, संसिद्धिर्नचिरायजायते ॥”
 इत्यपरवक्त्रकं मधुरस्वरेणोद्गीयमानं केनापि । ततो
 ऽतिक्रान्तेषु कतिपयकालेषु पौरस्त्याकलितस्यतन्म-
 हावनस्य प्राच्येनाध्वना प्रतिषिद्धगमनेनाप्यविदित
 प्रवृत्ति र्गच्छन्नभिवीक्ष्यान्तरीक्षमध्यलक्ष्मीमालिंगितु
 काममिवोद्यान्तं तीक्ष्णमरीचिमालिनं माध्यन्दिन-
 सवनायतत्सवेशेसन्निवेशेन निरन्तरदलसन्ततीना
 मातपत्रानुकारिणो निषंगस्येव शिली

तारका नक्षत्रम् अक्ष्णोः कनीनिकाच । परिव्राजकोयतिः, स्निग्ध-
 दम्बा सतैश्चर्विका प्रेमयुक्तावस्थाच, भ्राम्यत्सु इतस्ततस्तच्चरमाणेषु धृ-

र्णमानेषुच, विशिलेषु रेत्या शिखयाचरितेष्ट, आयतोदीर्घः, वैजयन्ती
पताका मेघती निशात्मिका । अध्वनीनः पथिकः पद्धतिमार्गः । सज्जय-
न्तीष्विति वरिर्गमनायेति भावः । भैरवरागः शिवविषयिणीमीतिः भैरवा-
भिधानोरागश्च, दुरपदम् आकाशम् । हरीत्यादि, एतेन भाविकाळभुज
गभीतिशान्तिः सूचिता ॥ अपरवक्त्रकं वृत्तम् । पौरस्त्यं पूर्वम्, प्रति-
षिद्धेति कालसर्पोपद्रुतेरिति भावः, अविदित प्रवृत्तिरितिगमनेहेतुः प्रवृ-
त्तिः दृतान्तः, मवनायपूजनाय, निरन्तरदलसन्ततीनां सन्निवेशेनेत्यन्व-
यः । निपंगः इष्टुधिः, शिलीमुखो वाणः मधुकरश्च ।

मुखनिषेवितस्य तरुणीचरण पुरातनाघातसंजातको
पादवसरं सरन्नेववैरिविरहिणी दहनाय प्रत्यग्रप्रवाल
जालच्छलेनानलास्त्राणीवसन्दधानस्याशोकानोकह-
स्य शीतलेतले गृहीतासनो नारायणनमस्या मतनोत्रा
नाविधैर्वनभवप्रसूनैः । अथतद्वाटिक महाटवीनिक
टातिस्फुटगणत्प्रोद्भटघण्टिकाटङ्काराकर्णनोद्रिक्त क्रोधा
तिरक्तनेत्रजगतीग्रासप्रसक्तशक्तव्यक्त समभिद्रवत्का-
लकरालवक्त्र निर्यद्धालाहलमहानलज्वलज्वालाजा
लजर्जरितसनसा श्वासनिश्वासस्वसनस्यदसन्दह्यमा
नविपिनम्, प्रकृत्यैवाऽक्षेत्रतयाक्षान्ते दिक्षुविदिक्षुचाल
क्ष्याण्यपि प्राणिलक्षाणिक्षणादेवप्रत्यक्षमात्रेणाति तमां
क्षोभयन्तम्, अन्तकस्यापि भीतिमुपजनयन्तं, वनदे
वतामपि कान्दिशीकतांनयन्तम्, प्रकुपितभोगिराज
मिव वर्धितभीषणभोगभाजं, भाद्रभीमदर्श विभावरी-

मपी^१ कालभावादधः कुर्वाणम्, अहर्पतिदर्पस्फुरत्फ-
णाफूत्कारस्फारथूत्कृतीनां वृष्टिमृष्टिभिस्तिरोदधतम्,
भैस्वरूपिणमप्यशङ्करं, काद्रवेयपतिकम्पसम्पादक म-
प्यशेषकम्पलम्पटम्, शोषयन्निवायूंषि मर्वतोमुखानि
जनिजुषाम् उन्मत्तमिवमदं, यौवनमिवक्रूरभावस्य
स्वरूपमिवमहोत्पातसागरम्य, अभिमानमिवहिंसा-
याः सर्वस्वमिवकरालतायाः, धावमान (१) माञ्ज-
नपुञ्जमिव, तमस्तोममिव, श्यामलशिलोच्चयमिव,
सान्द्रतमाल तरुसमुदयमिव, यामुनद्भृदमिव समुद्र-
तम्, पातालान्धकारमिव मध्यभुवनमाश्रित माजङ्ग-
म्यमानं कालसर्पेन्द्र मर्पितमात्रे जपेपश्यन्नेवपुलकि-
तस्स्वेदितस्तमवेपत । समस्फुटदिवचसहस्रधा

आघातेति युवतिपदाघातेनाशोके पृष्णोद्गमोभगवतीतिकविसमयः ।
अवसरं प्रिय वियोगात्मकम्, सरचेव प्राप्नुवन्नेव । अकतोहोवृक्षः नमस्यां
पूजाम् । तद्वृक्षाटिकः तस्याघटिकाया अयम् एषचटङ्कारस्यविशेषणम्,
नेत्रान्तंचवक्त्रस्य, कालोयमः नमानासिका, निःश्वासोमुखवायुः, स्पन्दो-
वेगः, अलक्ष्याणि द्रष्टुमनीप्सितानि, कान्दिशीकनां भयद्रुतताम्, भोगि-
राजं शेषनागम्, भोगःफणा कालभावात् श्यामत्वात्, भैस्वद्विशवोभयानक
इव, शृङ्गरद्विशवः कल्याणकारकश्च । काद्रवेयोनागः, अशेषकम्पलम्पटम्

१ वायुघातोरात्मनेपदित्वमपि प्रयोगेदृश्यते, यथा हर्षचरिते गंगापर्यन्ते “ धर्मवेतुमिवा,

५। धवळ पयोधगम् ” इति ।

न दीदमप्यन्यथायुः । अतोदाया एतेदांनयेदमयन्त । सर्वतोमुक्तानिद्वि-
 श्वानि, स्वयम्भूः । अन्तस्तु सिद्धेःपादौ सर्वतोन्वेष्टा । पादद्वयपदानयु
 कुर्वन् भावत्यन्यथायुः, गन्धर्वाऽन्तोन्निवेष्टोदिधानात् ।

दृष्टयेन, ततः क्षणेनैव धर्ममाधाय प्रतिविधानं विमृ-
शन्नपिनाधनान्तरं मनवलोकयन्

“कारुण्ये इत्यमामनन्यशाणश्रीमन्तमभ्यर्थये

कालशालमुपन्तगलपनितं गोरालगाम्पालय" ।

इत्याकस्मिकावभासेन पद्यपादयुगलेन भक्तवत्सलं
हरिमापन्नार्तिनाशनमार्त आर्तथत । अस्मिन्न-
वमरेद्रागेवसमुद्धृतोऽग्रनिरवग्रहावग्रऽग्राहगृहीताद्दधि-
सिन्धुराग्रयः । करणाभिन्धुर्दीनं दन्धुर्मधुनिपूदनोऽति
दन्तुरं, तुरगरूपमतनुतनुकं, पृथुप्रोथं, ग्रीवापघन
प्रभवलोमस्तोम प्रतिरुद्ध यादृच्छि क्वारिवाहप्रचारम्,
अजस्रं विपुल पुच्छ गुच्छ धूनन घोणकोण निर्गच्छप्र-
भञ्जनाभिक्षिप्ताभ्यर्णवरसहस्रं, विकटटापकुट्टनभयक-
म्पमानकूटभृतं, स्वायतागतमपि वितततमतमश्शया
मरश्मिसम्बद्धं, हयग्रीवभक्तिभरविवर्तमपि उच्चैश्श्रवसं
भीष्मेणाप्यशान्तनवेनाक्षियुग्मेनाभिवीक्षमाणम्, ऊ-
र्ध्वकूटमूर्धानमुपधायवधाय शतधासत्वरतरन्तसुरगवरं
विभज्य वज्रविद्वेषिणाप्रोन्नतेनदन्तेनान्तिकमन्त-
कस्य झटिति समयापयत्, क्षणेनपुनरदृश्यतामुपाग-
मत् । सचतदानीं कलावेतमद्भुतमभूतपूर्वञ्चात्मनि

(१०६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

भगवतोऽनुभावं निश्चितेनचक्षुषानिरीक्ष्यशमनवदन
 गर्भमुरुमिव, अभिनवं जगतिजातमिव, दहनोदरादा-
 गतमिव, महोदधिमध्यनिमज्जनान्निस्तृतमिव, शान्तै-
 नसं स्वमन्यमानंपरिच्छेदरहितैः, परश्शतैरपिवचोभि-
 रगोचरैः, हर्षप्रकर्षैरन्तर्मातुमशक्नुवद्भिरिववाष्पकै-
 तवेनवहिरागतैः कियत्कालमवापवाह्यान्तवृत्तिविसर
 विधुरां, मोहमयामिव, शून्यमयीमिव, कैवल्यमयीमि-
 व दशाम् । ततोऽभितोष्टूयप्रकटितदयोदयमिष्टदेवं
 विधायचनिर्वाधसञ्चारं तत्प्रदेश मवाप्यचानपायिनं
 सकलामोदिनमकलङ्किनंकमपियशः कलाकरं निरश-
 ङ्कः परस्तातङ्क ऋजुनैववर्त्मनाप्रवृत्तेगन्तु मिति ॥
 इति मैथिल श्रोत्रिय श्रीबालकृष्ण मिश्र विरचितायां
 श्री ५ लक्ष्मीश्वरी चरिताख्यायिकायां

प्रथम उच्छ्वासः ।

रसा भूमिः । गार्तयत प्रार्थयत् । निरवग्रहोनिः प्रतिबन्धः, अवग्रहो
 विघ्नः, सिन्धुराग्न्यः गजेन्द्रः, तनुः कृशश्शरीरं च, प्रोथः नासिका,
 अपघनोऽवयवः, घोणोनासिका, कूटभृत् पर्वतः, रश्मिः प्रग्रहः किरणश्च,
 हयग्रीवो नारायणः, उच्चैश्शूवाः इन्द्रनुरगः । उन्नतकर्णश्च, वज्रविद्वेषिणा
 वज्रतोपिकठिनेन, शमनोयमः, अभिनवमिति जनिक्रियाविशेषणम् । एनः
 पापम्, भीतिजन्यदुःखभोगेन पापशान्तिरितिभावः । बाह्यवृत्तिः बाह्ये-
 न्द्रियसन्निकर्षजन्यावृत्तिः अतथाभूताचान्तवृत्तिः, विसरः संभूतः । नि-
 शङ्कत्वं परस्तातङ्कत्वंच ऋजुवर्त्मनागमनायप्रवृत्तौहेतु रिति ॥ इति
 प्रथम उच्छ्वासः ॥ ❀ ॥

अथ द्वितीय उच्छ्वासः ।

पुण्याचरणपवित्रितकायोऽमलमानसो निरतः ।

केशवचरणभरसिजे प्रभवति कर्तुं न किं कस्मिन् ॥

अथ गच्छतश्चास्य बहु प्रदद्वदुर्विधक्लेशान्त कारकः,
वलीयानिवशूरं करमन्दकरः, कांसार इव म-
नाग्दर्शितवासरः, नागरतरुण इव श्यामानन्दनः,
लौकायतिक इव अभियातिसदागतिः, शाकद्वीप इव
प्रियचित्रनिषेव्यमाण भानुः, यातुधान इव अमृताव-
गाहनसुखवज्ज्वनः, व्यभिचारिनायक इव परमहेला-
धरसलम्पटः, तिमिरोत्कर इव तापनाशनः, शाब्दिक
प्रयोग इव बाहुलकानुगतः, हरिश्चानतिशयितसुर-
तामोदजननः, साधुरिव प्रदर्शिताभिनन्दनीयफल-
शालिमार्गः, निदिध्यासनसमाधिरिव प्रसुदिनक्षेत्रवा-
च्, नयरहितभूपतिरिव विगतकमलोच्चयः खलशोभा
बहश्च, कामयमान इव जातपुलकः, हेमन्तसमयस्समी-
याय, यत्राञ्जलवितानाञ्जितकुचशिखरियुगलान्तराल
नीतवदेनास्सुकृतिनोयुवानः प्रमदयानन्दतन्दोहमनु
भवन्ति कमपि, पृथुकरूपमाकलय्य संयाततनया इवा
सादयन्ति सुखं कृषीवलाः, सुषोमबहुलेनापियेनोपची-
यत एव सन्तापो वियोगिनाम्,

(१०८) श्रीलक्ष्मीश्वरी चरित्रम् ॐ

श्रीः । पुण्येति, एतेन धर्मिण्यन्ती भूतानि नमस्योगशान्तिष्मन्ति ।
 शूरकरः रतिकिष्णः नोद्वन्धश्च । नामः दिनं मर्पनिजेयश्च । पङ्कनेतिष्ण
 क्युत्पेनमनाग्निर्नित्यमितिभावः । इयामागतिः तदानन्दनोर्वर्गम्
 सुखयोवनान् । लौकायतिकथानाकः, अभिप्रातिः, द्वेष्ट्यः, मदागतिः
 नस्स्वर्गश्च । चित्रमानुः भास्करोऽनन्धश्च । अमृतं जलं सुवाच, अवगाहं
 स्नानमास्वादश्च । परमाहेलासुरतम्यप्रौढेच्छायत्रमचामाववरमस्यच्छम
 शोपकः, तत्र व्रणोदयादिति । अन्यत्र परमहेलायाः परकीयवनिनाया
 धरमस्यच्छमः कामुकइत्यर्थः । तापस्यनाशनः अन्यत्रनापनस्यमानोऽमृत
 भक्षणीयइति । बाहुलकः कार्तिकः । बाहुलकं कचित्प्रवृत्तिरित्योद्विच्युर्वि
 शब्दशास्त्रेपमिद्धम् । सुगतामोदः सुरतेनामोदः देवममुदायामोदश्च । अमि
 नन्दनीयफलाश्लाघ्यो यत्रमचासौमार्गः मार्गदर्शकः । अन्यत्रतादृशफलेन
 शालीशोभमानोमार्गः पन्था इति । क्षेत्रवान् कृषीवत्तः जीवश्च । कपलोवप
 पङ्कजसमुदयः चक्षुषीसमुदयश्च । खलः धान्यस्यापनादिस्थानंदुष्टश्च
 प्रमदयेतिवृतीयार्थोनयनक्रियान्वया । पृथुकः चिपिदान्नं वाञ्छश्च सुधी
 चैत्यम् ।

ततोविपुलफलभरभाराभिनन्दितजनिजुषांखपुर-
 खर्जूरलाङ्गलिप्रमुखशाखिनां भुक्तविप्रलम्भाभिरिव
 लरीभिस्सविस्त्रम्भट्टपरीम्भारम्भसम्भोगसम्भाविता-
 नां शातकुम्भशोभिसुरभिसम्भुयस्तम्भोरुप्रसवसम्भारो
 पलम्भाति भासुरम्भाजम्भलद्दुमाणां स्तम्भितजम्भा-
 हितारामरमणीयदम्भासुपाटवींवलोकयन् प्रमोदमा-
 नमानसोऽसौनातिदूरेरसवतीरसानुबुभूषयाऽऽगतंविद्या

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१०९)

धरपुरमिव सागमोलसितद्विजनिकरंकुसुमसमयमिव,
परिक्षयाकृतपरिवेषं चन्द्रमण्डलमिव, सानेक
प्रालेयशैलमिव प्रासादैः, दुग्धोदधिमिव मणिमौक्तिक
विद्रुमैः, पुरुहूतपत्तनमिव बुधगुरुकविकलाधरैः, विश-
ङ्कटसङ्कटं, निर्गलार्गलगोपुरं पुरं पुग्तः सम्पराये
चित्ररेखाप्रभृतिलेखालयाङ्गनाजनेष्यमाण निष्कृपकृप-
णलेखासमुदयस्य, जलधरस्येव विमलतरवारिधाराध-
धीरितपरिपन्थिप्रतापस्य, सरमइव पद्मोल्लासभासित-
स्य, प्रौढयुवतिवक्षोरुहस्येव सुवृत्तमनोहरस्य, पवनाश-
ननायकस्येव धृतक्षमस्य, प्रकृत्यादक्षिणस्य दक्षिणक्षो-
णीरक्षिणोन्निगीक्षमाणः क्षिप्रमेष्यन्तीं क्षपाकापालिकी
मवधायसन्ध्यया तदीयपानाय सम्पादितइव मदिरसे
रागकैतवेन, दिवसश्रियाश्रितवारुणीकंज्वरं परिहरति
पश्चिमगिरिगहनकेलिकामुके पूषणि.

जनिजुषां प्राणिनाम्, सर्वेषामेव तदवाप्तेरित्याशयः । खण्डुरः गृध्राश्च
पाशपः, जाङ्गला नारिवेलः, दातकुम्भं सुवर्णम्, शृगलः, कुटिबः, हस-
मरान्, जम्बलः, दादिवः, जम्भारितः इन्द्रः, रसवतीपृथ्वी सरसादनिहा-
व, अनन्तभोगी असहस्रपातो भोगवान् । अनन्ताभिध नोनामह, कान-
मेत्यादि, आगमदशास्त्रम् । द्विजो विप्रः, जगमोहकः, द्विजः पञ्चोद एतन्
नगरम् दुधः पण्डितः अन्नात्मजः, सुरः शेरः दासः हहः, बर्हिः, बह-

[illegible]

निशावसानोन्मिषत्प्रणयकलहकुपितापनोदनान्तगाय-
तरणिसमुदयावलोकनायातमामिनीमानापहरणोत्क-
लिकाकलापमुपनेतुमायातिकुमुदिनीनायके, सञ्च-
रणमारभमाणेषु शम्भलीजनेषु, अभिसरणपथ्य-
नेपथ्यधारिकास्वभिनारिकासु, सखी सुरत कौतूहलोद-
वसिते वयस्याभिः स्थाप्यमानासु पञ्जरस्थसारिकासु,
विधिवश विघटमाने चक्रवाकमिथुनै, त्रिदिशमिव
साप्सरोहं मकरणितरामणीयकम्, कृष्णचरितमिव
शुक्रभाषितम्, सदाचरणपरायणमिव सुकृतमालाचि-
तम्, तारुण्यमिव मन्मथावापितच्छायम्, अभिजन

मिव पुन्नागदीपितम्, अनागरिकमपि श्यामालिंगि-
तम्, नवदरेणाऽपिवदरेण पलाशिनाऽपि हरिप्रियेण
रुचिरम्, चम्पकवकुलमालती माधविकाकामिनी मद-
नमञ्जरीद्रुमैर्मञ्जुलम्. वियोगिविसर्गविशारणायमा-
रमाधकाभिचारमन्त्रोच्चारणध्वनिभिग्वि परिमलमुदि-
तचञ्चरीकनिचयगुञ्जितैरासञ्जितम्, । अलकाया
इव पुटभेदनाद्बहिर्विद्यमानमुद्यानं सान्ध्यविधिविधा-
नाय समासाद्य सम्पादिताशेषकृत्यः क्षपां क्षपयितु-
ङ्कस्यचन घनच्छदन .। खाविशालस्य रसालशाल-
स्य प्रच्छायतयाऽशीतलेतले विहितासनपरिश्रहः त-
दातदासन्नप्रदेशेषु भ्राम्यता नागरिकेण केनचिदा-
याय दर्शनमात्रोपजात

शम्भलीकृष्टिनी । पथ्यं, समुचितम्, नेपथ्यं वेशरचना । साप्सरो-
हंसकः सजलसगोवरस्पर्हंसः तस्परणितेन रुतेन रागणीयकं च तत्,
अप्सरसां पादकटकरणितेन यद्रामणीयकं तेन सहितञ्च । शुकः कार-
शुकाचार्यश्च । सुकृतमालाचितम् अतिशयेन शोभनैर्वाकृतमालैराजवृक्षैः,
सुकृतस्य पुण्यस्य मालयापरम्परयाच व्याप्तमिति । मन्मथः कपित्थः
मदनश्च, छाया पत्रच्छायाकान्तिश्च । अभिजनः कुलदेशश्च, पुन्नागः
देववृष्टभपादपः पुरुषश्रेष्ठश्च । अनागरिकं नागरिक जनातिरिच्यमानं
नगरेऽजातंच नगरवाद्यत्वस्य तत्रोद्याने वक्ष्यमाणत्वात्, श्यामामुग्धयो-
वनाप्रियंगुश्च । नवदरेण नवदरभिन्नेन, नवदक्षवताच रक्षयोरैक्यात्, ।

(११०)

श्रीलक्ष्मीनारी चरितम् ॐ

यितो शुक्रम, कलाधरः कलाभिज्ञान्द्रव, विशद्वैतैः मङ्गद्विर्जनैः मङ्ग
व्याप्तम् । निर्गलः अवाधिता अर्गलापान्धोयत्र तादृशं । गोपुरं पुराणं क
तत्तयोक्तम् । सम्पराययुद्धम्, एतेन गजविषयिणीचित्रलेखादिनिष्ठा प्रीति
ध्वन्यते । विपलेति, विपलयांतरवारेः खड्गस्य धारया, विमलतरया क
रिणो धारया सम्पातेन च, । अवधारितः परिपन्थिनां, परिपन्थी च मन्त्र
स्तेजः प्रकटस्तापश्च येन तस्य, । पद्मोल्लामः सम्पदः, कमलस्य चोल्लामः ।
सुवृत्तं शोभनप्रवृत्तिः तेन मनोहरः । सुवृत्तोऽर्तुलो मनोहरश्च, पवनान्ननाय-
कः शेषः, क्षमा शान्तिः पृथ्वी च, रक्षिण इत्यस्य पुरमित्यनेनान्वयः, । तदीय
पानं क्षपाकापालिकीकर्तृकं पानं । क्षपागतौ । गनाशादिति भावः, वारुणी
पश्चिमाशा, मद्यं च, अम्बुमाकाशं वसनं च, दिवसश्चियेति श्रयणे कैलौ च-
न्वेति तृतीयायास्तस्यार्थकत्वात् ।

निशावसानोन्मिषत्प्रणयकलहकुपितापनोदनान्तगाय-
तरणि समुदयावलोकनायातभामिनीमानापहरणोत्क-
लिकाकलापमुपनेतुमायातिकुमुदिनीनायके, सञ्च-
रणमारभमाणेषु शम्भलीजनेषु, अभिसरणपथ्य
नेपथ्यधारिकास्वभिनारिकासु, सखी सुरत कौतूहलोद-
वमिते वयस्याभिः स्थाप्यमानासु पञ्जरस्थसारिकासु,
विधिवश विघटमाने चक्रवाकमिथुनै, त्रिदिनमिव
साप्सरोहं म करणितरामणीयकम्, कृष्णचरितमिव
शुक्रभाषितम्, सदाचरणपरायणमिव सुकृतमालाचि-
तम्, तारुण्यमिव मन्मथावापितच्छायम्, अभिजन

(११२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

पद्माशिना मांसाशिना पत्रवताच, हरिप्रियेण हरिप्रीतिविषयेण, हरिप्रियेण
कदम्बद्रुमेणच । विसरः समुदायः । विशाखं मारणम्, मारः मारणका-
स्मर स्तण्वसाधकः अनुष्ठाता, तस्यत्रासाधकः कार्यकारकश्चञ्चरीकः,
उच्चारणध्वनिभिः अनेकेषां युगपदुच्चारणेध्वनिर्जायत इतिवस्तुस्थितिः ।
अभिचारप्रयोगेवाचिकजपस्यैवागभेविज्ञानमितिनकाप्यनुपपत्तिः ।
अलकायाइवेति, “वाद्योद्यानस्थित हरशिरश्चन्द्रिकाघौतहर्म्या” इति
मेषद्रुतकाव्येकालिदासस्य महाकवेरभिधानात्, पुटभेदनं पुरम् । अपि
तुंगमयितुम् । छदनं, पत्रम्, शालोवृक्षः,

नितान्तभक्तिना सपदि शिञ्जिरसुरससुमनःसुरभि
तसरोवारिणा बहुविधफलपुष्कलेनोपवनसमुचितेनाति
थेयेनातनितसत्कृतिः प्रणम्य कौतुहलापहतहृदयेन
सविनयमन्वयुज्यत, देव ! महजवैयात्यशतस्याधम-
तमजनस्य सुलभैवभवत्यशालीनता, याचक्षमणी
यैवस्यात्सांसिद्धिकशान्तिशालिभिर्भर्वाद्दृशैर्महानुभा-
वैः, मौम्य ?

“स्वसजातीयोत्कर्षः प्रायेणहिदुस्सहोभवति”

इति भवदीय विलोकनाकलिताशेषसुखभागिनी
लोचनेमोदुमशक्नुवान श्रवणेन्द्रियं भावत्कचक्षद्रद-
नचन्द्रिगदीप्तिपरिचयप्रवृत्तिमन्नतिनिशमनसुधाणा-
धानुं प्रगयति माभवदितम्, आर्य ! कतमं देशकं
जार्णाम्यतानीता, कस्यपुण्यास्पदस्यजनपदस्य

राघवस्य, पुरुषिणीवम्भ, नन्दइव यादवस्य, मना-
 गप्यनामृष्टपरीवादपङ्कनयाऽतिविशदयशसो धुसौता-
 न्वयस्य निदानं नेमिपाटवीस्थलइव क्रतुममाचण-
 विमलः, क्षितिपालभालदेशइव धीरोज्ज्वलः, राका-
 पतिरिव चाडवकुलामोदकरः, श्रोत्रियाग्रेसरः पदकर्म
 तयानयाधिकः, ठक्कुरोपनामधेयो विधीयमानमहाऽ
 ध्वरपञ्चकः कृतिकुलकमल विकाशकोऽविकरः पवित्रया
 मासजन्मनाधरणीतलम् । येनात्मनासमानः प्रथमा
 यां पत्न्यामुपदेशकौशलकृतकंनान्तेवासिनिकरे स्फी
 तमतितोयकरोबुद्धिकरः । रतिकान्तइव विबुधप्रसादको
 ऽसदलक्ष्यःकान्तश्चरतिकान्तो द्वितीयाया मुदपादिषा-
 ताम्, तयोरादिमो नगवारेति परोगाढेतिनामकं सं-
 वसथमसङ्ख्यसङ्ख्यावदतिक्रान्तवैदुष्यपरितोषितेन
 महीभृतोपहारीकृतमुपार्जिजत्, यतो धुसौतनगवारे-
 ति धुसौतगढेति मूलग्रामौ प्राचीनसम्प्रदायानुरोधेन
 तावविन्दताम् । तत्ररतिकान्ततः कीर्तिप्रकरकरः
 कीर्तिकरः ततश्चदूवदनाभिधानः परमपावनः प्रादुग-
 सीत् । बुद्धिकरस्तु समस्तप्रशस्तक्रियावपास्तनिर्वादौ
 सुगृहीतसम्बिदौ हलधरकेशवाविव गोकुलगोपकाव-
 क्रूरपक्षपातिनौ हलधरकेशवावजीजनत्, तत्रहलधरः
 शाणपाषाणकषणविमलीकृतं पुरातनंरत्नमिवरतनं के-

शिवश्चाद्यपत्न्यामरुन्धतीशीलंसन्दधत्यां गोविन्द-
नामानं मां गोन्-श्रीहर्षौ च, कनिष्ठभार्यायां कविगण
रुचिकरं रुचिकरं महायिक मण्डुदपीपदत् । (१]

ऋतुरध्वरो मुनिवरश्च धीरः पण्डितः कुण्डकुपं च । बाहवो ब्राह्मणः
बाहवानलक्ष, कुलं समूहः स्थानं च, आमोदोद्वेगोद्विधश्च । पदकर्माणि
यागादीनि, तदुक्तम् “ इष्ट्य, द्ययनदानानि याजनाध्यापनेतथा, प्रति-
प्रश्नार्थैः पदकर्मा विप्रउच्यन्ते” इति । नयोन्यायः तत्र पञ्चैवैकपर्मा-
णिसन्ति अतएव तदधिकः । महाध्वरपञ्चकञ्च “पाठोद्गोमश्चातिथीनां
सपर्यातर्पणबलिः, एतेपञ्चमहायज्ञा ब्रह्मयज्ञादिनामकाः” इति ।
विकाशकइति एतेन धरणीतलपावनत्वेनचरविकारमोदश्यमभिधामूक्तपा
व्यञ्जनयाध्वन्यते । कतकः सलिलप्रसादकरो द्रव्यविशेषः, तेनान्वर्थना-
मत्वं सूचितम् । विबुधः पण्डितोदेवश्च, अमदन्क्षयः अपतामलक्ष्यः
असन् अविद्यमानो लक्ष्योपस्य स च । उदपादिपातामुत्पादितौ । सं
वसयं ग्रामम् । सङ्खलशवान् पण्डितः, अग्र विरोधाकङ्कारोव्यङ्ग्यः ।
निर्वाणे निन्दा । गोकुलं गवांकुलं ब्रजपुरं शास्त्रं च, अक्रूरः मथुरावासी
क्रूरभिन्नश्च । शाणपापाणः निरुपः । रुचिकरं स्पृहाकरं कविगणस्पृह-
णीयपाण्डित्यशालिनमितिपावत् । उदपीपदत् उतादयामस ।

तेषु श्रीहर्षः साम्राज्यमिव लावण्यस्य, मरूपमि-
वरमणीयतायाः, सम्मोहइववामभुवाम्, आनायइव

१ “छोनोदेभ्या” अथमतनय. केशररयात्मजम्मा, श्रीगोविन्दोहाचकरकये येमपात्र कभीवान् ।
श्रीमन्नारायणपरणयोः सम्भवाधापचितं नत्वासारस्वतमपिमह- वाग्य-१२५ “वर्नाति” इति
गोविन्दकुर प्रणीतस्य काव्यमदीपस्याय सौकः ।

राघवस्य, पुरुषिपौरवस्य, चन्द्रइव यादवस्य, मना-
 गप्यनामृष्टपरीवादपङ्क्तयाऽतिविशदयशसो घुसौता-
 न्वयस्य निदानं नैमिषाटवीस्थलइव क्रतुसमाचरण-
 विमलः, क्षितिपालभालदेशइव धीरोज्ज्वलः, राका-
 पतिरिव वाडवकुलामोदकरः, श्रोत्रियाग्रेसरः षट्कर्म-
 तयानयाधिकः, ठक्कुरोपनामधेयो विधीयमानमहाऽ-
 ध्वरपञ्चकः कृतिकुलकमल विकाशकोगविकरः पवित्रया-
 मासजन्मनाधरणीतलम् । येनात्मनासमानः प्रथमा-
 यां पत्न्यामुपदेशकौशलकृतकेनान्तेवासिनिकरे स्फी-
 तमतितोयकरोबुद्धिकरः । रतिकान्तइव विबुधप्रसादको-
 ऽसदलक्ष्यःकान्तश्चरतिकान्तो द्वितीयाया मुदपादिधा-
 ताम्, तयोरादिमो नगवागेति परोगाढेतिनामकं सं-
 वमथममङ्गुल्यमङ्गुल्याधदतिक्रान्तवैदुष्यपरितोषितेन
 महीभृतोपहारीकृतमुपार्जिजत्, यतो घुसौतनगवागे-
 ति घुसौतगढेति मूलग्रामो प्राचीनसम्प्रदायानुरोधेन
 तावविन्दताम् । तत्रगतिकान्ततः कीर्तिप्रकरकाः
 कीर्तिकरः ततश्चदृढदनाभिधानः परमपावनः प्रादुर्ग-
 मात् । वृद्धिकरंनु ममभूतप्रभस्तक्रियावपास्तनिर्वाही
 सुगृहीतमम्बिदो हलध्वक्शवाविव गोकुलगोपकाव-
 क्कृश्वानिनो हलध्वक्शवावजीजनत्, तत्रहलवाः
 शान्तावागकृपणनिर्वाकृतं पुगननंगन्ममिवग्ननं क-

शिवश्चाद्यपत्यामरुन्धतीशीलंसन्दधत्यां गोविन्द-
नामानं मां गोमू-श्रीहर्षोच. कनिष्ठभार्यायां कविगण
रुचिकरं रुचिकरं महायिक मण्डुदपीपदत् । (१)

ऋतुरध्वरो मुनिवरश्च धीरः पण्डितः कुटुम्बं च । वाढवो ब्राह्मणः
वाढवानलक्ष, कुलं समूहः स्थानं च, आमोदोद्वेगोद्वेगश्च । पदरुपाणि
यागादीनि, तदुक्तम् “ इज्य, ध्ययनदानानि याजनाध्यापनेतथा, प्रति-
प्रदत्तैर्युक्तः पदरुपा विप्रउच्यते” इति । नयोन्पायः सत्र पञ्चैवकर्मा-
णिसन्ति अतएव तदधिकः । महाध्वरपञ्चकञ्च “पाठोद्दोमश्चातिथीनां
सपर्यातर्पणं बलिः, एतेपञ्चमहायज्ञा ब्रह्मयज्ञादिनामकाः” इति ।
विकाशकइति एतेन धरणीवल्लवाचनत्वेनचरविकरमोदइयमभिधामूलया
व्यञ्जनयाध्वन्यते । कतकः सलिलप्रसादकरो द्रव्यविशेषः, तेनान्वर्धना-
मत्वं सूचितम् । विबुधः पण्डितोदेवश्च, असदलक्ष्यः अपतामलक्ष्यः
अमन् अविद्यमानोलक्ष्योपस्य स च । उदपादिपातामुत्पादितौ । सं
वसथं ग्रामम् । सङ्खलशावान् पण्डितः, अत्र विरोधाकङ्कारोव्यङ्ग्यः ।
निर्वाहो निन्दा । गोकुलं गवांकुलं ब्रजपुरं शास्त्रं च, अकूरः मथुरावासी
कूरभिन्नश्च । शाणपापाणः निरुपः । रुचिकरं स्पृहाकरं कविगणस्पृह-
णीयपाण्डित्यशालिनमितियावत् । उदपीपदत् उत्तादयामस ।

तेषु श्रीहर्षः साम्राज्यमिव लावण्यस्य, सरूपमि-
वरमणीयतायाः, सम्मोहइववामभ्रुवाम्, आनायइव

१ “सोमोदेभ्याः प्रथमतस्तपः केशवस्यामजग्मा, श्रीगोविन्दोदाद्यकरकये प्रेमपात्र बनीवान् ।
श्रीमन्नारायणचरणयोः सम्पगाधापचितं नत्वासारस्वतमपिमहः पाव्यतत्वं व्यनक्ति” इति
गोविन्दकुर प्रणीतस्य काव्यप्रदीपस्याय श्लोकः ।

मनश्शकुलिनाम्, प्रदीप्तपावकइव यौवतविवेकहवि-
षाम्, प्रत्याख्यानमाश्विनेययुगलस्य, प्रत्यादेशः कुसु-
मकार्मुकस्य, प्रत्याहारोरुचिरजातस्य, निग्रहस्थान-
ममृतदीधितेः, परस्परप्रतिस्पर्धिशोभैरवयवैरुद्भासितो
ल्पीयसावयसापूर्वभवानन्तभवाभ्यस्तसमस्तशास्त्रतया
ऽधिजगौ समुदितामेव विद्युद्विद्योतमानानवद्यद्वद्य-
विद्याम् । आससादच स्तोकेनैवकालेन कमनीयां
विपुलापुलाकां प्रतिष्ठाम्, अनाकलितकैतवेन नारा-
यणे प्रणयेन पौरस्त्यान्यप्यधश्चकार वृन्दानि भक्ति-
भाजाम्, हन्त हन्त सचासौपश्यत्येव दग्धदृशाभि
दुरजरठदीर्घयाप्यजीवने मयिज्यायसि सोदरे भ्रातरि
विहाय मेदिनीतलं सुरधामललामतामभिजगाम(१),
तदिति विनैवस्तनयितुं कुलिशपातः कोऽपि, ततो
विदितप्रवृत्तिराशापि मलिनाम्बरतां पर्यधात्, पश्चि-
माचलकाननमगात्तापनोऽपि, अभिव्यापच्च मोहसन्त-
मसं जन्मिनां मनांमि, अपतत्तममवायः सुमनसाम्,
प्रावृषीव समाप्लूयतवसुमतीनयनसलिलासारैः, सुख-
स्तामयततारतारैर्हाहाकारैरन्तरालंनभसः, असकृत्

१ वयेष्ठे सर्वगुणैः कनीयसिन्धोमायेण पात्रेधिया, गात्रेण स्मरगर्वं स्वर्गेणकदे, निष्ठाप्रतिष्ठाभवे ।
भीर्हेष त्रिदिवं गते मयिमनोहीनेच, कश्शोधये दन्नाशुद्ध महो महत्सु विधिनाभारोऽपमारोपितः ।
इति काव्यप्रदीपान्ते श्लोकः ॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (११७)

पृथिव्या अप्रथतवेपथुः(२), वाष्पपयः प्रवाहपतनभी-
त्येव निद्रापि लोचनकं नाग्रहीत्, स्मरणीयतामया
दालयं श्रेयसः, अशिश्रियत् शास्त्रीयविचारसरसता-
कथाशेषताम्, अविन्दतजलाञ्जलिंसमज्यासुवा-
गिमराजतावराकी, तथ्यमेतत् सर्वसहावसुन्धरेति यत्
तदा नैवव्यदीर्यतसहस्रया शतधावा । नचातः पर-
मदसीयवान्धवदशा शक्यते कथयितुम्, उद्बुद्धश्च
कश्चिद्विकारोमीलयतिचेतन्यम् ।

आनापो वागुरा, शकुलीमत्स्यः । यौवतं युवतिसमूहः । समुदिता
सकला समेधिता च । पूर्वभवः पुरातनः, भवोजन्म (१) । अपुलाका
निस्तृषा निर्मलेति यावत् । दग्धदृशेति खेदोक्तिः, भिदुरः कुलिशः, जरठः
कठोरः, याप्यो निन्दनीयः । स्तनयितुर्प्रेषः, आशादिष्ठातृत्वास्तव्यश्च,
मलिनाम्भगता मलिनाकाशता मलिनवसनता च । तापनोऽपि किमुत-
साधुः । पुमनसां पुण्याणां सत्त्वेतसां च । समाप्लूयत पुर्णा ।
अयत गतः । अप्रथत विस्तीर्णः । कश्चित् अनिर्वचनीयः ।

आवृणोतीन्द्रियमिहिरं महामोहमिहिका, लुप्यते
स्मृतिः, विलीयते धृतिः, अपैति विवेकशक्तिः,
अपह्नियते दृष्टिः, कारुण्यपयोनिधौ पुनर्निमम
मात्मानसपि नाधुना जानामि प्रागेवापरम्, इत्यभि

(११८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

धाय क्षणंतूष्णीमास्त, ततोविवेकेन स्मरणाहितवि-
कारं व्युदस्य वदितुमार्गेभे, अतिदुस्त्यजो बान्धववि-
योगाहितः शोकस्सर्वप्रमाथी, यश्चाशमनवदनदर्शनो
निरयः, सलिलानिवर्तनीय आश्रयाशः, मन्त्रादिप्र-
योगानपहार्यः पिशाचः सम्प्रहाराजनितंशरविसर-
शयनम्, प्रोद्धामदारुदहनादधिकतरं दहतिशोकात्मा
कृष्णवर्त्माकिमत्रविधेलिमम् केवलंविवेकितैव समाश्र-
यणीया, पश्यतु भवान् आत्ममात्करोति सकल
मेव जगति भगवती प्रेतभर्तुराज्ञा, शब्दायतेदु-
न्दुभिरनारतं महाप्रयाणपिशुनः प्राणिपटलानाम्, स-
र्वसत्त्वसंहारकारकोदण्डः स्मन्ततं परिभ्रमति, किस-
लयकोणान्तदरलग्नपाथःपृषदिव, सौदामिनाविलसि-
तमिव, तप्तायमपात्राहितहविरिव, नैदाघवलाहकच्छा-
यावस्थानमिव, प्रकुपितपृदाकुभोगमण्डलमिव, स्वाप्न-
शातमिव, जीवनं पारिप्लवं प्राणभृताम्, शरीरा-
णिव विसिनीसूत्राणीव, घनकालकल्लोलिनीपुलिना-
नीवच्छिदुगाणि, नचजन्तूनां वपुस्सहस्रेणापि सौहित्य-
मुपयात्यौदरानलो मृत्योः, अतिशीघ्रवाहिनी किलन-
स्वगता सरित्, विद्यतेचजीवशुको निर्गमनमार्गवहुल-
एव शरीर पिञ्जरे, स्रोतस्वती प्रवाह पतित दारु-
दयसम्मिलनमिव संगतं जनानाम्, अनति क्रमणीय

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (११९)

स्वामयिक स्वभावः, अनुक्षणपरिणामिनः क्षणाः,
 क्लेशमयं सर्वम्, अमारः संसारः, तदहं स्वदेशात्
 श्रीजगदीशवदनदर्शनेनानेकजन्मसञ्चितवाच्यकर्म
 बीजोद्भूतकलुषलताप्रतानैरावृता मात्मभूमिप्रसाधयितुं
 राजमरुद्व सचित्रोत्पलं, रमणीकरकुशेशय मिव

इन्द्रिय मिहिरमिति, प्रकाशकत्वादिन्द्रियस्य मिहिरत्वम्, मिहिका
 ल्लेयः । व्युदस्य निगकृत्य । निरयो नरकः आधयाश याश्रयनाश-
 तोमिः । सम्प्रहारो युद्धम् । घृण्यवर्त्मा दहनः । न्यूनतादृष्यं रूपक-
 लङ्कारः । दुन्दुभिरित्यप्रदण्डइत्यप्रच भेतमर्तु इत्यनुपपद्यते । अन्यथा-
 रं देवी पुजने बलिप्रदानावगरे पशोः महाप्रयाणसूचको दुन्दुभिरित्यप्रच-
 । पृथक्कुः सर्पः । स्वामशानं स्वप्नमुखम् । पारिप्लवं चक्षुष्यम् । गोदि-
 पं वृष्टिम् । परिणामिनः धर्मलक्षणावस्थ न्यतमपरिणामावस्थः, क्षणः
 । वाशात्मभिन्नाः । वाच्यं गिह्यम् । सचित्रोत्पलं चित्रोत्पलाभिधान-
 । नया चित्रेणचोत्पलेनगदितम् । कसोऽप्यपश्यम्

कटशोपशोभितम्, अनिर्वचनीयरजनमिव आलिभा-
 सितम्, क्षितिपतिमिव निधि-ल्लिचिवर्तिनम्, नदीजन-
 मिव कपिकुल्यागलितनलिलैः, स्नितायानिधिमिव नि-
 मलनन्द भागावलोकनैः, सरगुरमिव इन्द्रधनुस्त्रि-
 र्भणैः, मजामिदेशसुतकल्याणमिति । मदीयं सु-
 सुत्यं उग्रोत्पलाः मोक्षं गोदिन्द इति इन्द्रधनुस्त्रि-
 नारधारयद्, आरुगदेव्यामीत्याभास्य नदी निर्दिष्टे

वननोगतिद्वारे द्वारान्तरं धामनि निरागुण
 नायायकमविश्रिता यदिद्या पांशुः सन्नादात्मन
 न उवाचै गोविन्दानन्दमनमनमो महेन्द्रोदयं
 भूयः मन्त्रात् तन्निशपपन्नेः आनन्दापुनः प्रातः
 विनश्रीमः सनकश्चोदयिचान् कम्भमम्भनं तमनेया
 न्नेन चापः नोज्यमानस्तु विनेः, विनेवमन्दन
 निरुद्धो मगोम्यमभ, अननुश्रित एतातुयायिभिः
 पश्चादभिद्रुतो भद्रनिवहन, अन्ताणवाय्ववर्तिन म्म-
 द्दचगीकृत उत्कलिकाकलपेन पुरोगामिविधुस्तोऽनु
 गतः पौगस्त्यं प्रम्यितस्यमनमः, भक्तिभगभा विभृ-
 तोऽपि झटिति तत्प्रदशमायात् । ततो दर्शनादेव ध-
 न्यतममात्मानं मन्यमानः अपास्य शाश्वतिकमपि स
 पत्नभावं विधायचानेक विग्रहं शुभ्रांशुनाऽपिनखमि-
 पेण निषेव्यमाणे, गोविन्द पादभवसायनख कान्ति-
 कैतवान्मन्दाकिनी स्रोतसेवसेव्यमाने, तदीयचरणा-
 म्बुजे रसालीनशिरसा सप्रणयं प्रणम्य पश्चादागतस्य
 तन्नागरिकस्य हस्तादादायनृपसमुचितादप्यधिकैरु-
 पचारैः कृतार्चनो वद्धाञ्जलिरवाचत् ।

कटक एतदभिधानं महानगरं वलयश्च । अनिर्वचनीयरजतम् प्रीति
 भासिकं तुलाविद्यापरिणामभूतं रजतम्, साक्षिभासितं साक्षिणाचेतन्येन
 साक्षिगोपालेनचभासितं दीपितं ज्ञापितं च । निधिर्वारिधिः, श्रेवधिश्च ।

ऋषिकुल्या तन्नामधेयानदी मुनेः जलवहनप्रणाङ्गिका च । विमलेति, विमलं
विगतं मलं पापं यस्मादिति, स्फूर्तञ्च, चन्द्रभागानदी चन्द्रभागः इन्दुक
काच । इन्द्रद्युम्नो महाराजः, इन्द्रस्य शतक्रतोः युष्मन्धनं च, तस्य विजृ-
म्भणैः चेष्टितैर्विकासैश्च । सोऽयमिति, राजतनयामयनिवर्तको गण क-
निदेशित इत्यर्थः । सम्वादेनेति, इदमपरं मातिभाभिधानं प्रमाणम् ।
नायायेति, राज्ञः पृथ्वीपतित्वादिति भावः । अञ्जसाशीघ्रम् । सम्पातो
धारा धानं पानम् । कुम्भसम्भवो महामुनिरगस्त्यः । भद्रं कल्याणंतस्य
पश्चाद्भावित्वात् । अपास्येति, कमलेन साकं सार्वदिक एव विरोधश्चन्द्रस्य
तमपिशुश्रूपा लिप्सया विहायेत्यर्थः, तेन गोविन्दे माहात्म्यातिशयो ध्वन्यते,
एवमग्रेऽपि । विग्रहं शरीरम् । अद्भुतगुणस्त्वयो द्वित्वादिति भावः । मन्दाकि-
नीति, अस्या गोविन्दपादप्रभवत्वं पुराणादौ प्रसिद्धमिति । रसेति, एतेन
साष्टाङ्गत्वं प्रणतौ सूचितम् ॥

महाभाग ? भगवतो दर्शनं समामाद्य सद्यः परिहिताव-
द्यकस्य मे प्रत्यपद्यत कृतार्थतां नयनद्वयम्, भवत्पाद-
पाथोजपरागस्पर्शलेशतोऽपि परमपवित्रतां प्रयाता पु-
रीयमधात्प्रधानतां नगरीषु गरीयसीषु, परमुपवकार-
चैषा पितृप्रसूतः, धन्यधन्यमिदमुपवनं यदनुगृहीतमा-
सनेन, तमो बहुलेप्यशेषजननिलब्धैतद्देशभागधेय सु-
धादीषितिमण्डलोदयादत्रागतानत्रभवतः किमिव
कथमिव च समाचरेयमिति तरलतां मनस्समाराधने
प्रयाति, अभवदीयं वा नैव किञ्चिदस्मदीयं वस्तु,

यत्तु तदुपयोगिभावं लभेत, नत्रवचसाऽपि तद्विवा-
ने प्रभवामि, तथाहि अतीववृद्धीपद्धतिर्भवदवलम्ब-
नानां गुणानाम्, इयतीतुमे मतिपरिमितिः, किञ्च
श्रित विदेशैः कोविदेशैरपि धिक्कृतमाध्वीकसुरसाभि-
र्भावभरितभारतीभिरनुभूयभूयस्सम्भूयनूयमानात् तत्र
भवतः स्तुवन् महार्धमणिमौक्तिकप्रवालहीरकाणामु-
पायनस्यास्पदे काचवराटकोभवेय मितिमन्दाक्षमुपै-
ति मेहदयमिति । ततएवमभिनन्दितोऽयं तोयनिधि-
रिवासन्नस्तननिधिस्तेजोविशेषानुभूत तदीयभूपभावः

सप्रश्रयादर

‘अवधकं पापम् । पितृप्रभूः, सायंसन्ध्या तमोवहुले, तमसाशोकं
नान्धकारेण च वहुले, एतेन दुःप्रवेशत्वं व्यज्यते । ‘जननि, जन्म, मण्डलं,
चक्रवालं, समूहश्च, समुदयादिति, एतेनतपसिनाशिते आगमनमुपपन्नमि-
त्याशयः । ‘अत्रभवतः, पूज्यान्, प्रयातीति, अकस्मात् मञ्जुमानां स-
मागमेचेतमश्चाञ्चल्यं भवतीतिवस्तुगतिः । तदुपयोगीति, आराधनो-
योगीत्यर्थः, नहितदीयेनैव वस्तुनातदादरोयुक्त इति भावः । ‘तत्, आरा-
धनम् । ‘कोविदः पण्डितः । आसन्नेति, आसन्नः प्राप्तः समीपस्थितश्च,
स्तनानां निधिपदमादिर्येतयस्येतिवार्थः ।

दर्शनदत्तविस्मयापन्नस्नानसो विनयमपि विनीततां
वेदयन्तं, भक्तिमपि भक्तिमत्तां शिक्षयन्तम्, ऋजुता

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१२३)

मपि मृदुतामादिशन्तं, वाग्मिवरागनप्यतितरां त्रपांतो
यधौनिमज्जयन्तं, वरासने सहसैव समुपवेश्यं वसुमं-
तीपतिं प्रदायकरकिसलययुगेन सफलामाशिषां राशिं
गुरुविसुरनायकं, द्वैपायन इव धर्मार्तिमंजं, मैत्रा-
वरुणिरिव रामचन्द्रं, प्रणयेन घनसारंक्षोदैरिव,
पुञ्जितविमच्छदैरिव, पारदनिकरैरिव, नीहारविसरै-
रिव, शारदेन्दु किरणैरिव, दशनमरीचिभिर्धवलंयन्
नभोवलय मभापत, भूमीपते । किं नाचरित मायुष्म
ता प्रेमप्रह्वीभावयोस्स्वरूपमादर्शयता, नन्वियं
परमासीमा सत्कृतेस्मम्बिधानस्य, श्रद्धयानिष्ठादि
तस्तनुरप्यादरोपचारः प्रीतेरतिशयं जनयतेनाम, कि-
मुत ईदृशः, परन्तु जगन्नाथ विलोकनसमीहया
गच्छतोमे माभवतु भङ्गोविधे रितिकस्मैचित द्विजन्म
ने दुर्विधाय देय मेत दुपहतं सद्येन महोदयेनेति ।
अथाय सुस्थाय प्राञ्जलोवद्धाञ्जलिना व्यजिज्ञप-
त् नाथ ?

‘सहसैव, एठादेव, एतेनराज्ञिविनयातिशयोद्योत्यते, ‘सफलां, फ-
लेन पादपानुबन्धिना भविष्यदिष्टेनच सहिताम्, ‘रिक्तहस्तोन पश्येत्तु
राजानं भिषजं गुरुम् :’ इतिस्मरणात् । ‘मैत्रावरुणिः, वसिष्ठः । ‘घन-

यत्तु तदुपयोगिभावं लभेत, नचवचमाऽपि तद्विषा-
ने प्रभवामि, तथाहि अतीववृद्धीपद्धतिर्भवदवलम्ब-
नानां गुणानाम्, इयतीतुमे मतिपरिमितिः, किञ्च
श्रित विदेशैः कोविदेशैरपि विकृतमाध्वीकसुरसाभि-
र्भावभरितभारतीभिरनुभूयभूयस्सम्भूयनूयमानान् तत्र
भवतः स्तुवन् महार्धमणिमौक्तिकप्रवालहीरकाणामु-
पायनस्यास्पदे काचवराटकोभवेय मितिमन्दाक्षमुपे-
ति मेहृदयमिति । ततएवमभिनन्दितोऽयं तोयनिधि-
रिवासन्नरत्ननिधिस्तेजोविशेषानुभूत तदीयभूपभावः

सप्रश्रयादर

‘अवधकं पापम् । पितृप्रभूः, सायंसन्ध्या तमोबहुले, तमसाश-
नान्धकारेण च बहुले, एतेन दुःप्रवेशत्वं व्यज्यते । ‘जननि, जन्म, मण्ड-
चक्रवालं, समूहश्च, समुदयादिति, एतेनतप्रसिनाशिते आगमनमुपान्ना-
त्पाशयः । ‘अत्रभवतः, पूज्यान्, प्रयातीति, अकस्मात् महत्तमानां
मागमेचेतमश्चाञ्चल्यं भवतीतिवस्तुगतिः । तदुपयोगीति, आराधनो-
योगीत्यर्थः, नहितदीयेनैव वस्तुनातदादरोयुक्त इति भावः । ‘तत्, आ-
धनम् । ‘कोविदः पण्डितः । आसन्नेति, आसन्नः प्राप्तः समीपस्थितश्च
रत्नानां निधिपदमादिर्येत्तयस्येतिवार्थः ।

दर्शनदत्तविस्मयापन्नखानसो विनयमपि विनीततां
वेदयन्तं, भक्तिमपि भक्तिमत्तां शिक्षयन्तम्, ऋजुता

मपि मृदुतामादिशन्तं, वाग्मिवरानप्यतितरां त्रपांतो
यथौनिमज्जयन्तं, वरासने सहस्रैव समुपवेश्यं वसुमं-
तीपतिं प्रदायकरकिसलययुगेनमफलामाशिषां राशिं
गुरुविसुरनायकं, द्वैपायन इव धर्मात्मजं, मैत्रा-
वरुणविव रामचन्द्रं, प्रणयेन घनसारक्षोदैरिव,
पुञ्जितविमच्छंदैरिव, पारदनिकरैरिव, नीहारविसरै-
रिव, शारदेन्दु किरणैरिव, दशनमरीचिमिर्धवलं यन्
नभोवलय मभापत, भूमीपते । किं नाचरित माधुष्यं
ता प्रेमप्रह्वीभावयोस्स्वरूपमादर्शयता, नन्वियं
परमासीमा सत्कृतेस्मम्बिधानस्य, श्रद्धयानिष्ठादि
तस्तनुरप्यादरोपचारः प्रीतेरतिशयं जनयतेनाम, कि-
मुत ईदृशः, परन्तु जगन्नाथ विलोकनसमीहयां
गच्छतोमे माभवतु भङ्गोविधे रितिकस्मैचित द्विजन्म
ने दुर्विधाय देयं मेत दुपहृतं सदयेनमहोदयेनेति ।
अथाय सुस्थाय प्राञ्जलोवद्धाञ्जलिना व्यञ्जिज्ञप-
त् नाथ ?

‘सहस्रैव, हठादेव, एतेनराज्ञिविनयातिशयोद्योत्यते, ‘सफलां, फ-
लेन पादपानुवन्धिना भविष्यदिष्टेनच सहिताम्, “ रिक्तहस्तोन पश्येत्तु
राजानं भिषजं गुरुम्” इतिस्मरणात् । ‘मैत्रावरुणः, वसिष्ठः । ‘घन-

(१२२)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

यत्तु तदुपयोगिभावं लभेत, नचवचसाऽपि तद्विषा-
ने प्रभवामि, तथाहि अतीववृद्धतीपद्धतिर्भवदवलम्ब-
नानां गुणानाम्, इयतीतुमे मतिपरिमितिः, किञ्च
श्रित विदेशैः कोविदेशैरपि धिक्कृतमाध्वीकसुरसाभि-
र्भावभरितभारतीभिरनुभूयभूयस्सम्भूयनूयमानान् तत्र
भवतः स्तुवन् महार्घमणिमौक्तिकप्रवालहीरकाणामु-
पायनस्यास्पदे क्वाचवराटकोभवेय मितिमन्दाक्षमुपै-
ति मेहृदयमिति । ततएवमभिनन्दितोऽयं तोयनिधि-
रिवासन्नरत्ननिधिस्तेजोविशेषानुभूत तदीयभूपभावः
सप्रश्रयादर

‘अवद्यकं पापम् । पितृप्रभूः, सायंसन्ध्या तमोबहुले, तमसाशोचं
नान्धकारेण च बहुले, एतेन दुःप्रवेशत्वं व्यज्यते । ‘जननि, जन्म, मण्डलं,
चक्रवालं, समूहश्च, समुदयादिति, एतेनतपसिनाशिते आगमनमुपान्नमि-
त्याशयः । ‘अत्रभवतः, पूज्यान्, प्रयातीति, अकस्मात् महत्तमानां स-
मागमेचेतमश्चाञ्चल्यं भवतीतिवस्तुगतिः । तदुपयोगीति, आराधनो-
योगीत्यर्थः, नहितदीयेनैव वस्तुनातदादरोयुक्त इति भावः । ‘तत्, आरा-
धनम् । ‘कोविदः पण्डितः । आसन्नेति, आसन्नः प्राप्तः समीपस्थितश्च,
गन्नानां निधिपदमादिर्येनयस्येनिवार्यः ।

दर्शनदत्तविस्मयापन्नस्नानसो विनयमपि विनीततां
वेदयन्तं, भक्तिमपि भक्तिमत्तां शिक्षयन्तम्, ऋजुतां

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१२३)

मपि मृदुतामादिशन्तं, वाग्मिवरानप्यतितरां त्रपांतो
यथौनिमज्जयन्तं, वरामने सहसैव समुपवेश्यंवसुम-
तीपतिं प्रदायकरकिसलययुगेनमफलामाशिषां राशिं
गुरुविसुरनायकं, द्वैपायन इव धर्मात्मजं, मैत्रा-
वरुणिवि रामचन्द्रं, प्रणयेन घनसारक्षोदैरिव,
पुञ्जितविसृच्छदैरिव, पारदनिकरैरिव, नीहारविसरै-
रिव, शारदेन्दु किरणेरिव, दशनमरीचिमिर्धवलयन्
नभोवलय मभापत, भूमीपते । किंनाचरित मांयुष्म
ता प्रेमप्रह्वीभावयोस्स्वरूपमादर्शयता, नन्वियं
परमासीमा सत्कृतेस्मम्बिधानस्य, श्रद्धयानिष्ठादि
तस्तनुरप्यादरोपचारः प्रीतेरतिशयं जनयतेनाम, किं-
मुत ईदृशः, परन्तु जगन्नाथ विलोकनसमीहयां
गच्छतोमे माभवतुभङ्गोविधे रितिकस्मैचित द्विजन्म
ने दुर्विधाय देय मेत दुपहृतं सदयेनमहोदयेनेति ।
अथाय सुस्थाय प्राञ्जलोवद्धाञ्जलिना व्यञ्जिज्ञप-
त् नाथ ?

‘सहसैव, हठादेव, एतेनराज्ञिचिनयातिशयोद्योत्यते, ‘सफलं, फ-
लेन पादपानुवन्धिना भविष्यदिष्टेनच सहिताम्, ‘रिक्तहस्तोन पश्येत्तु
राजानं भिषजं गुरुम्’ इतिस्मरणात् । ‘मैत्रावरुणिः, वसिष्ठः । ‘घन-

(१२४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

सारक्षोदः, कर्पूरचूर्णम्, 'पारदो, घातुविशेषः । 'नीहारः, तुल्यम् ।
भङ्गइति, तीर्थगमने हि मार्गेऽप्यातिथ्यग्रहणं निषिद्धम् । प्राञ्जलोमृदुः ।

किं नविधत्ते सदागमोऽभिलषितम्, परां कोटिमानय-
त्यानन्दनिस्यन्दोद्दयस्य, दयानिधे ? विधेर्हतकस्य-
प्रतिहतप्रवृत्तितया कालपाशप्रतीकाशेनामयेन द्वितय
समातस्समास्कन्दिते, अनीकिनीनायक इव संवि-
त्प्रयोग कुशले, माधवइव शुचिरुचिचञ्चिते, आलेख्य
इव कृष्णविशदभक्तिभाजने, मधुमासद्रुम इव कुसुम
सुकुमारकाये, मकरवराकृष्यमाणमातङ्ग इव गोविन्द
मात्रशरणे, दुस्सहसहस्रकरकरनिकर चिर संस्पर्श-
मुकुलायमान शिरीषप्रमुख पेशलमृदुप्रसून इव, वि-
घुन्तुदोदग्रदशनावदलितेन्दुमण्डल इव, तुलतापनो
पक्रमकालिक प्रालेयगलदुत्पलप्रकर इव, प्राभातिक
प्रदीप इव क्षामक्षामदशामुपेयुपि, स्थूलेश्वयथुभिस्स
र्वाङ्गसङ्घतैः प्रवर्धिते, सन्ततविकाशिकाशश्वासैः स-
म्भृते ज्वलनजाज्वल्यमानज्वरैः, विरहिते वलैः, आ-
स्पदेमन्दभागधेयानाम्, प्रियपदे विपदाम्, परिशी-
न्तितनये मदायतनये सङ्कम्पाभिः प्रतिकृतिपरम्पराभि
ग्भावि भृशुजामिव प्रोद्भटभट वारभटानाम्, चरित

(१२८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

चरणस्यामृतंजलमेवमुवाच । भुवनं लोकः । मञ्जने भङ्गकरे
स्थिरानाथः क्षितियतिः । उपपत्तिभिः स्वस्मिन्नामयस्यानाशकत्वोपपादि
काभिर्युक्तिभिः । सुदृढदृढः सुदृढादपिदृढः । एतमेतम् आगतमिमम् ।
अभिनिवेशात् आग्रहात् । द्विरदपोगजराजः, यादवानां वनेममूहस्तदेव
वनंकाननं तस्यामोदी । सूत्राग्णः इन्द्रात् । भावकः प्रापकः ॥

प्रभो ! अपनयनयनिपुणनृपतनयस्योपतापमविल-
ल्विम्बितम्, प्रमाणयगणकवराकभाषितम्, पालय
किङ्कर प्रतिष्ठाम्, इत्येवमभिस्तुत्यप्रार्थमानो नारायण
चरणकरुणयामाभिमानो भूमीपते ! एष ब्रजामिभव-
त्सूनुविपदपनोदनायेत्युदाहृत् । राजा तु तदाकर्ण्य
सुप्रीततमान्तः ससम्भ्रमं परिजनाय महारजत रजन
वज्रवैदूर्यादि विनिर्मितं, किर्मीरमयान्तिकविधायिदी-
धितिं, वाग्वावासमिव सुमनोमनोहरं, मखमण्डपमिव
किसलयवलयलसितं, हरिचक्रमिव विच्छिन्नतमस्फुद-
र्शनम्, भागवतमिवकुवलयपीडान्वितं, मायिनमि-
वानेकरूपधाग्निम्, अपार्थिवमपिचक्रवर्तिनं, गोवि-
न्दमधिष्ठापयितुं मानिनीपितमपिदारुकविरहितं, पुष्प
रथमुपस्थापयेत्यादिश्वत् । ततो गोविन्दः नमनाथ ।
नादंवाहनमधिगमयामि किमपीतिकृतं तदानयने-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१२९)

नेतितत्प्रत्यरौत्सीत् । तथापि महीपतिर्महतासंरम्भेण
तमनुव्रजन् अमन्दमाहतसुरजव्रजं, झटितिज्ञणज्ञणाय
मानझल्लीरकं, भूयोऽभिभूयमानभेरीभाङ्गारनिर्भर-
भरितभुवनं, वाद्यमानढकापटहपटलाद्यवाद्यं, धिकता
परोद्घुरध्वानिकम्बुनिकुरम्बध्वानं, मदकलकोकिल
काकलीकोमलालापिजेगीयमानवारसुन्दरीदीयमान

साभिमानः अहमवश्यं हरिकृपातोराजतनुजरुजमपनेष्यामीत्यभिमान
वान् । महारजतं कनकम् । वासवीवासः स्वर्गः, सुमनः पुष्पम्, सुमनाश्च
देवः । तमस्निमिरं राहुश्च, सुदर्शनं शोभनदर्शनं, सुदर्शनाभिधानं च । कुव-
ल्यपीठः कुवलयमाला, तन्नामधेयोगजश्च । रूपं वर्णः स्वरूपं च । चक्र-
वर्तिनं सार्वभौमं चक्रेणवर्तिनं च । दारुकः गोविन्दसाधिः काष्ठं च ।
पुष्परथं विहरणोपयोगिस्यन्दनम् । अधिरोक्ष्यामीति, तोर्ययात्राविधि-
भङ्गभीत्येतिभावः, झल्लीरकः झोल्लइतिभाषयाप्रयितोवाद्यविशेषः । अभि-
भूयमानाताड्यमाना । कम्बुनिकुरम्बं शब्दं समूहः ।

तालतरलमणिकङ्कणं, धीरविधूयमानचमरीचामरसह-
स्रं हर्षोत्कर्षं प्रसूतप्रसूनलाजानूनवर्षणं, पार्श्वद्वयो
दञ्चितप्रासादस्थितकामिनी क्रियमाणनीराजनं, शत-
दलतयेन्द्रैक निलयेस्वमन्दिरेसमानयत् । उप
वेश्योच्छ्रित विधुधवलमहाधनासने महीपतिर्महिष्या-
समं समपूजत । प्राणमच्च सुतेनापि तापितेन तेन

चरणस्यामृतं जलमेवमुधातत् । भुवनं लोकः । मञ्जने भङ्गकरणे
 स्थिरानाथः सितिपतिः । उपपत्तिभिः स्वस्मिन्नामयस्यानाशकत्वोपपादि
 काभिर्युक्तिभिः । सुदृढदृढः सुदृढादपिदृढः । एतमेतम् आगतमिमम् ।
 अभिनिवेशात् आग्रहात् । द्विरदपोगजराजः, यादवानां वनंममूहस्तदेव
 वनंकाननं तस्यामोदी । सूत्राण्यः इन्द्रात् । भावकः प्रापकः ॥

प्रभो ! अपनयनयनिपुणनृपतनयस्योपतापमविल-
 त्विम्बितम्, प्रमाणयगणकवराकभाषितम्, पालय
 किङ्कर प्रतिष्ठाम्, इत्येवमभिस्तुत्यप्रार्थमानो नारायण
 चरणकरुणयामाभिमानो भूमीपते ! एष ब्रजामिभव-
 त्सूनुविपदपनोदनायेत्युदाहरत् । राजालुतदाकर्ण्य
 सुप्रीततमान्तः ससम्भ्रमं परिजनाय महारजत रजत
 वज्रवैदूर्यादि विनिर्मितं, किर्माभ्यान्तिकविधायिदी-
 धितिं, वाग्वावासमिव सुमनोमनोहरं, मखमण्डपमिव
 किमलयवलयलसितं, हरिचक्रमिव विच्छिन्नतमस्सुद-
 र्शनम्, भागवतमिव कुवलापीडान्वितं, मायिनमि-
 वानेकरूपधारिणम्, अपार्थिवमणिचक्रवर्तिनं, गोवि-
 न्दमधिष्ठापयितुं मानिनीपितमपिदारुकविरहितं, पुष्प
 रथमुपस्थापयेत्यादिशत् । ततो गोविन्दः नमनाथ ।
 नाहं ब्राह्मणमधिगोक्ष्यामि किमपीतिकृतं तदानयने-

नेतितत्प्रत्यरौत्सीत् । तथापि महीपतिर्महतासंरम्भेण
तमनुव्रजन् अमन्दमादृतमुरजव्रजं, झटितिज्ञणज्ञणाय
मानझल्लीरकं, भूयोऽभिभूयमानभेरीभाङ्गारनिर्भर-
भरितभुवनं, वाद्यमानढक्कापटहपटलाद्यवाद्यं, धिक्कता
परोद्घुरध्वानिकम्बुनिकुम्बध्वानं, मदकलकोकिल
काकलीकोमलालापिजेगीयमानवारसुन्दरीदीयमान

साभिमानः अहमवश्यं हरिकृपातोराजतनुजरुजमपनेष्यामीत्यभिमान
वान् । महारजतं कनकम् । वासवीवासः स्वर्गः, सुमनः पुष्पम्, सुमनाश्च
देवः । तमस्तिमिरं राहुश्च, सुदर्शनं शोभनदर्शनं, सुदर्शनाभिधानं च । कुव-
लणपीठः कुवलयमाला, तन्नामधेयोगजश्च । रूपं वर्णः स्वरूपं च । चक्र-
वर्तिनं सार्वभौमं चक्रेणवर्तिनं च । दारुकः गोविन्दसायिः काष्ठं च ।
पुष्परथं विहरणोपयोगिस्पर्न्दनम् । अधिरोक्ष्यामीति, तोर्ययात्राविधि-
भङ्गभीत्येतिभावः, झल्लीरकः झोलइतिगापयामयितोवाद्यविशेषः । अभि-
भूयमानाताड्यमाना । कम्बुनिकुम्बं शङ्ख समूहः ।

तालतरलमणिकङ्कणं, धीरविभूयमानचमरीचामरसद-
सं हर्षोत्कर्षं प्रसूतप्रसूनलाजानूनवर्षणं, पार्श्वद्वयो
दञ्चितप्रासादस्थितकामिनी क्रियमाणनीराजनं, शत-
दलतयेन्दिरैकं निलयेस्वमन्दिरेसमानयत् । तप
वेश्योच्छ्रितं विधुधवलमहाधनासने महीपतिर्महिष्या-
समं समपुजत् । प्राणमच्च सुतेनापि तापितेन तेन

साकमसकृत्तदीयपादपाथोजानि, अधाच्चतदनुव-
न्धिर्नीपयस्सुधामादरेण, अनन्तरं द्रागेवपश्यतो
स्तयोस्सुकुमारोऽनृपकुमारो नीरोगतांगतोमारोपमित
कलेवरोऽभ्राजत नितराम्, ततस्त्रयएवते सुषुप्तिमयी
मिवस्तम्भमयीमिवावस्थामचिरमन्वभूवन् । अनुप-
मप्रमोदवाष्परयाकुलाः कियत्कालकलांलेशतोऽपि
किमपिनिवेदयितुं नाशकन्, अथ दयितयासनाथः
क्षितिनाथश्चन्द्रमसमिव राहुवक्त्रकुहरनिष्क्रान्तं, राज
श्रीसौन्दर्यमिवप्रत्यागतं, • जीवलोकमहनिवहमिव,
पुनरावृत्तिमुपयातं परिमुषितमर्वस्वमिव ब्रयासात्पृथ-
गादानकर्मीकृतं, तादृशं भृशं दृशातनयं विलोकयन्
स्त्रापितः प्रीतिगिरिनदीनीगनिर्झरैः, सञ्चारितश्शि-
शिरोच्छ्वसित समीरणैः, अनुलिप्तः प्रसादहिम
चन्दनैः, उल्लसितः सितसुमनोनवमालिकाप्रकाशैः,

शतदलतया शतभाग (कवाट) तया कमलनयाच, इन्दिरैकनिकये त-
स्याः पद्मेवासादित्याशयः । सुतेनापीत्यपिनादयितापरिगृह्यते । अधा-
त्, अपिवत् । तयोराज्ञोः । अन्वभूवन्निति, तेन विस्मयरसोऽव्यज्यते ।
सनाथः सहितः । महउत्तमवः । स्त्रापित इत्यादि मन्तापेन पर्यहारीत्यत्रहे-
तुः । तदत्रकाव्यलिङ्गपरिणामौ समुच्चयश्चाकङ्क्षाः । प्रत्येकमपितापनिवारणे
पर्याप्तानामनेकेषां तत्रोपादानात् । सितसुमनोनवमालिका स्वच्छशोभन-
मनसां नवीनामालिका परम्परा सत्संकल्पसंहतिरितियावत्, सैवशुक्लकु-

सुमस्यनवा मालिकामाल्यम् ।

आलिङ्गतस्तनुजवदनचन्द्रकिरणैः, दूरं पर्यहारि
सन्तापेन । ततस्सर्वएवतंसुचिरमतन्वतस्तुतिभिः ।
समातङ्गतुरंगमस्यन्दनमगणितमणिव्याकोशकोशं च
राज्यमेवतस्मै समर्पिषत्, न च मानसेऽलुप्यदेतेनापि
लवतोऽपि, अचकथच्च पूज्यपाद ? नियुज्यता मनव-
स्कराश्रववर्ति क्रीतमिदं शरीरजातम्, अयमस्मि भव
दादेशसरंशिरसावोढुं प्रतीक्षमाण इति । अथ तदशेष
मेपक्षोणीभुजासमर्पितं तृणायमन्प्रगानः मानवेन्द्र ?
कृतं ममेतेन, प्रस्तुतवागुरेवैसारिणानां बन्धनयस्या
त्, तथाहि सार्वजनीनैव लोभनीयता विषयस्य,
तरलताच चेतसः, आयुष्मन् ? प्रथममपि प्राकृतिक
योगनिबन्धनबन्धनमशक्यमेव बाधितुं, किम्पुनर्नूतन-
म्, अभिवीक्षित। तुलापृपतीमप्यस्पृशतीभवति
भक्तिः, आकलिताच दर्शित प्रसवा सुजनतानतान-
ततिः, अधिगताच निरदिशयस्य विनयशाखिनो मूल
भृतामतिः, आसादिताच परमाप्रीतिः, तथापि महानु
भावो विषमेऽस्य नीवृतः प्रदेशे पद्धतिं समशमयाऽनु
रूप्यनिदेशितं विशालां धर्मशालां निर्मायितु, नृपेन
येनजगदीशदर्शनायगच्छतामध्वनीनानां क्लान्तिशान्ति
भिरित्युदाहरत्, राजा, वादमिति सगाद् हार्दभद्वद्व ।

व्याकोशः दीपितः मुख्यार्थवाचात् । अननस्कगश्रवः निर्पन्नाङ्गीका-
रः । सरं माल्यम् । गन्यमानइति, एतेन विरतिर्व्यज्यते, वागुरा आना-
यः, वैसारिणोमीनः, प्राकृतिकयोगः प्रधानपुरुषयोर्योगविशेषः, वन्धनं
बन्धः, “ ननित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावस्य तद्योगस्तद्योगादृते ” इति का-
पिलसूत्रात् । तुलापृथ्वी माहृश्यकणाम्, अस्पृश्यतीति निरुपमेतिभावः
पदति समया भार्गवभीषे ।

एवमेव परिणताक्षणायमाना विभावरी, भूपतितनु-
दभवशुभोदये प्रतीते चिरात्प्रतिरुद्धमपि प्रावर्तत
गीतं विभासगगेणजनानाम्, अयाचन्त भोजनायज-
ननीमर्भकाः, अदीप्यन्तप्रीत्येव मिहिकांशुकानावृ-
तानि हरिदङ्गनानां मुखानि, वासन्तिकवासइव प्रि-
यनखानेकक्षता किंशुकाभिरामताऽजायतवधूवक्षोजेषु,
मित्रोदयावसरेऽपि खललोकाइव म्लानिमासेदिरे कैर-
वकदम्बकानि, असेव्यत सौधान्तरालवर्तिनीचेतांसि
तरलयन्तीहमन्तीस्वापतेयितरुणैः, बहुविधै विबुधप्रवो-
धनायताड्य मानवाद्य शब्दै रायतवाचालतांनगरम्.
वैदेहकगेहधूपधूमपरिमलोऽग्रायतनागरिकैः, मानसा
नीवसमाहितानां तमसानिद्रयानागृह्यन्तलोक लौच-
नानि, गोविन्दस्तुमनुजपतितनुजरुजमिव क्षीणा
मभिवीक्ष्य क्षणादां, राज्ञी मिव प्रसन्नवदनां विचिन्त्य
प्रार्ची सम्पादितकल्यकृत्यनिकरोमधुमधुरयागिरास्नेह

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१३३)

विस्फारितेन नयनेन नृपाय प्रत्यपादयत् । क-
ल्याणवल्ल्यालय ? अतिक्रामतिमेप्रयाणसमयः त-
दनुजानातुमामिति । एवमुपरतवचमि तरिमन् पद-
मेतदलङ्कारणीयमितिप्रक्रमप्रतीपम्, इमेजनाभृत्य
भृताआजीवनाचरणराजीवयुगलमासेवितुं यिया-
सन्तीति धूर्तरयेव भाषितम्, कृतार्थोभवितुमिच्छामी
ति स्वार्थपरायणता प्रकाशनम्,

क्षणायमानेति, प्रमोदातिक्षयेनाज्ञायमानयामत्वादिनि भावः । प्रणि-
रुद्धपयोति, रोगाक्रान्तत्वान्नृपपङ्कमाररयेति तात्पर्यम् । मित्रादयः सुग-
मप्रकाशः सृष्टद्वृद्धिश्च । द्यन्ती अलङ्कारधानी आभयपात्रस्थानि प्रमाणारसे
रतिः, तरलपन्ती आकर्षणती, तथाचाप्रत्यक्षयानि पवतारसमारोपाय
मासोक्तिः । स्वापतेर्याधनी । मैदेदकोवणिक् । अर्थं प्रभाते भूयेन सह वा
सपत्नीत्याचारः । पदनं मुखं गायमागदय । दल्यं प्रभातः ।

एतेऽपिनेतव्या इत्याज्ञा, भवानेव नरमसेषां शरणमित्य-
भिनन्दनम्, परितापोभवन्तमन्तरेण भविष्यती त्परा-
त्प्रभनम्, भवद्भक्त्य इम इत्यात्ममग्भादना, रिध-
तिमारथायसंबिधेयमिति ताटस्थम्, तदेद भारित-
मप्येनांशोऽस्मि निवेदयिष्यमिति साहाय विज्ञापकृष्णी
वभूव भूपतिः । अतोऽस्यादिदमोय ददन देदर-एदर-ने
दुग्धोदपिपेन पुन न ददत्त भवेमातुदन्त-म-भार-
परणिपते । अनुशारऽदरुन्तमाश्, रन्त-एद-भक्त-र-

नियमयतु कृपार्णमान, मरुतमेव माधन, जागन्मन
 भगवत्पदाग्विन्दम्, प्रभावयन्तुवन्दनं भूषणम्, दीप्ति
 यतु मर्यादा गन्वतायम्, नन्वयमेव हृणीया भवो-
 दृशानामिति । अथ पार्थिवस्तथेत्यभिवागम्यन्दना
 य प्रतीहारिणं ममादिशत् । अनन्तरं गोविन्दः न
 चास्तिमेप्रयोजनं तीर्थयात्रानुपयोगिनास्यन्दनेन,
 तत्पादाभ्यामेव यानायानुजानातुमाय, तौहि सकृन्
 जन्मतां नेतुमभिलषामि, नदिकर्तुमिहमाम्प्रन मभि-
 निवेशस्साम्प्रतमित्यब्रवीत् । ततोऽङ्घ्रिप्रसेवाविग्रह
 भयविहस्तीकृतेनराज्ञा कथमप्यनुज्ञातः प्रस्थानमका-
 र्षीत् । कृच्छ्रेणच स्वार्पितवाण्याम्बुपूरपूरितलोचना-
 न् स्वमहातुकामान् महीभृत्प्रभृतीननुगच्छतोन्ववर्त
 यत्, अप्रहितैरपितदीयहृदयैस्सगं निस्कमतनगरात् ।
 तेचनयनायनमतियान्त माकलयन्तोऽपि गोविन्दं ता
 माशामाशाभिर्दरदर्शनस्याभिवीक्षमाणाः कथं कथ-
 मपि निलयमागत्याधियामिनि नलेभिरेनिद्रां लेश-
 तोऽपि, अनुचिन्तयदेवतस्यानुभावं विस्मयतेस्म मा
 नसममीषाय, कृत्स्नाँश्चतस्यकथाभिरेवमनोविनोद-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१३५)

यतः पर्याकुलयां वभूव विलोकनं गोचरयन्ती न कुण्डा
उत्कण्ठा । राजा तु यथोक्तां धर्मशालामकल्पयदल्प
तमेन समयेन याच गोविन्दसत्रनम्ना समाम्नाता सुचिर
मदधतोपकारदक्षतां दक्षिणाध्वगानामिति ॥

इति मैथिलश्रोत्रिय श्रीबालकृष्णमिश्रविरचिते

श्री लक्ष्मीश्वरीचरिते द्वितीय उच्छ्वासः ॥

आस्थाप विज्ञाय । साम्प्रतं युक्तम्, मां प्रतं, सरप्रति ।
अभिनिवेश आग्रहः । विरतीकृतः व्याकुलीकृतः । अपरितः अमेरितः
स्वयमेव गतैरिति यावत्, तेन गोविन्दविषयिणो रतिरतेषु व्यस्यते । नपना
यनं नेत्रमार्गम् । तामाशाम तां दिशम् । नकुण्डा पूर्णा ॥ इति द्वितीयो
उच्छ्वासः ॥



(१३६)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

तृतीय उच्छ्वासः ।

बहुकालादाकलितं सङ्कल्पितनियमबन्धनं यद्यत् ।

सम्पादयति दयातो भगवान् तद्भक्तवत्सलो नित्यम् ॥१॥

अथ पृथग्विधान् नगनगर संवसथान्, चित्राणि
च काननानि, कलनेनापि कायकम्पनकारिणीश्च
कलोलिनीः, नयनप्रसादनतामुपेयिवांसि परमपावन
पयांसि च सरांसि समतिक्रामन्, नवीनहैयङ्गवी-
नेनाव्युतनियमेनाव्युतापचेतानियतिप्रहितचेता असौ
प्रणयाभिमानिन्यामिवांशुमतासमंनीयमानायां वासर-
सुषमायां, वासकसज्जिकास्विवस्मयमानवदनद्युतिषु
कुमुद्वतीषु, लक्षितललनायामिव लक्ष्यमाणानेका-
वलोकनमुदितायां गगनपद्धतौ, प्रोषितपतियोषि
तीवदर्शितरागायां ककुभि प्रतीच्याम्, पावक
परितापितायः पिण्डइव, आलक्तकच्छदइव, बन्धु-
जीवकप्रसूनइव, पश्चिमाचलशयित महाभुजगभोग
रत्नइव, हाटकताटङ्कइव सन्ध्यायाः, सुन्दरसिन्दूर
विन्दाविववरुणाङ्गनायाः, प्रतिभाति भानुमति, वार-
नारीमिव प्राचीमसाचीकृतवदनमात्रुम्बितांकरेण समा-
ति मेदुरानुरागेचन्द्रमसि, दुरन्तप्रान्तराभ्यन्तरस्थ

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१३७)

श्रीः । बहुकालेति, आकलितम् आचरितम् । एतेन स्थलविशेषे
दुरामदेनापि नवनीतेन भगवदर्चन नियमस्यपूर्तिस्संजाता गोविन्दस्येति
सूचितम् । विशेषेवक्तव्ये सामान्यस्योक्त्याऽपस्तुतप्रशंसा, भक्तवत्सलत्व
स्यवाक्यार्थनिष्पादकतयाकाव्यलिङ्गं चालङ्कारः, यद्वा सम्पादनयोग्यत्व
रूपव्यङ्ग्यद्वारा तस्यतथात्वेपरिकरइति । नगः पर्वतः पादपश्च, सं
वसद्योग्रामः, कलनेन दर्शनेन हैयङ्गवीनेन नवनीतेन, अच्युतनियमेन, न
च्युतः नियमोयस्यतेन, अच्युतापचेताहरिपूजकः, नियतिः नियमः,
प्रणयाभिमानिनी प्रेमगर्वितानायिका, अंशुमतासूर्येण, लक्षितलक्षणा,
प्रकटपरपुरुषस्नेहापरकीयायोपित्, लक्ष्यमाण मनेकस्य सूर्यस्य चन्द्रस्य
च, अन्यत्र नायकस्य, अवलोकेनेन मुदितं प्रकाशोहर्षोवा यस्या स्तस्या
मित्यर्थः । दर्शितः रागोरक्तिमा अनुरागो वा अभिजापसृति चिन्तागुण
कथनोद्वेगसंप्रकापादिनापयातस्याम् । ककुभिदिशायाम् । वरुणाङ्गनायाः
पश्चिमदिशः । असार्चाकृतवदनम्, असार्चाकृतं नर्तियक्कृतं वदनं
मध्ये मुखंच यस्मिन्तदितिचुम्बनक्रियाविशेषणम् । करेणकिरणेनहस्तेनच

मप्रथितप्रथंकमप्यवसथंपथसवेशावस्थितं विलो-
क्य तत्रैव रात्रिमतिवाहयितुं चेतश्चकार । गत्वा च
तत्रच्छायासच्छायानोकहतले परिसमापितसायन्त
तकृत्यसंहतिस्मुखमुपाससाद निद्राम् । अथासोढ
क्लेशखिद्यमानवियोगिगणवितीर्णशापपरिणति राज-
यक्ष्मा स्कन्दितायामिव क्रमेणक्षीणतामुपगच्छन्त्यां
यामवत्याम्, अनन्तपुटभेदनराज्यशासनं निज

तृतीय उच्छवासः ।

बहुकालादाकलितं सङ्कल्पितनियमबन्धनं यद्यत् ।

सम्पादयति दयातो भगवान् तद्भक्तवत्सलो नित्यम् ॥१॥

अथ पृथग्विधान् नगनगर संवसथान्, चित्राणि
च काननानि, कलनेनापि कायकम्पनकारिणीश्च
कलोलिनीः, नयनप्रसादनतामुपेयिवांसि परमपावन
पथांसि च सरांसि समतिक्रामन्, नवीनहैयङ्गवी-
नेनाच्युतनियमेनाच्युतापचेतानियतिप्रहितचेतासौ
प्रणयाभिमानिन्यामिवांशुमतासमं नीयमानायां वासर-
सुषमायां, वासकसज्जिकास्विवस्मयमानवदनद्युतिषु
कुमुदतीषु, लक्षितललनायामिव लक्ष्यमाणानेका-
वलोकनमुदितायां गगनपद्धतौ, प्रोषितपतियोषि
तीवदर्शितरागायां ककुभि प्रतीच्याम्, पावक
परितापितायः पिण्डइव, आलक्तकच्छदइव, बन्धु-
जीवकप्रसूनइव, पश्चिमाचलशयित महाभुजगभोग
रत्नइव, हाटकताटङ्कइव सन्ध्यायाः, सुन्दरसिन्दूर
विन्दाविववरुणाङ्गनायाः, प्रतिभाति भानुमति, वार-
नारीमिव प्राचीमसाचीकृतवदनमाचुम्बितांकरेण समा-
लिंगति मेदुरानुरागेचन्द्रमसि, दुरन्तप्रान्तराभ्यन्तरस्थ

ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॐ (१३७)

धीः । दृक्कातेति, आकञ्चितम् आचरितम् । एतेन स्थळविशेषे
 दुरामदेनापि नवनीतेन भगवद्वर्चन नियमस्यपूर्तिस्तंजाता गोविन्दस्येति
 सूचितम् । दिशोपेक्षत्वात् सामान्यस्योक्त्याऽप्रन्तुतप्रशंसा, भक्तवत्सलत्व
 स्यदाव्यार्धनिष्पादकतयाकाव्यलिङ्गं चाकट्कारः, यद्वा सम्पादनयोग्यत्व
 रूपव्यङ्ग्यद्वारा तस्यतथात्वेपरिकरइति । नगः पर्वतः पादपश्च, सं
 वस्योग्रामः, कलनेन दर्शनेन ह्येयद्वीनेन नवनीतेन, अच्युतनियमेन, न
 च्युतः नियमोपस्यत्वेन, अच्युतापचेताहरिपूजकः, नियतिः नियमः,
 प्रणयाभिमानिनी प्रेमगर्वितानायिका, अंशुमतासूयेण, कक्षितकलना,
 प्रकटपरपुरुषस्नेहापरकीयायोपित्, दृश्यमाण मनेकस्य सूर्यस्य चन्द्रस्य
 च, अन्यत्र नायकस्य, अवलोकनेन मुदितं प्रकाशोहर्षोवा यस्या स्तस्या
 मित्यर्थः । दर्शितः रागोरक्तिमा अनुरागो वा अभिजापस्मृति चिन्तागुण
 कथनोद्वेगसंमत्तापादिनायपातस्याम् । ककुभिदिशायाम् । वरुणाङ्गनायाः
 पश्चिमदिशः । अमार्चाकृतवदनम्, असाचाकृतं नतिर्यक्कृतं वदनं
 मध्यो मुखं च यस्मिन्तदितिचुम्बनक्रियाविशेषणम् । करेणकिरणेनहस्तेनच

मप्रथितप्रथंकमप्यवसथंपथसवेशावस्थितं विलो-
 क्य तत्रैव रात्रिमतिवाहयितुं चेतश्चकार । गत्वा च
 तत्रच्छायासच्छायानोकहतले परिसमापितसायन्त
 तकृत्यसंहतिस्सुखमुपाससाद निद्राम् । अथासोढ
 क्लेशखिद्यमानवियोगिगणवितीर्णशापपरिणति राज-
 यक्षमा स्कन्दितायामिव क्रमेणक्षीणतामुपगच्छन्त्यां
 यामवत्याम्, अनन्तपुटभेदनराज्यशासनं निज

वाजिवाहकोदय निराकृताशति तिमिरे चिकीर्षति
 विकर्तने प्रावर्ततकर्तव्येषु प्रात्यहिकेषु, उपास्थायत्र
 प्रथमसन्ध्यां भगवत्पादाम्बुजसवनीयनवनीतसम्पत्त-
 ये तदवनीवासिनस्समस्तान् कुत्रलभ्यतेशीरमित्यपृ-
 च्छत् । तैश्च नैतामध्यास्तेमर्हीमाहेयीमहिपी वा दूरे
 च तदित्यभिहितोनियमभङ्गभयानुबन्धिबाधनोदन्व
 ति निमज्जन् नचिरादनुचरेणसमाहृतं तदवलोक्या-
 श्रयचकितचेताः कथमिवैतदामादितन्त्वयेति दाम
 मन्वयुंक्त । ततस्तस्मात् “सौरभेयीग्रामं ग्रामं निकषा
 गोपायमानेन विमलतरनीरसरसीसनीडे, नूतनत-
 रुणतारम्भ सम्भावितेन, कौङ्कुमविशेषक विशेषित
 विशालभालेन, अलिकुलानुकूलातिललामकानन-
 कुसुममालाकलितोरु मौक्तिकमारहारभारप्रतिभासित
 वक्षस्थलेन, कोकनदानुकारिकरचरणकमनीयेन,
 भ्रमरकभ्राजित वक्त्राम्भोरुहेण, कमलरागकृत मकरा
 कृतिकर्णकुण्डलकान्ति निराकृत कामकेतु कौतुकेन,
 चूर्णित वर्णमानचञ्चलाधिवासितवसनेन,

अप्रयितप्रथम्, अविदितनामधेयकम् । अवसयंग्राणम्, मवेद्योऽ
 न्तिकः । छायासच्छापः छायासमतीच्छायाकान्तिर्यस्यमः । यामवत्यां
 निशायाम्, भवतिच राशयश्चामये सयः क्रमेणाद्भ्येति । अनन्तमाका-
 शं तदेवानन्तपुटभेदन प्रतिविस्तृतं नगरं तत्र राज्यम्यग्रामनम् । निज

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी नरतिम् ❀ (१३९)

वाजिवाहकः अरुणः. उपास्थाय उपास्य, सवनीयं पुजनसम्बन्धि, माहेयी
 गौः, तत् क्षीरम्, अनुबन्धिजन्यम्, बाधनोदन्वति पीडासमुद्रे, तत्
 क्षीरम्, अन्वयुंक्त पृष्ठवान् । तस्मात् दासात्, एतस्यवक्ष्यमाणेन निश-
 म्येत्यनेनान्वयः । सौरभेयी-ग्रामंगोममूहम्, ग्रामनिकषा ग्रामममीपे,
 सनीदे अन्तिके, विशेषकं तिलकम्, अनुकूलेति, एतेन सौगन्ध्याति
 श्रयोव्यज्यते । झोक्नदं रक्तोत्पलम्, भ्रमरकोऽलकः सएव भ्रमरको
 मधुपः, कमलरागः पद्मरागमणिः कर्णेति, नचैतत्पदं व्यर्थं, कर्णसंलग्नार्थ
 कत्वात्, “कर्णावतंमादिपदे” इत्यादिना काव्यप्रकाशेतथाप्रतिपादनात् ।
 केतुः पताका साचमदनस्य मानमयी, चूर्णितेति, चूर्णितः तिरस्कृतः,
 वर्णस्य रूपस्य मानोगर्वोपस्थास्तथाभूता विद्युत् येन तत् । अधिवासितं
 वसनं यस्यतेनेत्यर्थः ।

विलासि महीपतिकुतूहलगहनेनेव नवनीरदावली
 श्यामलता कान्तेन जामदग्न्य प्रतिपाद्यमानमेदिनी
 तलेनेव नक्षत्रमालाञ्छुरितेन, जीमूतवाहनेनेव अं-
 गदस्थितिशोभनेन, वहिशनानामिव जामिनीमनोमी
 नाकर्षकाणां तिमिरयणुस्तज्ज्वयानामिव कुटिलाल
 कानां रोचिपालिम्पतेवान्तरीक्षम्, मणिवन्धवन्धुगव-
 लयमणिमरीचिभिः स्तनकुट्टिममिव विदधताप्रदेशम्.
 आश्विनेयादि सममनोरमनिर्माणपरिशीलनप्रयोजने
 नेवकमलजन्मनः, प्रकटितमृगमदेनापि मृगमदाप-
 हारिणा, चन्द्रकरुचिचञ्चितेनापि विभाकरेण, वंशी-

वाजिवाहकोदय निराकृताराति तिमिरे चिकीर्षति
 विकर्तने प्रावर्ततकर्तव्येषु प्रात्यहिकेषु, उपास्थायत्र
 प्रथमसन्ध्यां भगवत्पादाम्बुजसवनीयनवनीतसम्पत्त-
 ये तदवनीवासिनस्समस्तान् कुत्रलभ्यतेक्षीरमित्यपृ-
 च्छत् । तैश्च नैतामध्यास्तेमहीमाहेयीमहिषी वा दूरे
 च तदित्यभिहितोनियमभङ्गभयानुबन्धिबाधनोदन्व-
 ति निमज्जन् नचिरादनुचरेणसमाहृतं तदवलोक्या-
 श्रयचकितचेताः कथमिवैतदासादितन्त्वयेति दास
 मन्वयुक्त । ततस्तस्मात् “सौरभेयीग्रामं ग्रामं निकषा
 गोपायमानेन विमलतरनीरसरसीसनीडे, नूतनत-
 रुणतारम्भ सम्भावितेन, कौङ्कुमविशेषक विशेषित
 विशालभालेन, अलिकुलानुकूलातिललामकानन-
 कुसुममालाकलितोरु मौक्तिकसारहारभारप्रतिभासित
 वक्षस्थलेन, कोकनदानुकारिकरचरणकमनीयेन,
 भ्रमरकभ्राजित वक्त्राम्भोरुहेण, कमलरागकृत मकरा
 कृतिकर्णकुण्डलकान्ति निराकृत कामक्रेतु कौतुकेन,
 चूर्णित वर्णमानचञ्चलाधिवासितवसनेन,

अप्रथितप्रथम्, अविदितनामधेयकम् । अवसथंग्रामम्, सवेन्नोऽ-
 न्तिकः । छापासच्छायः छायापासतीच्छायाकान्तिर्यस्यसः । यामवत्यां
 निशायाम्, भवतिच राजयक्ष्मामये क्षयः क्रमेणाद्भस्येति । अनन्तमाका-
 शं तदेवानन्तपुटभेदन मतिविरुद्धं नगरं तत्र राज्यस्यशासनम् । निज

यासेचनकेन " तदासेचनकं वृत्तेनस्त्यन्तोयस्यदर्शनात् " इत्येतत्प्रति-
पादितेन । नैचिकी गवामुत्तमागौः, मनिर्बन्धं साग्रदम्, ईयिवान् गतवान्
गन्धर्वनगरं मायानिर्मितं नगरम्, प्रातीतिकविषयं नैयायिकानभ्युपग-
तानिर्वचनीयख्यातिविषयीभूतं रजतादि । अतथाभूतम् उत्तरकालिक
वाधज्ञानविषयीभूतम् ।

मविद्ययानवच्छिन्न मानन्दमयमध्यासितभव मभवम-
पिशास्त्रप्रकाशितं. गायानिष्ठानमपि सर्ववेदिनं म-
नोऽमेयमपि मनसैवदर्शनीयं, भक्तानुकम्पाकलित
श्रीकृष्णकलेवरं समवधारयन्, तदीयगुणगणगरिम-
समज्ञामगायन्निराम् । ततो विधेय ! अहोतव सकल
लोकावधेयं भागधेयम्, आतृप्ति निपीत भमृतामृतं
लोचनपुटेन, दृष्ट्वाच परमारमासीमारामणीयकस्य,
अद्यत्वे तवावसितप्रयोजनंजननं यत्र नयनयो
रतिथिभावमभजतयोगाभ्यास गमितजन्मभिर्यमिभि
रपिदुरा सदावलोकनोद्देवकीनन्दनइत्यादिभृशंदासं
प्राशंसत् । एवं तत्प्रदेशादागत्याकस्मान्नीतेननव-
नीतेन स्थेन्नासहितेनप्रेम्णा परेण भगवतः समातनुत
पूजाम् । अथततः कतिपयेन वासरेण पुरी मूरीकृता
वतारां जगदी श्वेरण, दूरीभूतविधिप्रवृत्तितयाधुरीणां

वशीकृतकरसरसीरुहेण, आकरेणलावण्यसलिलानां,
 क्रीडैकनिकेतनेन सौन्दर्यसारसमुदयानां, सकलसु-
 कृतपरिणाम मवसीयमानेन नयनानाम्, आसेचन
 केन केनचिदाभीरकिशोरेण सिस्त्रासोरुपागतस्य त-
 दीयरुचिरतांचकितगाचिन्तयानस्य विरायतत्रस्थित
 वतो ममाभ्यर्थनात्पुरैव झटितिस्वकीयनैचिकी मुप-
 दुह्य मूल्येनविना समीहितादपिसनिर्वन्धमाधिकंदुग्ध
 मिदमदीयत,, इत्येतदानिशम्य सपदितमुद्देशमीयि
 वान् दासादासादितं स्वाप्नोदन्तमिव, गन्धर्वनगर
 मिव, ऐन्द्रजालमिव, प्रातीति रुविपयमिव, अतथामृ
 तममिवीक्ष्य तं साक्षात्स्वप्रकाशापरोक्षमवच्छेदरहित

गदनेन विपिनेन, इषापलता इषामलस्यमावः । इषामालताच । म
 गायमानं दीपमानम्, नक्षत्रमाळया मसविशतिमंलयाकगु टिकावन्तिम
 दृष्टि तेन दीप्तेन, क्षत्राणां सधियाणां पाञ्चयाप रम्यायानच्छृङ्गितेनश्यामं
 च. अद्भुतस्यसुखस्यस्थित्या मवस्थानेन अद्भुतनिराण्डयति अंग
 मन्त्रां स्मिन्निर्धरादानयापनोरमेण । अदिशानां वन्मानिमैविक
 यवा विदुःसना मन्त्रसुखसंवेकानाम्, मणिवन्तः कापूर्यमाणः, य
 द्भृङ्गः, इषादन्तमनोवेववः । मृगमदः कस्तूरिका । मृगस्य नगरी
 नादिसंनत वन्द्यः चन्द्रः । मयूरविजयिनीचन्द्राकृतिमण्डलं, वि
 षाः दृष्टः । अदिशुःसिंहदाय . विमानाभिमान ज्ञानक्रियाविशेषमन

❀ श्रीनन्दपीश्वरी चरितम् ❀ (१४३)

कान्दसुरभीकृत रवाहुमलिलैः, निःश्रेयस निश्रेणिका
भिरिव लोपानश्रेणीभिरगिराजितैः, मानवमिषेण
जगन्नाथदर्शनार्थं यायाते स्त्रिदशैरिवजनै रवगाह्य-
मानैः, सरोभिरुपशोभिताम्, विपिनपालपालिपीय
माननारिकेलमधुररसैः, अध्वगशतदीयमानक्रमुक-
खर्जुरादिस्फुरत्स्फोतफलैः, अलिकुलकोलाहलव्याकुलैः
एलालताप्रसूनपरियलविलुब्ध गन्धवाहनिषेवितै
रागमनिकैः प्रियदर्शनां, पिङ्गलसुभापितैरिव सङ्ग-
शस्थैः क्षमान्वितैश्च, मैथिलैरिव विद्योपामकैः आगम
रहायकुशलैश्च, सत्कविपद्यवन्धैरिव विशदचरणैर्मृदुल
मधुरैश्च द्विजैराकीर्णमिश्रित्यत् । तत्र च यथाविधि
आम्नायस्येव पङ्कजसङ्गतस्य, खेरिवक्रमलानन्दनस्य
चैत्ररथस्येव सुमनसांसमवायै रासेव्यमानस्य देवस्य
दर्शनादनैपीतकृतकृत्यतामात्मानम् । तत एतदाय
नात्पुंरेव “योऽसौ मैथिल द्विजन्मोगोविन्दनामा
कामाभिरामाकृतिः कृतिकुलललामाति धवल्यशो-
धामात्र त्रियामानन्तरं निरतिशयभक्तिभृम्ना मामा
लोकयितुमागन्ता, स च सार्द्धमेवानल धौतमलकल
धौतप्रतिमधौत युगलेनास्मदीयनैवेद्यं निवेद्य सद्यः
प्रसाद्य सभाजयितव्यः व्यपदेष्टव्यश्चास्माकीनयागिरा

(१४२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

श्रेयसीषुनगरीषु, सद्ग्याख्यामिव तालमालातिलसि
तां, मखमहमहीमिव कदलीवनमण्डितां, चक्रवाक
चक्रवालोपेतैः, कादम्बरमणीरमणीयैः,

स्वप्रकाशेति, स्वप्रकाशप्रत्यक्षात्मकमित्यर्थः, अवच्छेदः परिच्छेदोद्देश
दिना, एतेन नित्यत्वं व्यापकत्वं च दर्शितं भवति 'आनन्दमयमिति, तत्त्वं
“आनन्दमयोऽभ्यासात्” इत्यादि सूत्रैः प्रत्यपादि बादरायणेन वेदान्त
र्शने । अध्यासितः सन्धट इत्यादि सद्विशेष्यरूपतीत्याप्रकारीभूतः भ
संसारोयत्रतम्, अभवमपि अजन्यमपि शास्त्रेण उपनिषदा प्रकाशितम्
त्पन्नं ज्ञापितं वा, मायेति इहविरोधः स्फुट एव । मायिनोऽसर्वज्ञत्वात् जी
वत्, परिहारस्तु आवरणशक्तिविशिष्टतायाविकरणत्वं ब्रह्मणि नोपगम
ते विशिष्टाधिकरणताया विच्छेदणत्वात् तथाच सर्ववेदित्वोपपत्तिः
मनोऽपेयमपि “अवाङ्मनस गोचर” मिति श्रुतेः, इहापि स्पष्ट एव विरोधः
परीहारस्तु उक्तश्रुतौ मनः पदम-स्कृत मनः परम्, “मनसैवानुद्रष्टव्य
म्” इति श्रुतिविरोधात्, मनसैव श्रवणमननादिना संस्कृतेन मनसैवेति
आकलितः गृहीतः, समज्ञां कीर्तिम् । अवधेयं सुश्रूषितव्यम्, अमृतामृत
म् अमृतादप्यमृतं गुधाधिक मितियावत् । अवसितं प्राप्तम्, विधिप्रवृत्ति
रह्योत्पत्तिः जगन्नाथपुर्गगमनेन जीवन्मुक्तता भवतीति भावः । ताळमा
का तालवृक्षस्य करध्वनेर्वा परम्परा, सद्ग्याख्यायां करध्वनिरिति नव्य
सभ्यानामाचारः । कदलीवनं रम्भावनं पताकानिवहश्च चक्रवालं मण्ड
लम्, कादम्बः कलहंसः ।

शैलम्बकदम्बकावलम्बिताम्बुजानिकुरम्बस्यन्दमानम-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१४३)

करन्दसुरभीकृत स्वादुसलिलैः, निःश्रेयस निश्रेणिका
 भिरिव सोपानश्रेणीभिरभिराजितैः, मानवमिषेण
 जगन्नाथदर्शनार्थं मायातै स्त्रिदशैरिवजनै रवगाह्य-
 मानैः, सरोभिरुपशोभिताम्, विपिनपालपालिपीय
 माननारिकेलमधुरसैः, अध्वगशतदीयमानकमुक-
 खर्जुरादिस्फुरत्स्फीतफलैः, अलिकुलकोलाहलव्याकुलैः
 एलालताप्रसूनपरिमलविलुब्ध गन्धवाहनिषेवितै
 रागमनिकैः प्रियदर्शनां, पिङ्गलसुभाषितैरिव सङ्-
 शस्थैः क्षमान्वितैश्च, मैथिलैरिव विद्योपामकैः आगम
 रहस्यकुशलैश्च, सत्कविपद्यवन्धैरिव विशदचरणेर्मृदुल
 मधुरैश्च द्विजैराकीर्णायशिश्रियत् । तत्र च यथाविधि
 आम्नायस्येव पङ्कजसङ्गतस्य, खेरिव कमलानन्दनस्य
 चैत्ररथस्येव सुमनसांसमवायै रासेव्यमानस्य देवस्य
 दर्शनादनैपीत्कृतकृत्यतामात्मानम् । तत एतदाय
 नात्पुर्वं “योऽसौ मैथिल द्विजन्मो गोविन्दनामा
 कामाभिरामाकृतिः कृतिकुलललामाति धवल्यशो-
 धामात्र त्रियामानन्तरं निरतिशयभक्तिभृन्ना मामा
 लोकयितुमागन्ता, स च सार्द्धमेवानल धौतमलकल
 धौतप्रतिमधौत युगलेनास्मदीयनैवेद्यं निवेद्य सद्यः
 प्रसाद्य सभाजयितव्यः व्यपदेष्टव्यश्चास्माकीनयागिरा

(१४४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

निश्रेणिका सोपानम्, इयमुत्प्रेक्षा, एवमग्रेऽपि, त्रिदशैरिवेति इ-
मुत्प्रेक्षा सापह्ववेति विच्छित्तिविशेषः । अध्वगशतर्दायमानं पथिकश्रताप
वितोर्यमाणं तस्यशतेनखण्डयमानं वा । पिङ्गलसुभाषितैः पिङ्गलनागप्रणीत
च्छन्दो निबन्धैः, सद्दंशस्थैः समीचीनकुलवर्तिभिः वंशस्थेन च्छन्दसाऽ-
न्वितैश्च, समाशान्तिः तदभिधानं छन्दश्च । विद्याशास्त्रं कालिकादिर्भग
वती च, आगमोवेदशास्त्रं तन्त्रं च, विशदचरणैः पवित्राचरणैः निर्दोष
पादैश्च, षडङ्गानि सर्वज्ञता तृप्त्यनादिवोधादीनि शिक्षाकल्पव्याकरणार्था
निच । कमलानन्दनस्य कमलायालक्ष्म्या कमलस्य पद्मस्यवाऽऽनन्दनस्य
सुखदस्य विकाशकस्य च । चैत्ररथः कुबेरोद्यानम्, सुमनसां साधूनां
पुष्पाणां देवानां च । आयनात् आगमनात् । कलधौतं सुवर्णम् ।
महाजयितव्यः पूजनीयः ।

तेन तत्सन्ततिसन्तानैश्च नागमनक्लेशो विधेयः, अ-
विहितास्मदी यवदनदर्शनैरपितैर्नानिवाप्तं स्यात्तदु-
द्धवं तदेककस्य समागमेनसुकृतम् ” इति स्वप्नमा
प्नुवानोऽस्वप्नदेशीयतां दधानो देवसेवनेन परायण
स्सकलागमगहन गाहन मृगनायको विप्रगणनीयो
विप्रः क्षिप्रं निरीक्ष्य गवेपणेन पौरस्त्यक्षणदावलोकित
स्वप्ननिरूपित स्वरूपाय तस्मै सम मुद्गमनीययुग्मेन
भगवते निवेदितं नैवेद्यं सादर मुपाहरत् । अथावयव
स्वप्नानादित मुदन्तजातम्, सच केनाप्यलब्ध म-
साधारण मनिप्रमदेन देवस्यान्वितं प्रसादेन निदे-
शितं मूर्त्ता प्रणम्याग्रहीत्, अमन्यतच धन्यतमम-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१४५)

न्यमेवात्मानम्, अवसञ्च जगदीशं सेवमानश्चिरा-
य, अकरोञ्च नवसंस्तवसमेधित मुदितान् सकला-
नेवोत्कलीयान्, अनैषीञ्च व्याकोशकोशतामदसीय
हृदय सरसीरूहाणि, ततोऽतीतेषु गणरात्रेषु कृतनिर्ण-
यः प्रयाणाय विधायच यथारुचि तदुचितानि
कर्तव्यानि, समानन्दितदेवसेवकोऽसकृन्नमस्कृत्य-
नारायणं, संयाज्य चाचला मत्तुरति मयनातिथीच-
कारचरणौ । अथ यदृच्छयाऽऽगच्छन् अभिवीक्ष्य
श्रीसाक्षिगोपालपादपाथोज माहृततरस्तत्रत्यै र्जन-
समुदयैः, हृषितहृदयः, तत्तत्प्रदेशजनिजुषो विषय-
विशेषान् प्रतिलोचने प्रेषयन्, नगरइव सदिन्दु
चन्दन विन्दुसरसाऽभिनन्दिते, अपत्यप्रदपानपयो-
मरीचिकुण्डमण्डिते शमनाशावस्थितेऽपि उदयाच-
लान्तिकतरे, लक्षितलक्षाधिकमन्दिरे पदे प्रतिष्ठितं
स्मरजित्वरं श्रीभुवनेश्वरं व्यलोकयत् ।

अस्वप्नदेशीयतां देवसादृश्यमिति यावत् । विप्रगणनीयः विशेषेण प्र-
कृतयगागणनीयः विप्रैषु गणनीयो वा उद्गमनीयं धौतवस्त्रम्, असाधारणत्वे
केनाप्यलम्बत्वं हेतुः, अन्यमेव लोकोत्तरमेव, लोकेषु केनापि तादृशप्रसादस्या
प्राप्तत्वात् । संस्तवः परिचयः । गणरात्रेषु वहीषु निश्चासु । समानन्दितेति,
द्रविण दानादिनेति भावः । अयनं मार्गः, सदिन्दुचन्दनेति, शोभनचन्द्र
चन्दनयोश्शेषेततया सदृशेन विन्दुसरसा विन्दुसरोवरेण, शोभनेन्दुसदृशः

चन्दनस्यविन्दुर्यत्र तादृसेन सरसेन
 अपत्येति, अपत्यप्रदं पानंयस्य तथाभृतंपयोयत्र तेन
 इत्यर्थः क्षमनाशा यमस्यतृणा दक्षिणदिशाच, उदयाचलः
 वृद्धिः । सूर्योदय पर्वतः उदयाचलनामधेयस्तत्प्रान्तेस्थितो गिरिश्च

तत्रच क्रियन्ति वासराणि शङ्करसमाराधनेनातिवा-
 ह्य वाह्याति कीर्तितकीर्तिः सुप्रीतचेता अलञ्चकार
 जनेश्वराशाययिनीं सरणिम् । एवमासन्नानि त्रिदश-
 सदनानि पावनवनवाहिनीश्च तटिनी स्सम्भावयन्
 चिररात्रायाक्लान्तकलेवरशान्तस्वान्तो निमीलदल-
 नलिन निलयान्विहाय तन्मधुनि पानप्रमत्तभ्रमद्भ-
 मर प्रकर विरुतनान्दी समारभ्यमाणे चित्रे मदनना-
 टके, उपपते रिव कलाकरस्यकरसम्पर्कलवेनापिसङ्को-
 च मञ्चन्तीषु रविकामिनीषु कमलिनीषु, चिरवि-
 युक्तकुमुदिनीप्रेमाणमिव कौङ्कुमरागकैतवेन धारयति
 कुमुदिनीनायकं, नितान्तमलिनच्छायतां शनैरुपग-
 च्छति नववधूवदनपङ्कजे, निशादौ निशान्त माज-
 गाम । दूरादेव दृष्टमात्रे तस्मिन् सुचिर विलोकनाद-
 भिनवीभूतेनेव प्रणयपुञ्जेनातीव विकुर्वाणान् सर्वा-
 नेव वाष्प सलिलासार शोभितास्यसारसान् सम्भूया-
 वस्थितान् निसर्गानुराग शालिनो वन्धुवर्गान्यथाक्रमं
 प्राणाधिकान् प्राणमत् प्राणम्यतच कतिपयेन तेषाम्,

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१४७)

समालिङ्गयतचाङ्गेषु सकलै रुक्कलिकाऽतिविकलैः,
अथससम्भ्रम प्रधावितविधेयजनाधीयमान मासन-
मुपाविशदासीनेषु गुरुजनेषु, अपृच्छयतच कुशलं-
तैः, अजिज्ञासतच प्रत्येक मनामयं कनीयसाम्,
ततोऽति दुरासद तीर्थागत निजजनो

। नेश्वराशा उत्तरदिशा । वनं जङ्गम्, तटिनीः नदीः, 'निमीळ दिति,
। यमानकवाटे शौण्डिकाकयेसति मयपास्ततोनिः क्राम्यन्तीति वस्तु-
तिः, नलिनमेव निलयः, चित्रइति, मधुपान प्रमत्तस्य नान्दीपाठक-
दितिभावः । उपपत्तेः जारस्य । पङ्कजइति, युक्तमेवैतत् पङ्कजस्य
व्यायां क्रमेणमक्लिन्नच्छायतेति । निशान्त भिति सदनार्थकम्, एवंच
। धा भासालङ्कारो व्यज्यते, निशादौ निशाया अन्तस्य प्राप्त्यसम्भवेन
। चस्यापाततः प्रतीतेः । विकृर्वाणान् हृष्टपानसान् । उत्कलिकेति,
लिङ्गनस्येत्पाशयः । आधीयमानं दीयमानम् । तैः गुरुजनैः ।

चितार्चादिसत्कारं विन्दन्नतितरामनन्दत । विज्ञातभा-
बुकै स्तैरनुयुक्तो विषमतममृति प्रवृत्ति मादितः क्रमेण
कृत्स्नामेव न्यवेदयत् । तदुदन्तसन्ततिश्रवणाहित-
विस्मयास्तेमुदं परमामुपागमन्, अभ्युदैर्यैश्च तन्म-
हानुभावताया निवेदकानिवचनानि, कर्णाकर्णिकयाच
तावार्ता विश्रुतता मयासिषु जंगतीतलेषु, अवर्धत-
चवद्भुविधोतस्य कार्तिकराकाकला करकला कीर्तिल-
तिका, प्रतिव्यधत्तच गिरिगणगुरोर्गिरि माणं तदीय

माहात्म्यम्, येत्रतस्यतनया विद्यापति दामोदर राम-
नाथ देवनाथ गोपीनाथ मधुसूदन जनार्दना भिष्मा-
नो, दवीयसीमपि महामहोपाध्याय पदवीं दधाना
अपाकृत भूमण्डलपण्डिताभिमाना, असमानसम्मा-
ना, विकाशित भुवनानननलिनकानना, दीपिता
भिजनाः, प्रसन्ना, गुणसौरभलोभनिपतदस्तोक लोक-
मनोमधुपगणा, धीधनचणा, धिक्कृतधिषण धीर-
धिषणाः, सरसपेशलसत्यभाषणा, नवनवोद्यद्विशद्य-
मानसद्यशसः, विदितसर्वदिव्यविद्याः, संसद्यनन्य-
तुलितहृद्यानवद्य गद्यपद्यवैशद्यविद्योतितभारतीकाः,
द्युमणिद्युतयः, सदाश्रवाः, श्रितश्रौतकृत्याः, परपरीवा-
दपराचीनचेतसः वाग्मिनः, हरिचरिताकलनकौतु-
किनः, नयोपनिषद्दृष्टिनिः, रमणीय परस्परप्रेमशा-
लिनः, न्यायवादिनः, सोमपीथिनस्समासन्, तेऽपि
पितुः प्रभावं प्रतिपद्य परां प्रसन्नतां प्रापन्

सत्कारमिति, दृवाक्षतादिग्रहणमित्यर्थः । भावुकैः कुशलैः, प्रतिष्प-
धन्निराकरोत् । असमानम् अतुल्यम्, धिषणः सुरगुरुः, उद्यद्विशद्य-
मानेत्यत्र कार्यकारण पौर्वापर्यविपर्ययलक्षणाऽतिशयोक्तिः । सदाश्रवाः
सत्यप्रतिज्ञाः सतां वचनेस्थिताश्च । उपनिषत् रहस्यम्, सोमपीथिनः
सोमयाजिनः ।

तेषा मादिमाश्रित्वारः प्रोच्चातिचारूच्चावचन्यायवचो-

गोचरोचित प्रचुरचिरविचारतुल चातुरी चमत्कारच-
यचकितचेतसा ऽवसायरसाभृतोशाब्दानुशासनेऽर्क-
स्येव कल्याणोदकतर्क सम्पर्क भागिविषये कर्कशम-
तिशालिता मर्पितेन तर्ककानन पञ्चाननेति पदेन
सनाथो गोपीनाथो निखिलप्रतिभाषिमनीषि मानमर्द-
नेन जनार्दनेन सार्धं मध्यापयन्तो मेधाविनोऽन्ते वा
सिनोव्यराजन्त ॥ तत्रा प्रतिहत प्रतिभा प्रतिभासितो
देवनाथस्तु प्रत्येकंतन्त्र मन्तरायापरतन्त्रो निरन्तर
मादरेण चिरेण यथेष्ट मध्यगीष्ट, समस्तशान्न मंपार
पारावार ममध्यान्मतिवैभवेन मन्दरेण, यस्मादधीत्य-
दवीयसोऽपि दूरदर्शिदलादर माददाना निजदेशगौ-
रवोदवसितता मासेदिरे, यदालयः प्रस्थितस्यापि
कोविदकथायाः पन्थान मदर्शयदिव मण्डनमिश्रम-
न्दिरस्य सुषमाम्, यस्सङ्ख्यातिगात् सङ्ख्यावद्भिरपि
दुरवबोधाभिषेयाद् कौमुदीनामधेय प्रधानान्निबन्धा-
न्निरमात्, यश्च विदुरोऽपि धृतराष्ट्रपक्षपाती, गोत्रा-
मोदनावस्थोऽपि देवनाथः, कलियुगजातजन्माऽपि
त्रेताश्रितः, प्रश्रितः, द्रयातिगोऽसाधारणः, स्वाहृत
माश्रमशुचितेन सुकृतेन पालयन्,

तेषाम्, उक्तानामष्टानां, मध्ये चत्वारः, विद्यापतिमारभ्य रामनाथान्ताः,
उच्चावचं नैकभेदम्, रसाभुता, राज्ञा, शालिशमित्यस्य स्वसायेत्यनेन

(१४८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

माहांत्म्यम्, येत्रतस्यतनया विद्यापति दामोदर रा-
नाथ देवनाथ गोपीनाथ मधुसूदन जनार्दना भिषा-
ना, दवीयसीमपि महामहोपाध्याय यदवीं दधाना
अपाकृत भ्रमण्डलपण्डिताभिमाना, असमानसम्मा-
ना, विकाशित भुवनानननलिनकानना, दीपिता
भिजनाः, प्रसन्ना, गुणसौरभलोभनिपतदस्तोक लोक-
मनोमधुपगणा, धीधनचणा, धिक्कृतधिषण धी-
धिषणाः, सरसपेशलसत्यभाषणा, नवनवोद्यदिशद्य-
मानसद्यशसः, विदितसर्वदिव्यविद्याः, संसद्यनन्य-
तुलितहृद्यानवद्य गद्यपद्यवैशद्यविद्योतितभारतीकाः,
द्युमणिद्युतयः, सदाश्रवाः, श्रितश्रौतकृत्याः, परपरीवा
दपराचीनचेतसः वाग्मिनः, हरिचरिताकलनकौतु-
किनः, नयोपनिषद्दूर्दर्शिनः, रमणीय परस्परप्रेमशा-
लिनः, न्यायवादिनः, सोमपीथिनस्समासन्, तेऽपि
पितुः प्रभावं प्रतिपद्य परां प्रसन्नतां प्रापन्

सत्कारमिति, दूर्वासतादिग्रहणमित्यर्थः । भावुकैः कुशलैः, प्रति-
घञ्चनिराकरोत् । असमानम् अनुपमम्, धिषणः सुरगुरुः, उद्यद्विश-
मानेत्यत्र कार्यकारण पौर्वापर्यविपर्ययलक्षणाऽतिशयोक्तिः । सदाश्रवाः
सत्यमतिज्ञाः सतां वचनेस्थिताश्च । उपनिषत् रहस्यम्, सोमपीथिनः
सोमयाजिनः ।

तेषां मादिमाश्रित्वारः प्रोच्चातिचारुच्चावचन्यायवचो-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१४९)

गोचरोचित प्रचुरचिरविचारतुल चातुरी चमत्कारच-
यचकितचेतसा ऽवसायरसामृतोशाब्दानुशासनेऽर्क-
स्येव कल्याणोदकतर्क सम्पर्क भागिविषये कर्कशम-
तिशालिता मर्षितेन तर्ककानन पञ्चाननेति पदेन
सनाथो गोपीनाथो निखिलप्रतिभाषिमनीषि मानमर्द-
नेन जनार्दनेन सार्धं मध्यापयन्तो मेधाविनोऽन्ते वा
सिनोव्यराजन्त ॥ तत्रा प्रतिहत प्रतिभा प्रतिभासितो
देवनाथस्तु प्रत्येकंतन्त्र मन्तरायापस्तन्त्रो निरन्तर
मादरेण चिरेण यथेष्ट मध्यगीष्ट, समस्तशास्त्र मंपार
पारावार ममशान्मतिवैभवेन मन्दरेण, यस्मादधीत्य-
दवीयसोऽपि दूरदर्शिदलादर माददाना निजदेशगौ-
रवोदवसितता मासेदिरे, यदालयः प्रस्थितस्यापि
कोविदकथायाः पन्थान मदर्शयदिव मण्डनमिश्रम-
न्दिरस्य सुषमाम्, यस्सङ्ख्यातिगान् सङ्ख्यावद्भिरपि
दुरवबोधाभिधेयान् कौमुदीनामधेय प्रधानान्निबन्धा-
न्निरमात्, यश्च विदुरोऽपि धृतराष्ट्रपक्षपाती, गोत्रा-
मोदनावस्थोऽपि देवनाथः, कलियुगजातजन्माऽपि
त्रेताश्रितः, प्रश्रितः, दयातिगोऽसाधारणः, स्वादृत
माश्रममुचितेन सुकृतेन पालयन्,

तेषाम्, उक्तानामष्टानां, मध्ये चत्वारः, विद्यापतिमारभ्य रामनायान्ताः,
उच्चावचं नैकभेदम्, रसाभृता, राज्ञा, शालिन्नामित्यस्य अवसायेत्यनेन

(१५०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्राक्तनेनान्वयः । प्रतिभाषिमानः, प्रतिवादिनामभिमानः, सङ्ख्या बद्धिः
बुधैः, कौमुदीति, अधिकरणकौमुदी, स्मृतिकौमुदी, साहित्य कौमुदी,
मन्त्रकौमुदी प्रभृतीनित्यर्थः । विदुरः तन्नामधेयोऽर्जुनस्य सुहृत्, ज्ञाताच,
धृतराष्ट्रः दुर्योधनजनकः धृतं राष्ट्रं राज्यं येनासौ धृतराष्ट्रो राजाच ।
गोश्रामोदनम् पर्वतानां पृथिव्याश्च महर्षणम्, देवनाथः सुरेश स्तन्नामा-
च । त्रेता एतदभिधानं युगम्, दक्षिण गार्हपत्याहवनीयाग्नयश्च । प्रश्रितः
विनीतः, द्रव्यातिगः, निवृत्तरजस्तमोगुणः, असाधारणः अतुलितः

आम्नायस्मृति निदेशित मनुचरन्, विजितोन्मद
मदनमालव वियोगिवनितावदनरोचिषा यशसा व-
सुमतीं विभासयन्, अजीजनज्जनाना माह्लादम् ॥
एवमेव भूमिदेवतापनिषूदनो मधुसूदनोऽपि मनो-
मतयाऽवधुतमधुसखः, शैशवाकलित सकलविद्याव-
दातहृदयः, सद्भिचाराभिनिवेश पेशलातिमांसल
मीमांसोदयः, सोदयः, जल्पनीयानल्पकल्पपर्यन्तस्था-
य्यनन्यदीयकल्पकल्पनाशक्ति-सीमन्तिनीतल्पभृतः,
अलक्षितप्रति पक्षरक्षणदक्षविचक्षणः, सूक्ष्मतम (शे-
मुपी) चेतनासूचिकाभि र्मोचनो ग्रन्थग्रन्थि निव-
हस्य, समाराधको गणाधिपस्य, पारदृश्या विश्वाश्रि-
तशास्त्रसरस्वदोषस्य, अवतारो वाग्देवतायाः, निख-
धि प्रवृद्धानन्द विभावसु विकचवदनारविन्दतां ज-
नतां प्रापयन्, उपदेशादानपात्रच्छात्रसन्दोहानुपदि-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१५१)

शत्रु, न्यक्कृत केरलकमनीयकामिनीकपोलकान्त्या
कीर्त्या विशदयन् मेदिनीवलयमदीप्यततराम् । येन
विरचिता अदभ्रसद्युक्तिगर्भास्सन्दर्भान्विरस्यकस्य
नामापश्चिमचेतनाञ्चितस्य विपश्चितश्चेतश्चमत्तुर्व-
न्ति ॥ अथ स्वसजातीयवियुक्तश्चमितसम्बर्धनक्षमे
वहतिमनोभवाशुशुक्षणि सन्धुक्षणदक्षे दक्षिणसमीरणे,
मञ्जुलं गुञ्जति नवमञ्जुमञ्जरी रस सम्पलम्पटे
मिलिन्दपुञ्जे, मधुरकुहूरुतं मुहु स्समालपति ललना-
दशनां शुकातुकारि प्रवालमालशाल रसालशाल-
शाखावलम्बिनि तत्प्रसुतप्रसूनसामवास्वादनो

भूमीति, एतेन मधुसूदनठक्कुरे द्वे स्तादृश्यमभिषामूलयाव्यञ्जन
यावोध्य, भूमिदेवस्य भूमिदेवयोश्चतापनिपुदनत्वस्य साधारण धर्मत्वा
त् । मधुसखः कामः, अभिनिवेशः आग्रहः अभितः प्रवेशश्च, मांसलः
स्फीतः, मीमांसा विचारः, सोदयः उत्ततः, अनन्यदीयकल्पा अनुपमा,
नदभ्रावहुला, अल्वितस्यपूजितस्य । स्वसजातीयेति, इवसितदक्षिणानिञ्ज-
योर्बायुत्येनसाजात्यम्, सजातीयमुद्धमयन्तिलोका इतिवस्तुस्थितिः । आ-
शुशुक्षणिः अग्निः, सन्धुक्षणं दीपनम्, लम्पट इति, नायकविशेषव्यवहा-
रसमारोपान्मिलिन्दे समासोक्तिः, दशनांशुकोऽधरः, शालेति, शोभमा-
नेत्यर्थः । तदितिशाखार्थकम् ।

दितमुदिते ससुदये पिकानाम्, ऋतुनूतन सेमागम-
जातलज्जयेव विनतायां श्रितनवपलाशवाससिव्रततौ,

विरहिदेहदाग्नाय कदम्बदागमिनि केनचित्काले
 न्मयस्त्रिनिपतेः, पलाश कलपौनवेनञ्जानोपगति
 जुहवतिपल्लवशकलेऽप्योगिना मागमिन्नेन कृतु
 नागद्वेन, विरुन कपलोरुताकाण्डहीनकलसं
 कुल कोलाहलत्याकले प्रनिभातिपुष्पमिलिते ममि,
 कान्तेन माकं कुसुमानवयकृतदलं कल्पति कदम्बके
 कामिनीनाम्, पञ्चमम्बेण प्रमुदिनमुद्गीयमानवम-
 न्तरागापद्यतद्वयेषु लोकेषु, वात्स्यायनविवोवितवन्व
 वट्टविधां निधुवनक्रीडामनिशं विदधानेषु स्मरश-
 कृतकम्पदम्पतिजनेषु, कामसामन्तवसन्तपाश्ययेव
 मल्लिकावकुलमालती मालया प्रतिवध्यमानेषु भृङ्गा-
 टनासङ्गिनिशृङ्गाटके तरुण मानसेषु, पटवासवामितवस
 नवदनै र्युवजनै मुरजरवमनोहरमुच्चैर्गीयमानाश्ली-
 लगीतिगाथादोहा निशमनेन विहसन्तीषु समन्ततो
 नागरिक सीमन्तिनीषु, प्रसूनाशुगदैवतदरिद्रता
 दूरीकरणदर्शितदातृभावे, वनितावयव इव कनकरुचि-
 कम्पक चम्पकद्युति मनोरमे, पूर्वानुरागइव उत्कलि-
 का निकरमेदुरागमे, भूपति भवनइव विकशितका-
 ञ्चने, वेशसन्निवेशइव गणिकाशतद्रवपरायणमधुप-
 गणे, वैद्यक

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१५३)

ऋतुः वसन्तः स्त्रीणांपुष्पसमयश्च, वाससीति, ऋतौ चतुर्थदिवसे
 त्रवंगासो गृह्णन्ति स्त्रिय इत्याचारः । ककचेकरपत्रे, पल्लवकलैः मांस-
 खण्डैः, आगमिकेन, तान्त्रिकेण, वात्स्यायनः कामशास्त्रप्रणेता, पादयया
 पाशसमूहेन, शृङ्गाटके चतुष्पथे, पटवासः आवीरकः दूरीकरणेति, पुष्पा
 णामाचुर्येणाधिकशरलाभादितिभावः, चम्पकद्युतिः चम्पकस्य तत्तदृशी
 वा कान्तिः, उत्कलिकेति, उत्कलिकाया उद्गतकोरकस्य उत्कण्ठाया वा
 निकरेणमेदुरस्सान्द्रः अगमो वृक्षो यत्र आगमो यस्येति वा सतादृशः । का-
 श्वनपदं कचनारेति भाषया प्रयुक्तस्य पुष्पस्य, सुवर्णस्य च बोधकम् । देशः
 ऐश्याजनाश्रयः, गणिका यूथिका दाराङ्गनाच, द्रवः केलिः द्रवणं च,
 मधुपो भ्रमरः मद्यपोऽप्यभिचारी च ।

इव शतप्राशामोदितजने, सुन्दरीस्तनइवनवमालिका
 समुद्दीपिते, द्वारवतीनगर इव माधवीस्मितधवलिते,
 वैभातिक विलासिनीश्कोजइव प्रियनखक्षतकिंशुभा
 भिरामे, केशवइव सुरोलासप्रकाशवे, संजातरजसा-
 पि उपभोग्यया प्रसूनसंहत्या चित्रीकृते, पुष्पन्धय
 निचयपरिधीयमान माधवीमधूनां दूरदर्शनादपि मयः
 प्रगाद्यतामहंयूनागपियूनामङ्गनाहैमवाहुयुग्म निग-
 ङगाढवन्धनेनाभिनन्दनीये विलसति सुरभिसमये, क
 दाचिदसौ देवनाथः प्रकृत्याद्यशक्तिभक्तियुक्तो गृहीत
 तदीयदीक्षो मन्त्रनिद्रिकामः कामाख्यागमनाय
 पितुः पादपद्मेषु प्रार्थयां वभूव । सच जगतीसङ्गति

(१५४) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

कीर्तिस्स्वसङ्गिनिमङ्गीचकारतङ्गमयितुम्, ततो देव-
नाथस्तदधिगम्य सुप्रीतमानसः प्रयाण समयं प्र-
तीक्षमाणस्तस्थौ ।

इति मैथिल श्रोत्रिय श्रीबालकृष्णमिश्र विरचिते
लक्ष्मीश्वरी चरिते तृतीयउच्छवासः ॥

शतप्राशः कवीरो भैषज्यंच, आमोदितः सुगन्धिविशेषंप्रापितः
आमयनिराकरणेन हर्षितश्च । नवमालिका सप्तला नवीनामालाच, माधवी
स्मितं वासन्तिका विकाशः माधवस्त्रीहसितंच । नन्दक्षतेति, इहविशेष-
विशेषणभारवैपरीत्यात्साधारणधर्मत्वं बोध्यम् । सुरोल्लासः उल्लसितं म
देवोल्लासश्च, प्रकाशके जनके, रजः स्त्रीणां मार्तवं परागश्च, चित्रांक
किर्मीरिते विश्रयविषयीकृतेच । पुष्पन्धयोभ्रमरः, धीयमानं पीयमानम्
अहंयुनाम् अहङ्कारवताम्, अभिनन्दनीयइति, प्रमत्तस्यशृङ्खलयावन्धन
दितिभावः, सुग्भिः वमन्तः, आद्यशक्तिर्भगवती, स्वसङ्गिनमिति, नत्ते
काकिनमितिवात्तल्यं व्यज्यत इति ॥

इति तृतीयोच्छवास टिप्पणी ॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१५५)

❀ अथ चतुर्थोच्छ्वासः ❀

अनवगत नरेन्द्रभावं किमिमंजन मोहसेपरांभवितुम् ।
सोऽयमनन्यसदृक्षोऽवहितो जागर्तिजिह्मगत्रान् ॥१॥

अथामस्तरङ्गिणीप्रवाहइव हरिपदपरिच्युते, निपी-
तासवइव गलितांशुके, अधोनिपतितंच, निशानाय-
के, पुष्कराकारकारोदेषु संपमितानुदयादेवचञ्चरीक-
निचयानचिरेण मोचयितरि, मयूपमालामयेऽपि कौ-
शिककुलान्धकारकारके, मित्रेऽपि कोकशोकपरिप-
न्थितामुपगते पुरुहूतवधू पाग्निजातप्रसूनइव, लोका-
लोकलोचनइव, गगनाङ्गणरत्नप्रदीपकइव, दृक्-
पथमवतीर्णे विभाकरे, कृतापचितिकृत्यः शुभेऽहनि
प्रदक्षिणं ज्वलतिभव्ये हव्यवाहने, शिशिरसौमनसा-
मोदनोदने वहत्यनुकूलेपवमाने, प्रसन्नाननासु आ-
शासु, पुरस्ताच्चगति धृतधवलपीवरपयोधरे धेनुमण्ड-
ले, परिलसति श्रुतिपारग्यायिनि विश्रुते श्रोत्रियगणे
कनककलसप्रतीकाशकुचयुगलविनतायामग्रतः स्थि-
तायां दिव्यवनितायामसौ धोविन्दः प्रकामं कामाख्यां
कामप्रतिमानेन मानन्द ममन्देहेन समंदेवनाथेन
प्रतस्थे । गत्वाच कियतिदूरे सविशेषभीषणस्रोतो
भिरनुलां, प्रोपितभर्तृकामिवोर्मिं

श्रीः । नरेन्द्रः विषवैद्यो राजा च, सदृक्षः सदृशः अवहितः नावधानः,

❀ अथ चतुर्थोच्छ्वासः ❀

अनवगत नरेद्रभावं किमिमंजन भीहसेपरांभवितुम् ;
सोऽयमनन्यसदृक्षोऽवहितो जागर्तिजिह्वगत्रात ॥१॥

अथामस्तरङ्गिणीप्रवाहइव हरिपदपरिच्युते, निपी-
तासवइव गलितांशुके. अधोनिपतितेच, निशानाय-
के, पुष्कराकारकारोदेषु संयमितानुदयादेवचञ्चरीक-
निचयानचिरेण मोचयितरि, मयूषमालामयेऽपि क्री-
शिककुलान्धकारकारके, मित्रेऽपि कोकशोक्कपरि-
न्थितामुपगते पुरुहूतवधू पाणिजातप्रसूनइव, लोका-
लोकलोचनइव, गगनाङ्गणरत्नप्रदीपकइव, इन्द्र-
पथमवतीर्णे विभाकरे, कृतापचितिकृत्यः शुद्धेन्द्र-
प्रदक्षिणं ज्वलतिभव्ये हव्यवाहने, शिशिरवेग-
मोदनोदने वहत्यनुकूलेपवमाने, प्रसन्नानन्द-
शासु, पुरस्ताच्चरति धृतधवलपीवरपयोधरे-
ले, परिलसति श्रुतिपारयायिनि विशुद्धे-
कनककलसप्रतीकाशकुचयुगलविनये-
तायां दिव्यवनितायामसौ गोविन्दः-
कामप्रतिमानेन नानन्द ममन्दे-
प्रतस्थे । गत्वाच क्रियतिदे-
भिरतुलां, प्रोषितभर्तृकामिन्दे-

श्रीः । नरेन्द्रः विषयेषो राजाह, नरेन्द्रः, इति-
॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१५७)

दि मलयमारुतान्दोलित मिलितमिलिन्दवृन्दमालती
व्रततिनिकेतनान्तिकसञ्चभाणचाम्पेयरुचिरुचिरतनु
लताभिर्मृगलोचनाभिः चीनमेचकसिचयाञ्चित प्रक-
टितप्रायस्तनगिरीशावलम्बि बन्धनातिविभ्यत्कुन्तल
भुजङ्गमसंयमनच्छन्नदूरीकृतदुकूल त्रिवलिबाहुमूल
दर्शनेन वशीकृतैः, कटाक्षविशिखनि क्षेपणेनवेधित
हृदयैरध्वगसमुदयैस्सङ्कटं, तपनीयकान्त्याऽपिश्याम-
या प्रमदया, विभक्तेनाप्यपृथग्जनेन

माला परम्परा । आवर्तः अम्भसांभ्रमः, शास्त्राद्यावृष्टिश्च । पाठीन
शालाश्रितां पाठीनशालाभ्यां मत्स्यविशेषाभ्यामाश्रितां पाठकजनागारमा-
भितांच आकाङ्क्षतः दृष्टोविपर्ययाश्च । नक्रस्तदभिधानो जलचरविशेषः
नासागुञ्चनक्रम “नासाग्रेचित्तस्मिन्” इतिहि पातञ्जलसूत्रम् । अवहारो
ग्राहः शर्करादिस्वादकृतं भक्षणीयञ्च । तरणिः नौकादिवाकरश्च । दण्ड
कादण्डकारण्यम्, अगाधकवन्धां गम्भीरजलां श्वभ्रस्थितकवन्धाभिषदा
नवांश्च । उत्तानपुष्कराम् अगभीरमलिलाम् ऊर्ध्वार्ण शयितविहगांश्च ।
पटलंसमूहा, पाटवितः पटुः, चाटु प्रियम्, सङ्कटं व्याप्तम्, वाटः पथः,
वाटिका उपवनम्, पटितः निर्मितः, गिरीशः हिमाचलः शिवश्च, वि-
भ्यदिति, इतरोऽपिबन्धनादिभ्यत् शिवमवलम्बत इति, सङ्कटं दुस्तरम्,
तपनीयं सुवर्णम्, श्यामया श्यामरूपया मुग्धयौवनयाच, विभक्तेन पृथग्भू-
तेन विशिष्टभक्तेनच, अपृथग्जनेन पृथग्भूतजनभिन्नेन, अपामरेणनीचेनच

जनेनचालितं, दिपमाशुगशासनैकपरवशं, प्रति
निधिमिव विद्याधरपुरस्य, तौर्यत्रिक निर्माणसीमान

(१५८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

मिव विश्वकर्मणः, अध्यापनालयं कलाकलापस्य,
प्रयोगधाम काम कामाख्याद्यांगमाभिधेयस्य, तिल-
कातिललितालिकानां, यौवनमददेशितविदग्धतानां
विमुग्धनैगमानां, कामकुलदेवतानां, मुक्तावलीभिर्ग-
निषेवितोग्रकुचशालिनीनाम् अंशुकोचिनकृत्यकारि-
चिकुरस्थितीनां, बहुविधासपत्नरत्नमालिकाञ्छलेन
ग्रहगणमपिवशमानयन्तीनां, बलिन्नयवलिततया वै-
रोचनिपुरीतोप्यधिकश्रियमावहन्तीनां, स्मरणगोचरी-
कृतशरीरमपिस्मरं सपदिनरुणयन्तीनाम्, उज्ज्वलम-
तिमतीनाम्, इतस्ततोभ्रमन्तीनां, रमणीमणीनां म-
णिमयमञ्जुमञ्जीर शिञ्जितर्भनोहरं. बङ्गभूमिभूषा-
करं नगरं समामसाद । यत्र यमः केशपाशेषु, निय-
मोनखक्षतेषु, आसनबन्धो निधुवनेषु, प्राणायाम-
स्तदवसानेषु, प्रत्याहारश्चेलाञ्चलेषु, धारणा वशोरुहे-
षु, ध्यानं विटपाग्रगामिषु बलीमुखेषु, समाधिस्मुरता-
न्तरालेषु, बन्धनविमुक्ति

अत्रिं भूषितम्, शोभनैकेतिपूजेन गजगागन्पागवश्यविशोध्यजमानाणि
गतिभूयं व्यज्जयति । त्रीनिकं नृत्यगीतवाद्यम् । प्रयोगोऽनुष्ठानम्, अ-
कोपाटः, यौवनमददेशितोऽनेन पदोऽनेनात्रनयनं गम्यते, नैगमानां
का निगपदेशितम् । मुक्तावलीभिः मौक्तिकमालाभिः मुक्तजनयन-
विदग्ध, यद्वृत्तः यद्वृत्तः विदग्धोऽसकृन्तः । अंशुतोनिषेवि, वेगव-

(१५८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

मिव विश्वकर्मणः, अध्यापनालयं कलाकलापस्य,
 प्रयोगधाम काम कामाख्याद्यागमाभिधेयस्य, तिरु-
 कातिललितालिकानां, यौवनमददेशितविदग्धतानां
 निमुग्धनैगमानां, तामकुलदेवतानां, मुक्तावलीभिर्णि-
 निषेवितोग्रकुचशालिनीनाम् अंशुकोचितकृत्यकाणि
 विहरस्थितीनां, बहुविधामपत्नरत्नमालिकाच्छलेन
 प्रहृगणमपिाशमानयन्तीनां, बलिन्नयनलिनतया वै-
 रोचनिपुगीतोप्यधिकश्रियमानयन्तीनां, रमाणगोनी
 कृतशरीरमपिस्मरं मपदिवरुणयन्तीनाम्, उन्नय-
 तिमतीनाम्, इतस्ततोऽप्रयन्तीनां, शरणीमणीनां म-
 णिमयमञ्जुमञ्जीः शिञ्जितपीनोदः, नन्दुभूमिभूष-
 कं नमः नमाममाद यत्र यमः कशपाशेषु, त्रि-
 मोनस्यशतेषु, त्रायनवन्धो विधुवनेषु, प्राणागम-
 स्तदवसानेषु, प्रत्यादायश्चेत्यामन्येषु, धाम्ना वशेषु
 पु, व्यनं विदयाप्रणामिषु वदीषुषेषु, ममानिम-
 स्तदवसानेषु, वन्द्यनीदृशानि

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ॥ १५८ ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥
 ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६१)

अथ निशीथे कौतूहल्येषु नागरिकेषु केनचि-
न्मान्त्रिकेणादसीय शीलितमिद्विशालितापरिचित्रो-
पाकृतोच्चायन प्रणालिकया कियदुदानीयमानो देव-
नाथः पाथश्रमनादयाऽपि निद्रया भयादिव सपदि
निराकृतं नयन नलिनं निशायामपि ममुन्मीलयन्,
ऊर्ध्वनध्वानमध्याममानमात्मानं कलयन्नेव केतनीकृ-
तो नितान्तमातङ्केन, किङ्करीकृतोहृदयकम्पनेन,
क्षेत्रीकृतो वैवर्ण्येन, विषयीकृतस्तकलांगसंगिना स्वे-
दोदयेन आत्मसात्कृतश्चिन्ता सन्तानेन, आलि-
ङ्गितो वाष्पोत्पीडेन, सगञ्चितो रोमाञ्चेन,
निर्कर्तव्यताविमृष्टउद्गृष्टशास्त्रीयगूढविषयोऽपि क्षणमु-
परिपार्श्वेऽधो दिक्षुविदिक्षु च प्राक्षिपद्विस्मृतनिमेषं
चक्षुः । ततो हा तात ! हा तात ! नोदीक्षसे मन्दभाग
धेयं तनयम्, किमेतदकस्माद्वपनतं, महीतलं विहा-
य विहायसभायापितोऽपि अहह नासादयामि स्थि-
रताम्. किन्तु केनाप्याकृष्यमाण इव कुत्रचिद्ब्रजा-
मि, नजानेकस्यवा कुतोवा विषममिदं विजृम्भित-
म्, तदेतदपायतोऽह्नाय परित्रायतां परित्रायता मिति-
तारतारै स्वरै रचेतनेष्वपि निजवेदनावबोध माद-
धानः प्रतिध्वानरूपेणोपाधिना भवनभित्तिकाऽभिलि-
खित गीर्वाणगणेनाऽपि तरुणकरुणया कृतानुभाषणः

(१६०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चण्डितम् ❀

नारायणमिव शङ्खचक्राञ्चितं, हरमिवविधृतत्रिशूलं
काश्मीरप्रदेशमिवकामनैकसम्पादकं देवीमुपासितु
मागतैरिव चित्रस्थितै स्त्रिदशनिकरैर्विराजितं, पशुरु-
धिररक्ताजिरं श्रीतारामन्दिरं विलोक्यमुदमानुवन्तु
पागमत् , भानुमानप्यध्वश्रमकृान्तइवसानुमन्तमा-
श्रयत् । ततोऽसौ विधिमनुरुध्यमानोव्यधत्त संध्यास-
म्बन्धिकरणीयम् , पूजकेनद्विजेननीराजनायापावृते
द्वारे समपूजयदात्मजोदवचितैरर्चनसमुचितैर्भगवती
मकीटलूनैः प्रसूनैः ।

प्रतिकृतिः प्रतिबिम्बः, एतेनकपोलेवैमल्यातिशयोध्वन्यते । चन्द्रं
बियोगिनीतापदायकत्वाद्विधुं कर्पूरचं, स्वाभिप्रायं स्वाभिप्रायविषयम् ।
नाकनायकनिकायं देवमन्दिरम् , चन्द्रिकाद्वेषत्रिषयभूतया चन्द्रिकाषिक
स्वच्छयेति यावत् , वलनवेष्टनम् , भवेति, तन्मन्दिरकवाटं दृष्टवन्तो न पुन
स्तंसारमायान्तीतिभावः । भारतव्याहृतं भरतप्रणीतं नाट्यशास्त्रम् , प
ताका, वैजयन्तीरूपके प्रसिद्धं पताकास्थानच, शैलूषो विल्ववृक्षोनटश्च,
ईहामृगः ईहाप्रधानोमृगः कोकः रूपकप्रभेदश्च, चक्रं यन्त्रविशेषआगम-
शास्त्रप्रसिद्धः, अस्त्रविशेषश्च, ताभ्यां मध्येकरेचस्थितत्वादठ्ठितम् , विधु
तेति, अभ्यन्तरे त्रिशूलधारणं बोध्यम् । कामनैकसम्पादकं कामनाया
अभीष्टस्य एकं कामसदृशस्यानेकस्य पूरकं जनकंच । अजिरम् प्राङ्गणम्
सानुमन्तं पर्वतम् , अपावृते उद्धादिने, अकीटलूनैरिति कीटेनच्छिद्रित-
स्यपुष्पस्य देवार्चने प्रतिषेधस्मरणात् ।

अथ निशीथे कौतूहलिकेषु नागरिकेषु केनचि-
न्मान्त्रिकेणादसीय शीलितिद्धिशालितापरिचित्री-
षाकृतोच्चायन प्रणालिकया क्रियदुदानीयमानो देव-
नाथः पाथश्रमगाढयाऽपि निद्रया भयादिव सपदि
निराकृतं नयन नलिनं निशायामपि ममुन्मीलयन्,
ऊर्ध्वमध्वानमध्यासमानमात्मानं कलयन्नेव केतनीकृ-
तो नितान्तमातङ्केन, किङ्करीकृतोहृदयकम्पनेन,
क्षेत्रीकृतो वैवर्ण्येन, विषयीकृतस्तक्लांगसंगिना स्वे-
दोदयेन आत्मसात्कृतश्चिन्ता सन्तानेन, आलि-
ङ्गितो वाष्पोत्पीडेन, समञ्चितो रोमाञ्चेन,
किङ्कर्तव्यताविमूढउदूढशास्त्रीयगूढविषयोऽपि क्षणमु-
परिपाश्वेऽधो दिक्षुविदिक्षु च प्राक्षिपद्विस्मृतनिमेषं
चक्षुः । ततो हा तात ! हा तात ! नोदीक्षसे मन्दभाग
धेयं तनयम्, किमेतदकस्मादुपनतं, महीतलं विहा-
य विहायसमायापितोऽपि अहह नासादयामि स्थि-
रताम्. किन्तु केनाप्याकृष्यमाण इव कुत्रचिद्व्रजा-
मि, नजानेकस्यवा कुतोवा विषममिदं विजृम्भत-
म्, तदेतदपायतोऽह्नाय परित्रायतां परित्रायता मिति-
तारतारैस्त्वरै रचेतनेष्वपि निजवेदनावबोध माद-
धानः प्रतिध्वानरूपेणोपाधिना भवनभित्तिकाऽभिलि-
खित गीर्वाणगणेनाऽपि तरुणकरुणया कृतानुभाषणः

पितरं प्राबोधयत । तत एतदीयादावेदनादर्वाणाम्
 सर्वानवद्यविबुधपतिः प्रबुद्धस्तदवस्थयायुतं सुतं मसु
 दीक्ष्यविषयान्नचयान् गोचरयितुमाचलन्त्या विन्न-
 या विनिश्चित्यवृत्तान्तमनाकुलितमना विपत्कदम्बा-
 पहाणि श्राजगदम्बाया अविलम्बित मवलम्बयतां प-
 दाम्बुज मित्युदाजहार । अनन्तर मनुष्टितेऽपि जन-
 यितुर्निदेशिते स्वमिवदेव्या अप्यङ्घ्रिकमलमुत्क्रामित
 मवलोक्य हन्त हन्त ताग्निचरणोऽपि चारणगणस-
 रणि माकृष्यते, हा कष्टम्, किंकरोमि, किंमाश्रयामि,
 कस्मैनिवेदयामि,

परिचिचीषा परिचयेच्छो, उच्चायनम् उच्चाटनम्, विहायसम् अ-
 काशम्, अपायतोऽन्तरायतः, अह्नायशीघ्रम्, उपाधिना छद्मना, च-
 रणगणसरणिम् आकाशम्,

कागतिः, कउपायः, किंशरणम्, अहो विसदृश
 परिणामिता प्रयाणशकुनानाम्, हातात ? हातात ?
 द्रुतमवतादित्यार्तनादं विललाप । ततो गृह्यतामेतर्हि
 तर्हि गोविन्दस्यैव पदाङ्गुष्ठ मित्यनुज्ञया पितुस्तथैव
 प्रयतमानो मन्दतममपिनास्पन्दत । अथाधिगत्य प्र-
 योजनजननचणे निजाचरणे विफलता मक्षीण मन्दा
 क्षक्षितावसकृत्परीक्षितं सम्भूयसखिभिस्समानै स्तमुन्न-
 यितुमुग्रप्रयोग मातन्वानेऽपि तस्मिन् नचमनागपि

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६३)

चचालाङ्गुष्ठं गोविन्दचरणस्य, एवं नवकामिनी कल्पा-
यिताप्रवासागत प्रियमङ्गलत प्रमदाक्षणकल्पाक्षणादाप्र-
तिक्रियेवतस्यश्चयमगच्छत्, उदन्तमेत मादीपयितु-
मिवोदियाय मेदुरोगागेण प्राच्याचलचूडामणिस्तरणिः,
अमीषायभिमानइव तमोविननाश, गोविन्दगोचरेण
नगरैमिवारज्यतैन्द्रीवदन मारुणेन रागेण, उद्ब्रजनं
प्रयुञ्जानानां जनानां समवायइव कैरवजनं संकोच
माञ्चत्, गोविन्दतनयाननमिव कमलकाननं वि-
काशमासादयत्, विभाकरंकिरणाइवैषाप्रवृत्तिः पुष्प-
मिव्यापत्, व्यर्थीभूतप्रयोगसमुदयास्ते साक्षोत्तुना
नुभावतयाज्वधार्य मिद्धतां प्रवृद्धाभिदर्शनोत्कलि-
काभिराकृष्टा स्पष्ट सहमेण नगर्यासिनां समायाय
निटिलतटनिहिताञ्जलिपुटाः प्रणिपत्याभिनव ग्भो-
धरधीरध्वनिगम्भीरस्तिग्धया गिरा गोविन्द मेढयत्,
स्तुतिभिरेषपरितोपितश्चतेर्निश्चलतारकेण लोचनेन
निपीयमानो नूनमय मनूनः प्रभावो भगवत्या भक्त-
केशवाग्निप्रितारिण्या इश्रीतारिण्या श्ररणमारवरथे
वेत्यभिधाय प्रशंसाभिस्तानभ्यनन्दयत् ।

अथ संजातविस्मयात्तस्माद्भगवन्निर्गत्य नादिनं
न दिवसेन नीलाचन्यानिपावनपन दिव्यप्रतिविम्ब-

(१६२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

पितरं प्राबोधयत । तत एतदीयादावेदनादवीगतौ
 सर्वानवद्यविबुधपतिः प्रबुद्धस्तदवस्थयायुतं सुतं सप्त
 दीक्ष्यविषयनिचयान् गोचरयितुमाचलन्त्या विन्त
 या विनिश्चित्यवृत्तान्तमनाकुलितमना विपत्कदम्भ
 पहारि श्रीजगदम्बाया अविलम्बित मवलम्ब्यतां प
 दाम्बुज मित्युदाजहार । अनन्तर मनुष्ठितेऽपि जन
 यितुर्निदेशिते स्वमिवदेव्याअप्यङ्घ्रिकमलमुत्क्रामित
 मवलोक्य हन्त हन्त तारिणीचरणोऽपि चारणगणस
 रणि माकृष्यते, हा कष्टम्, किंकरोमि, किंमाश्रयामि,
 कस्मैनिवेदयामि,

परिचिचीषा परिचयेच्छो, उच्चायनम् उच्चाटनम्, विहापसम्
 काशम्, अपायतोऽन्तर्गतः, अह्नायशीघ्रम्, उपाधिना छद्मना,
 रणगणमरणम् आकाशम्,

कागतिः, कउपायः, किंशरणम्, अहो विसदृश
 परिणामिता प्रयाणशकुनानाम्, हातात ? हातात ?
 द्रुतमवतादित्यार्तनादं विललाप । ततो गृह्यतामेतर्हि
 तर्हि गोविन्दस्यैव पदाङ्गुष्ठ मित्यनुज्ञया पितुस्तथैव
 प्रयतमानो मन्दतममपिनास्पन्दत । अथाधिगत्य प्र
 योजनजननचणे निजाचरणे विफलता मक्षीण मन्दा
 क्षमितावमकृत्परीक्षितं सम्भूयसखिभिस्ममानै स्तमुष्म
 यितुमुग्रप्रयोग मातन्वानेऽपि तस्मिन् नचमनागपि

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६३)

वचालाङ्गुष्ठं गोविन्दचरणस्य, एवं नवकामिनी कल्पा-
यिताप्रवासागत प्रियसङ्गत प्रमदाक्षणकल्याक्षणाप्र-
वृत्तिवतस्यक्षयमगच्छत्, उदन्तमेत मादीपयितु-
मिवोदियाय मेदुरोरगेण प्राच्याचलचूडामणिस्तरणिः,
अमीषासमिमानइव तमोविननाश, गोविन्दगोचरेण
नगरमिवारज्यतैन्द्रीवदन मारुणेन गगेण, उद्वज्जनं
प्रयुञ्जानानां जनानां समवायइव कैरवजनं संकोच
माञ्चत्, गोविन्दतनयाननमिव कमलकाननं वि-
काशमासादयत्, विभाकर्गकिङ्गाइवैषाप्रवृत्तिः पुष्प-
मिव्यापत्, व्यर्थीभूतप्रयोगसमुदयास्ते साक्षात्कृता
नुभावतयाऽवधार्य सिद्धतां प्रवृद्धाभिदर्शनोत्कलि-
काभिराकृष्टा स्पृह सहमेण नगरवासिनां समायाय
निटिलतटनिहिताञ्जलिपुटाः प्रणिपत्याभिनव गभो-
धरधीरध्वनिगम्भीरस्तिग्धया गिरा गोविन्द मेहयत्,
स्तुतिभिरेषपरितोषितश्चतेर्निश्चलतारकेण लोचनेन
निपीयमानो नूनमय मनूनः प्रभावो भगवत्या भक्त-
केशवाग्निभिषितारिण्या इश्रीतारिण्या श्ररणमारवस्थे
वेत्यभिषाय प्रशंसाभिरतानभ्यनन्दयत् ।

अथ संज्ञातविश्रमयात्तस्मान्नगराभिर्गत्य नादिदे-
न दिवसेन नीलाचन्याविषावनवन दिन्यस्तदिन-

(१६२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

पितरं प्राबोधयत । तत एतदीयादावेदनादर्वाणो
 सर्वानवद्यविबुधपतिः प्रबुद्धस्तदवस्थयायुतं सुतं
 द्दीक्ष्यविषयनिचयान् गोचरयितुमाचलन्त्या ।
 या विनिश्चित्यवृत्तान्तमनाकुलितमना विपत्कदाक
 पहारि श्राजगदम्बार्या अविलम्बित मवलम्ब्यतां
 दाम्बुज मित्युदाजहार । अनन्तर मनुष्ठितेऽपि ज्ञ
 यितुर्निदेशिते स्वमिवदेव्याअप्यंघ्रिकमलमुत्कामिन
 मवलोक्य हन्त हन्त तारिणीचरणोऽपि चारणगणस
 रणि माकृष्यते, हा कष्टम्, किंकरोमि, किंमाश्रयामि,
 कस्मैनिवेदयामि,

परिचिचीषा पश्चिचेच्छो, उच्चायनम् उच्चाटनम्, विशागम्
 काशम्, अपायतोऽन्तरायतः, अदनायशीघ्रम्, उपाधिना छद्मना,
 रणगणमरणम् आकाशम्,

कागतिः, कउपायः, किंशरणम्, अहो विसदृश
 परिणामिता प्रयाणशकुनानाम्, हातात ? हाताना
 द्रुतमवतादित्यार्तनादं विललाप । ततो गृह्यतामेता
 तर्हि गोविन्दस्येव पदाङ्गुष्ठ मित्यनुज्ञया पितुस्तथैव
 प्रयतमानो मन्दतममपिनास्पन्दत । अयाधिगत्य
 योजनजननचरणे निजाचरणे विफलता मर्त्रीण मन्दा
 क्षतितावमकृत्यगक्षितं सम्भृत्यमपि विस्मयमानं स्तमु
 चितुमुग्रप्रयोग मानन्वानेऽपि तस्मिन् न चयनागति

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६३)

त्रचालाङ्गुष्ठं गोविन्दचरणस्य, एवं नवकामिनी कल्पा-
येताप्रवासागत प्रियसङ्गत प्रमदाक्षणकल्पाक्षणाप्र-
तेक्रियेवतस्यक्षयमगच्छत्, उदन्तमेत मादीपयितु-
मेवोदियाय मेदुरोरागेण प्राच्याचलचूडामणिस्तरणिः,
प्रमीषामभिमानइव तमोविननाश, गोविन्दगोचरेण
गर्गमिवारज्यतैन्द्रीवदन मारुणेन रागेण, उद्ब्रजनं
युञ्जानानां जनानां समवायइव कैरववनं संकोच-
ाञ्चत्, गोविन्दतनयाननमिव कमलकाननं वि-
नाशमासादयत्, विभाकर्गकिरणइवैषाप्रवृत्तिः पुरम-
भेव्यापत्, व्यर्थीभूतप्रयोगसमुदयास्ते साक्षात्कृता
नुभावतयाऽवधार्य सिद्धतां प्रवृद्धाभिदर्शनोत्कलि-
काभिराकृष्टा स्पृह सहमेण नगरवासिनां समायाय
निटिलतटनिहिताञ्जलिपुटाः प्रणिपत्याभिनव भो-
धरधीग्ध्वनिगम्भीरस्तिग्धया गिरा गोविन्द मैडयद्,
स्तुतिभिरेषपरितोषितश्चतैर्निश्चलतारकेण लोचनेन
निपीयमानो नूनमय मनूनः प्रभावो भगवत्या भक्त
क्लेशवाग्निधितारिण्या इश्रीतारिण्या श्ररणसारसस्यै
वेत्यभिधाय प्रशंसाभिस्तानभ्यनन्दयत् ।

अथ संजातविश्मयात्तस्मान्नगराभिर्गत्य नाधिके
न दिवसेन नीलाचलातिपावनवन विन्यस्तनिल-

यां, नरहरिणनायका

विसदृशेति असम्पत्तयेतिभावः । एतर्हि अधुना, चणे खपाते, तौभूमौ, तं देवनाथम्, असकृत्परीक्षित मित्युग्रप्रयोगविशेषणम्, नरेऽज्ञानं तिमिरंच, रागेण प्रेम्णा रक्ततयाच, उद्वजनमुच्चाटनम्, निःशो भाक्तः, ऐडयन् अस्तुवन् अनूनः सर्वः, । नरहरिणनायको नरः

कृतिमिव पूर्वकाष्ठाकलितोदयां प्रह्लादेष्टदायिनीं च, नारायणमूर्तिमिव ब्रह्मपुत्रोपास्यमानपादां, विपिनभूमिमिव भैरवभ्राजितां घण्टारवाञ्जितोज्ज्वलाद्यादिस्थायिभावाभिव्यक्तिमिव प्रतीतानुभावां सुकृतभृतेनलभ्यां च, उद्यदादित्यमण्डले नेव रक्तांशुकैर्न, सूचनीयवृत्तविशेषेणैव चूलिकोद्भासितेन, विधिविवेकेनेव गण्डनविकाशितेन, हृद्गिरप्रणयिमानसेनेव विलसत्केशवेशेन, समीचीनचित्रेणैव दिव्यवर्णभासुणेन, नीलकण्ठेनेव कौमागमोदकरेण, कुमारिका निकरेण, नोत्तुयमानां देवतैरिव कामरूपवर्तिभिः कञ्चुकिजनेरिव शुद्धान्तस्थितैः, अमाध्यमिकैरपिन्यक्कृत विषयिभिः, दहनदग्धराजार्हेरपि राजप्रियैः विप्रैः पूज्यमानां, होमधूमधूमगतिशशधरोल्लेखिशिखरानिमुन्दरमन्दिनां, महदुत्सादयित्रीमपि सुदामा, अनाश्रितामाप व्यापिकां, प्राचीन्यितामपि

पूर्वेति, पूर्वकाष्ठायां प्राच्यां कलितोदयिनी उदयोपपा, पूर्वकाष्ठायां

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६५)

वाऽर्थः, प्रह्लादेष्टुदायिनीं प्रह्लादः प्रकृष्टभामोदस्तएवेष्टस्तस्य, प्रह्ला-
 दस्य हिरण्यरुशिपोरात्मजस्य यदिष्टं तस्यच नायिकाम्, ब्रह्मपुत्रो न दो-
 नारदश्च, पादः प्रत्यन्तपर्वतः चरणश्च, भैरवश्चिशवोभयानकोदेशश्च, घ-
 ण्टारवः घण्टायाः शब्दः, घण्टारवाशणपुष्पिका । प्रतीतः ख्यातो ज्ञातश्च,
 अनुभावः प्रभावस्त्वेदादिश्च. सुकृतेति, द्वितीयस्य “पुण्यवन्तः प्रमिण्व
 न्नियोगिन्द्रतमन्ततिम्” इत्यभिधानान्नानुपपत्तिः, अंशुकं वसनम् अंशुकः
 किरणः, चूलिकाचूरीलाभाभरणम् “अन्तर्यवनिकातं स्पैश्चूलिकार्थस्य
 सूचना” इत्युक्तकृष्णसूचनाविशेषश्च, विधिविरेकोपीमां मानिवन्वः,
 मण्डनं भूषणं मण्डनमिश्रश्चमण्डनः, केशवेशः केशरचना केशोवेशश्च केशव
 ईशश्चिवश्च, वर्णः स्वरूपं जातिः नीलपीतादिश्च, नीलकण्ठो मयूरश्चिव-
 श्च, कौमारामोदः शैशवस्य कार्तिकेयस्य चापोदः, नोनूयमाना मतिब्रयेन
 स्तूयमानाम्, कामरूपवर्तिभिः कामरूपे तः भिधानेदेशे इच्छाधीनरूपे च
 स्थितैः, कञ्चुकिजनैः, “अन्तः पुरचरोद्वदो विप्रोगुणगणान्वितः, सर्व
 शास्त्रार्थतत्त्वज्ञः कञ्चुकोत्पन्निधीयते इत्युक्तकृष्णैर्लोकैः, शुद्धान्तस्थितैः
 विपश्चान्तः करणे राजावगोचैव स्थितैः, माध्यमिको विषयज्ञानयोरस्त्य-
 त्ववादीमुद्धमघानशिष्यः, विषयि इन्द्रियं विषयविशिष्टं ज्ञानं विषयो ज्ञानं
 चेति यावत्, राजार्हः राजयोग्यं वस्तु अगुरुश्च, शशधरोष्ठोत्पशिखरेत्यने-
 नौत्तत्वं मन्दिरे व्यज्यते, महत् महत्परिमाणविशिष्टं महत्तत्त्वमन्तः कर-
 णं च, सूक्ष्माम् अणुस्वरूपां निरवयवद्रव्यरूपां च, सूक्ष्मतरौपादान्तरमेव
 भवति सूक्ष्मस्य ननु महदुपादानन्वमिति विगोवातिभावः । अनाधिता म
 दृष्टिभूतां कारणानाश्रितां च, एतैः विशेषणैर्मूलप्रकृतिरूपत्वं कामाख्या
 यां व्यज्यते, “सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिः” “हेतुमदनित्यमव्यापिनक्रिय
 मनेकमाश्रितं लिङ्गम्, सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं, विपरीतमव्यक्तम्” इति

यां, नरहरिणनायका

विसद्वशेति असम्यक्तयेतिभावः । एतर्हि अधुना, चणे रत्नं
तौभूमौ, तं देवनाथम्, असकृत्परीक्षित मित्युग्रप्रयोगविशेषणम्,
ऽज्ञानं तिमिरं च, रागेण प्रेम्णा रक्तनया च, उद्ब्रजनमुच्चाटनम्,
लो भालः, ऐडयन् अस्तुवन् अनूनः सर्वः, । नरहरिणनायको न

कृतिमिव पूर्वकाष्ठाकलितोदयां प्रह्लादेष्टदायिनी
च, नारायणमूर्तिमिव ब्रह्मपुत्रोपास्यमानपादां, विनि
न भूमिमिव भैरव भ्राजितां घण्टारवाञ्जिताञ्च, र
त्यादिस्थायिभावाभिव्यक्तिमिव प्रतीतानुभावां सुकृ
तभृतेनलभ्यां च, उद्यदादित्यमण्डले नेव रक्तांशुके
न, सूचनीयवृत्तविशेषेणैव चूलिकोद्भासितेन, विधि
विवेकेनेव गण्डनविकाशितेन, हृद्गिरप्रणयिमानसे
नेव विलसत्केशवेशेन, समीचीनचित्रेणैव दिव्यवर्ण
भासुणेन, नीलकण्ठेनेव कौमागमोदकरेण, कुमारिका
निकरेण, नोनुयमानां दैवतैरिव कामरूपवर्तिभिः
कञ्चुकिजनैरिव शुद्धान्तस्थितैः, अमाध्यमिकैरपि
न्यक्कृत विषयिभिः, दहन दग्धराजार्हैरपि गजप्रियैः
विप्रेः पूज्यमानां, होमधूमधूमरित शशधरोल्लेखि शि
खगति सुन्दरमन्दिगं, महदुत्पादयित्रीमपि सुक्ष्मा
अनाश्रितामपि व्यापिकां, प्राचीस्थितामपि

पूर्वेति, पूर्वकाष्ठायां प्राच्यां कलितोदयित उदयोपया, पूर्व काष्ठा

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६५)

वाऽर्थः, प्रह्लादेष्टदायिनीं प्रह्लादः प्रकृष्टआमोदस्तपवेष्टस्तस्य, प्रह्ला-
दस्य हिरण्यकशिपोरात्मजस्य यदिष्टं तस्यच दायिकाम्, ब्रह्मपुत्रोनदो-
नारदश्च, पादः प्रत्यन्तपर्वतः चरणश्च, भैरवश्चिशोभयानकोदेशश्च, घ-
ण्टारवः घण्टायाः शब्दः, घण्टारवाशणपुष्पिका । मतीतः ख्यातोज्ञातश्च,
अनुभावः प्रभावस्स्वेदादिश्च, सुकृतेति, द्वितीयपक्षे “पुण्यवन्तः प्रमिष्व
न्तियोगिवद्रससन्ततिम्” इत्यभिधानान्नानुपपत्तिः, अंशुकं वसनम् अंशुकः
किरणः, चूलिकाचूरीत्राक्षामरणम् “अन्तर्यवनिकासंस्थैश्चूलिकार्थस्य
सूचना” इत्युक्तलक्षणसूचनाविशेषश्च, विधिविज्ञेकोपीमांसानिवन्धः,
मण्डनं भूषणं मण्डनमिश्रश्चमण्डनः, केशवेशः केशरचना केशोवेशश्च केशव
ईशश्चेश्वश्च, वर्णः स्वरूपं जातिः नीलपीतादिश्च, नीलकण्ठोमयूरश्चेश्व-
श्च, कौमारामोदः शैशवस्य कार्तिकेयस्यचामोदः, नोनूयमाना मतिश्चयेन
स्तूयमानाम्, कामरूपवर्तिभिः कामरूपे तः मिधानेदेशे इच्छाधीनरूपे च
स्थितैः, कञ्चुकिजनैः, “अन्तः पुरचरोद्वो विप्रोगुणगणान्वितः, सर्व
शास्त्रार्थतत्त्वज्ञः कञ्चुकीत्यभिधीयते इत्युक्तलक्षणैर्लोकैः, शुद्धान्तस्थितैः
विमलान्तः करणो राजावगोपेच स्थितैः, माध्यमिको विषयज्ञानयोरस्तप-
त्ववादीमुद्धमधानशिष्यः, विषयि इन्द्रियं विषयविशिष्टं ज्ञानं विषयोज्ञानं
चेति यावत्, राजार्हः राजयोग्यं वस्तु अगुरुश्च, शशधरोल्लेखिशिखरेत्यने-
नौन्नत्यं मन्दिरे व्यज्यते, महत् महत्परिमाणविशिष्टं महत्तत्त्वमन्तः कर-
णं च, सूक्ष्माम् अणुस्वरूपां निरवयवद्रव्यरूपां च, सूक्ष्मतरापादानत्वमेव
भवति सूक्ष्मस्य न तु महदुपादानत्वं पिति विरोधातिभावः । अनाधिता म
वृत्तिभूतां कारणानाश्रितां च, एतैः विशेषणैर्मूलमकृतिरूपत्वं कामारूपा
यां व्यज्यते, “सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिः” “हेतुमदनित्यमव्यापिमक्रिय
मनेकमाश्रितं लिङ्गम्, सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं, विपरीतमव्यक्तम्” इति

(१६६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

साङ्ख्यकारिकायामीश्वरकृष्णेनाभिधानात् ॥

दक्षिणपद प्रापणीयां, प्रतिपेधितसुरास्पर्शानपिदि-
जन्मनस्सुरालयं नयमानां, भारतवर्षप्रमुखभूषां, का-
माख्या मधिदर्शं मपरोक्षलक्षणदेवता दर्शभूतां, ददर्श ।
तत्र च तां समाराधयदागमोदितैर्मोदितः प्रकारे, व-
पुरमार्जयन्मण्डलेषु कुण्डस्य, अशनवमनमण्डनशुभ्र-
दानैर्वृन्दान्यमानयत्कुमाङ्गिकाम्, अतोपयन्न देवी
सपर्यापरयणान् द्विजातीन्, अतनोदात्मजन्मनोम-
नोस्माधनोपाय मवधानेन, गिरिगुहागृहे गृहीतवासो
विलोकयन् गमणीयः नदनां नदतरंगाणां दिष्टया
बहुदिष्टं दृष्ट मानसोऽव्यतिष्ठत् । अथ गणना
त्रापगमेऽभिनवमीमन्तिनी मन्दाक्षेष्टिवक्त्रकमेणशीय-
माणेषु शंखलिनीजलेषु, पृथुऋद्धवधात्र्याः पयोधरा-
नि तीव्रदीप्तिनिर्गमे, सेतुललनाजनस्तन नितम्ब-
शैल्याम्बालनेग्विभनेऽज्ञानतां श्रयनिमलितेमग्ग्याः
बहुविगोविनममिमन्थायदग्धं कृतान्कणकटम्बर-
मिद किम्पनिकरकनवान्कमलिनी वामुत्तेनार्णमा-
कलय्य पुनर्जायय प्रमदाकुचगिगीशं मगनि शिभि-
दिरन्नुपिल्लय विगमनादिवमनात् स्थायमानं मग-
नने, आग्नेय । अथ गमन्ताभिनमनिगान्तपद-

कान्ताकरकुशेशयेषु, जघनघनाघातमसहमानेनेन
 नितम्बिनीनां क्रीडारवकैतवेन तारमारुदता पुलिने-
 पलायमानेन पाथसा प्रसादितेषु. हृदयस्थिति वाञ्छ
 येव रमणीनां श्रुतिपद प्रविष्ट पयोव्युदसन व्याधूयमा
 नेनमूर्ध्ना मञ्जुलेषु, अभिजात जलजातजलजातकौ
 तूहलेषु मनोहरेषु, चरमाचलचूडान्तिकचलत्तरणिकि
 रणाकलित निस्तलसमीरणायनजालकसमीपे समी-
 हयापुरसुषमावलोकनस्य स्थितानां वनितानां सपदि
 पाटीरपङ्कानुलेपित स्तनतनूदरवदनेषु शोभामावहत-
 सुकुङ्कुमस्थासकस्य पुरःस्थापित हाटकमृदुलदलपुटित
 ताम्बूलवीटिका परिपूरित शातकुम्भभाजनभ्राजितसु-
 भ्रांशुविशद पर्यङ्किकासमामीनोज्ज्वलवेशशालिनी-
 नां कलाकलापप्रवीणानां, वचनस्वरविजितवीणानां,
 व्यजनवातविधूयमान बाहुव्रतति वक्षोरुहवदनवम-
 नानां वारविलासिनीनां, तैस्तेर्विचेष्टिते गमन्नपथेन
 प्रशान्तताप तयारमणीये वासरावसाने विहरतामहं
 यूनां यूनां विमुह्यमानेमनसि, अनिक्रामति निदाघ
 ममयेऽविलम्बित मप्रवामिदृर्पावापनधमं वर्षागमं
 विभावयन्न मकृन्नममृत्य जगज्जननादिशक्तिर्नर्ता
 मनङ्गवर्ती भगवती ग्रामाय गुणग्रामायनाय पगवर्तन।
 एवं तत्तद्विषयवाशनेन सुप्रविशेष माप्नुवन ३५

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६९)

रापकृत्य तया प्रहृष्टचेता व्यतीत्यायानेन कतिपयाने
हसोगेहं प्रीतिकेतनेन तनयेन समं समाययौ । एतदी
यादागमनात्पुर्वं स्रष्टियागत्यकीर्तिर्भुवनतलमुद्धा-
सयन्ती प्राचीकशचेतां सिचिरं चातकायितानि-
बन्धुतानाम्,

यनः सान्द्रः, पाथसाजलेन, प्रसादितेषु प्रसन्नतां प्रापितेषु रमणीये
श्रितियावत्, अभिजातेति, अभिजातं रुचिरं जलजातं काम-
यत्र तस्मिन् जलेजातेषु कौतुहलेषु इत्यर्थः । निस्तलसमीरणायनजातकं
वर्तुलं गवाक्षजातकम् । तनूदरं, कृशोदरम् । स्थासकस्य चार्चिवपरम् ।
वज्रवृक्षवृक्षः, विमलवृक्षः, धृंगारवृक्षश्च । तैस्तैः । अनिर्वचनीयैः । जन-
नादीति । आदिनास्थिति प्रलययोः परिग्रहः । अनङ्गवतीम्, अशरीरि-
णीम्, गुणेति, गुणानां प्रापैः समूहै रायताय पिरुताय । आयानेन,
आगमेन । अनेहसः, कालान् ॥

मिलिताश्चता गोविन्दमभ्यनन्दयन्नादरैः प्रणयातिश-
यावबोधनकरैः । अथ वादिमानसमानोन्माधकरो दे-
वनाथश्चिरमागमोदीरितोचित क्रियाप्रचयाचरणेन वि-
रचनेनच तन्त्रकौमुदीपराध्यागमनिबन्धानामविन्द-
तानन्यगामिनी मागमाचार्यपदवीम् । एतेनसङ्गता
श्रसकलाएवसोदरा अनुदिनं तातपादमापादयन्नुदिन
मतितमां नवनवैः शास्त्रीयदल्पन, कौशलैः । पिता
च समुचिताचार मकारयत्कुलकन्यकास्तन् परिग्रहं-

कान्ताकरकुशेशयेषु, जघनघनाघातमसहमानेनैव
 नितम्बिनीनां क्रीडारवकैतवेन तारमारुढता पुलिने-
 पलायमानेन पाथसा प्रसादितेषु. हृदयस्थिति वाञ्छ
 येव रमणीनां श्रुतिपद प्रविष्ट पयोव्युदसन व्याधूयमा-
 नेनमूर्धा मञ्जुलेषु, अभिजात जलजातजलजातकौ-
 तूहलेषु मनोदरेषु, चरमाचलचूडान्तिकचलत्तरणिकि-
 रणाकलित निस्तलसमीरणायनजालकसमीपे समी-
 हयापुरसुषमावलोकनस्य स्थितानां वनितानां सपदि
 पाटीरपङ्कानुलेपित स्तनतनूदग्बदनेषु शोभामावहत्-
 सुकुङ्कुमस्थासकस्य पुरःस्थापित हाटकमृदुलदलपुष्टि-
 ताम्बूलवीटिका परिपूरित शातकुम्भभाजनभ्राजितसु-
 भ्रांशुविशद पर्यङ्किकासमामीनोज्ज्वलवेशशालिनी-
 नां कलाकलापप्रवीणानां, वचनस्वरविजितवीणानां,
 व्यजनवातविधूयमान बाहुव्रतति वक्षोरुहवदनवस-
 नानां वारविलामिनीनां, तैस्तेर्विचेष्टिते रासन्नपथेन
 प्रशान्तताप तयारमणीये वासरावसाने विहरतामहं
 यूनां यूनां विमुह्यमानेमनसि, अनिक्रामति निदाघ
 ममयेऽविलम्बित मप्रवामिदृष्यापनक्षमं वर्षागमं
 विभावयन्न मकृन्नमस्कृत्य जगज्जननादिशक्तिन्ती
 मनङ्गवतीमगवतीं ग्राणाय गुणग्रामायनाय पगवर्तना-
 एवं तत्तद्विषयवाक्षणेन सुखविशेष माप्नुवन्न कृतद-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६९)

रापकृत्य तया प्रहृष्टचेता व्यतीत्यायानेन कतिपयाने
हसोगेहं प्रीतिकेतनेन तनयेन समं समाययौ । एतदी
यादागमनात्पुरैव झटित्यागत्यकीर्तिर्भुवनतलमुद्धा-
सयन्ती प्राचीकशचेतां सिचिरं चातकायितानि-
बन्धुतानाम्,

घनः सान्द्रः, पाथसाजलेन, प्रसादितेषु प्रसन्नतां प्रापितेषु रमणीये
वेतियावत्, अभिजातेति, अभिजातं रुचिरं जलजातं कमलं
। अत्र तस्मिन् जलेजातेषु कौतुहलेषु इत्यर्थः । निस्तलसमीरणायनजालकं
तुल्यं गवाक्षजालकम् । तनुदरं, कृशोदरम् । स्थासकस्य चार्चिकस्य ।
उज्ज्वलवेशः, विमलवेशः, धृंगारवेशश्च । तैस्तैः अनिर्वचनायैः । जन-
दीति । आदिनास्थिति प्रलययोः परिग्रहः । अनलवतीम्, अशरीरि-
णीम्, गुणेति, गुणानां ग्रामैः समूहै रायताय पिस्तृताय । जायानेन,
आगमेन । अनेहसः, कालान् ॥

मिलिताश्च ता गोविन्दमभ्यनन्दयन्नादरैः प्रणयातिश-
यावबोधनकरैः । अथ वादिमानसमानोन्माथकरो दे-
वनाथश्चिरमागमोदीरितोचित क्रियाप्रचयाचरणेन वि-
रचनेन च तन्त्रकौमुदीपराध्यागमनिबन्धानामविन्द-
तानन्यगामिनी मागमाचार्यपदवीम् । एतेन मङ्गला
श्च सकला एव सोदरा अनुदिनं तातपादमापादयन्मुदिन
मतितमां नवनवैः शास्त्रीयकल्पनाकौशलैः । पिता
च समुचिताचार मकारयत्कुलकन्यकारत्न परिग्रहय-

कान्ताकरकुशेशयेषु, जघनघनाघातममहमानेनैव
 नितम्बिनीनां क्रीडारवकेनवेन नारमारुहता पुलित-
 पलायमानेन पाथमा प्रसादितेषु, हृदयस्थिति वाञ्छ
 येव रमणीनां श्रुतिपद प्रविष्ट पयोव्युदमन व्याधूयमा
 नेनमूर्धा मञ्जुलेषु, अभिजात जलजातजलजातकौ
 तूहलेषु मनोहरेषु, चरमाचलचूडान्तिकचलत्तरणिकि
 रणाकलित निस्तलसमीरणायनजालकसमीपे समी-
 हयापुरसुषमावलोकनस्य स्थितानां वनितानां सपदि
 पाटीरपङ्कानुलेपित स्तनतनूदग्बदनेषु शोभामावहत्-
 सुकुङ्कुमस्थासकस्य पुरःस्थापित हाटकमृदुलदलपुष्टि
 ताम्बूलवीटिका परिपूरित शातकुम्भभाजनभ्राजितसु-
 भ्रांशुविशद पर्यङ्किकासमासीनोज्ज्वलवेशशालिनी-
 नां कलाकलापप्रवीणानां, वचनस्वरविजितवीणानां,
 व्यजनवातविधूयमान बाहुव्रतति वक्षोरुहवदनवस-
 नानां वारविलासिनीनां, तैस्तैर्विचेष्टितै रासन्नपथेन
 प्रशान्तताप तयारमणीये वासरवसाने विहरतामहं
 यूनां यूनां विमुह्यमानेमनसि, अतिक्रामति निदाघ
 समयेऽविलम्बित मप्रवासिहर्षावापनक्षमं वर्षागमं
 विभावयन्न सकृन्नमस्कृत्य जगज्जननादिशक्तिमती
 मनङ्गवतीभगवती ग्रामाय गुणग्रामायताय परावर्तत।
 एवं तत्तद्विषयवीक्षणेन सुखविशेष माप्नुवन्न कृतदु-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१६९)

रापकृत्य तथा प्रहृष्टचेता व्यतीत्यायानेन कतिपयाने
हसोगेहं प्रीतिकेतनेन तनयेन समं समाययौ । एतदी
यादागमनात्पुर्वं दृष्टियागत्यकीर्तिर्भुवनतलमुद्धा-
सयन्ती प्राचीकशचेतां सिचिरं चातकायितानि-
वन्धुतानाम्,

घनः सान्द्रः, पाथसाजलेन, प्रसादितेषु प्रसन्नतां प्रापितेषु रमणीये
ष्वितियावत्, अभिजातेति, अभिजातं रुचिरं जलजातं कमलं
यत्र तस्मिन् जलेजातेषु कौतुहलेषु इत्यर्थः । निस्तलसमीरणायनजालकं
वर्तुकं गवाक्षजालकम् । तनूदरं, कृशोदरम् । स्थासकस्य चार्चिकस्य ।
चण्डकवेशः, विमलवेशः, धृंगारवेशश्च । तैस्तौ. अनिर्वचनार्थैः । जन-
नादीति. आदिनास्थिति प्रलययोः परिग्रहः । अनङ्गवतीम्, अशरीरि-
णीम्, गुणेति, गुणानां ग्रामैः समूहै रायताय पिस्तृताय । आयानेन,
आगमेन । अनेहसः, कालान् ॥

मिलिताश्चता गोविन्दमभ्यनन्दयन्नादरैः प्रणयातिश-
यावबोधनकरैः । अथ वादिमानसमानोन्माथकरो दे-
वनाथश्चिरमागमोदीरितोचित क्रियाप्रचयाचरणेन वि-
रचनेनच तन्त्रकौमुदीपराध्यागमनिबन्धानामविन्द-
तानन्यगामिनी मागमाचार्यपदवीम् । एतेनमङ्गता
श्चसकलाएवसोदरा अनुदिनं तातपादमापादयन्सुदित
मतितमां नवनवैः शास्त्रीयकल्पनाकौशलैः । पिता
च समुचिताचार मकारयत्कुलकन्यकारत्न परिग्रह्य-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१७१)

रसरणे रत्नानतिमिरवारणैकतरणेः स्पर्शमणे रम्बिके
वारुन्धतीव सावित्रीव सुकन्येव रोहिणीव वैदेहीव
सतीनामशेषवर वर्णिनीनां ललामभूतायां-

आपादयन्, प्रापयन् । एषां विद्यापतिप्रभृतीनाम् । उपयामः, परि-
यः । समयमाने, प्राप्तुवति । अयमयताम्, शुभावहविधिन्प्राप्तताम् ।
खुर्कं क्षेमम् । भवा जाता ।

ललनायां सकललोकलोचनचमत्कारिणी चन्द्रकला
प्रतिपदीव, अभितस्समुद्भासयन्तीकान्तिश्शाणक-
पणोल्लिखितमणिसंहताविव, प्रोद्दामातप निवारयित्री
पयोदप्रभा प्रावृषीव, सुमनश्शतानन्दिनी विपिनवी-
थी सुरभिशोभायामिवान्ववायसमवायप्रदीपनायसम
जायतवालिकोनाम । ववौचतदा रजसापरिशीलित
स्त्रवन्तीसलिलकणशीतलः प्रसूनपरिचयामोदसुर-
भिर्भाविभुवनसौभाग्यमभिशंसन्निव मालयोनभसि-
नभस्वान्, प्रचकाशेपरमनावृतोभास्वान्, प्रमोद
यन्त्यस्सकलानभिबभुः पूज्जीभूतप्रभूतघनसारपराग
धवलाः कलाः कलाकरस्य. अतितरामदीप्यतप्रद-
क्षिणार्चिससञ्चयसंस्मृचित मङ्गलागमा आगमामयो
ऽगारेष्वाहिताग्नीनाम्, अकस्मादेवसतामुल्लास हृद
यम्, विमलतमनीलाम्बरतामापेदिरे हरिदङ्गना स्त-

१ मङ्गलागमाभ्योतवैश्वानराग्निताग्नीनां मन्दिरेषु, इति वा पाठः ।

(१७२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

मिस्राभिसारिकाहव, अवापच क्षणदा सान्वयाम्
 भिरुयाय । ततस्सङ्कलितगणितसारो दैवपण्डितः
 प्रमादादिरहितः पुरहितः पुरोहितः पुरोहितश्च कुत्सि-
 तदैवसुत्सारयितुकामाबुत्साहेन विहितोत्सवं जनक-
 मकाश्यतां विधिवोधिताधिगमोपेत चेतसा श्रील-
 क्ष्मीत्यभिधानसंविधाना दिक्क्रियाकदम्बक मेकादशे
 दिवसे, युक्तरुपश्चायं स्पर्शमणेरलक्ष्मी समुद्रवः,
 क्रोड् क्रीडत्पोततया द्वादिनीवशुशुभेतदीया धात्री ।
 ततः प्रभृति परिपोष्यमाणासा तरसा समेधमानाप-
 यनाशरदिवसमुदित शैशवसुधांशुमण्डला नैकविध-
 मनुभवन्ती शिशुतोचितसुखं, सखीभिस्सममूहवहलैः
 कुतूहलै रतन्वती परमं प्रमोदं, पराचीनार्वाचीन
 पुरन्ध्रीजनोपचीयमानकुलव्यवहृतिपरिचयाऽपजहार-
 करणमान्तरं समेषाम् । एवमतियातेषुकति

सकलेत्याद्युभयपक्षे विशेषणं योजनीयम्, प्रतिपदि द्वितीयायाश्च,
 “प्रतिपद्यन्द्रमिवप्रजानृपम्” इतिभारविश्लोकव्याख्यायांमल्लिनाथेनाभि-
 धानान्, शाणः निकषः, आतपः खेदो रौद्रश्च, सुमनश्शतं सञ्चेतनां
 पुण्याणां च शतम्, धीयीपंक्तिः, सुरभिर्वमन्तः, अपरिशीलितः अतंपृक्तः,
 सूत्रन्तो नदी सुरभि र्मनोदः मालयः पञ्चयमम्बन्धी, अर्चिशिखा, आग-
 माग्रयः श्रीताग्रयः, नालाश्वरानां नालस्याकाशस्य वसनस्य च मम्बन्विताम्,
 न्वयां क्षममुन्मवंददानीतिक्षणदेतियोगवतीम्, अमिष्यामभिधानम्

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१७३)

पुरहितः, पुरहितकारकः पुरोहितः पुरातर्कयुक्तः पुरोहितः पुरोधाः,
 प्रादिनाग्रहदानपरिग्रहः, स्पर्शमणेः स्पर्शमणिठक्कुरात् चिन्तामणेश्च,
 हृक्ष्मी तन्नाम्नी धनंच, परम्परितरूपकम्. पोतश्चिशुस्तरीश्च, हादिनी
 मदी, अपघनोवयवः, ऊहस्तर्कः तेन विमलबुद्धिमत्त्वं व्यज्यते पुरन्ध्री
 स्त्री, आन्तरंकरणमनः ।

पयहायनेषु कामकामिनीमपिकेनाप्य विश्रामराम-
 णीयकभरेण ह्रूपयन्ती, सुचिरस्थायिशोचिषाचक्षण
 प्रभामप्यधः कुर्वती, मृदुलविशदपेशलावितथभारती,
 नवसुधामयीं वसुधामातन्वती, सम्बिदा विषममपि
 विषयं विशन्ती, श्रेयसि मानसं निदधती, जनयितृ-
 प्रभृतिधरणि विबुधा नाराधयन्ती, पदनख समतया
 साधुषु सुधादीधितिं साधयन्ती. सांसिद्धिकमधुरहृ-
 शापरिशीलितसेविनी, मेधाविनी, विनीताऽपि नी-
 तिशालिनी, मनोरमाऽपि चारुहासिनी, मध्यक्षामाऽपि
 प्रमिताक्षरा, सुवर्णालङ्कारभृताऽपि सुवर्णालङ्कृता,
 शुचिस्वरूपाऽपि तपोऽनुगता, अपण्याऽपि ज्योति
 ष्मती, वैश्रवणश्रीरिवालकोद्भासिता न्यायविद्येवसद-
 वयवलक्षणा, प्रसून समयस्थितिरिव सुप्रसन्नकानना,
 विद्योतितदशनवासन्तिका सव्यसाचिनेव विलङ्-
 धितकर्ण स्थितिना नयनयुगलेन राजिता, सत्कवि-
 तेव दूषणविरहिता सद्भावशोभिता मुकुमाराऽलङ्कार
 सङ्कीर्णा वारुवृत्ता रुचिरचरणाच, दमयन्तीवसहस्रनेत्र

मिसाभिसारिकाहव, अवापच क्षणदा सान्वया-
 भिरुयाय । ततस्सङ्कलितगणितसागे देवपण्डितः
 प्रमादादिरहितः पुरहितः पुरोहितः पुरोहितश्च कृत्स्नि-
 तदैवमुत्सारयितुकामाबुत्साहेन विहितोत्सवं जनक-
 मकारयतां विधिवोधिताधिगमोपेत चेतसा श्रील-
 क्ष्मीत्यभिधानसंविधाना दिक्क्रियाकदम्बक मेकादशे
 दिवसे, युक्तरुपश्चायं स्पर्शमणेरलक्ष्मी समुद्रवः,
 क्रोड् क्रीडत्पोततया द्वादिनीवशुशुभेतदीया धात्री ।
 ततः प्रभृति परिपोष्यमाणासा तरसा समेधमानाप-
 घनाशरदिवसमुदित शैशवसुधांशुमण्डला नैकविध-
 मनुभवन्ती शिशुतोचितसुखं, सखीभिस्सममूहवहलैः
 कुतूहलै रतन्वती परमं प्रमोदं, पराचीनार्वाचीन
 पुरन्ध्रीजनोपचीयमानकुलव्यवहृतिपरिचयाऽपजहार-
 करणमान्तरं समेषाम् । एवमतियातेषुकृति

सकलेत्याद्युभयपक्षे विशेषणं योजनीयम्, प्रतिपदि द्वितीयायाश्च
 “प्रतिपञ्चन्द्रमिवप्रजानृपम्” इतिभारविश्लोकव्याख्यायांमल्लिनाथेनाभि-
 धानात्, शाणः निकषः, आतपः खेदो रौद्रश्च, सुमनश्शतं सच्चेतसां
 पुष्पाणांच शतम्, वीथीपंक्तिः, सुरभिर्वसन्तः, अपरिशीलितः असंपृक्तः,
 सूवन्तीनदी सुरभि र्मनोहः मालयः मलयसम्बन्धी, अर्चिश्शिखा, आग-
 माग्रयः श्रौताग्रयः, नीलाम्बरतांनीलस्याकाशस्य वसनस्यचसम्बन्धिताम्,
 ५ क्षणमुत्सवंददातीतिक्षणदेतियोगवतीम्, अभिव्यामभिधानम्

विश्रमयकारिणी, कृष्णामूर्तिरिवाक्रसदयहृदया शोभ
नव्यजनाकृतिरिव सद्दंशसम्भवा, उमेव गौरी आर्या
शिवार्चनं निरताच, दुर्गेव निरस्तचामरा चरणावधी
रित ताम्राभिमाना आवर्त्यमानचारित्राच, कल्लोलि-
नीव लावण्यस्य, यष्टिकेवहाटकस्य, शलाकेवकर्पूर

केनापि अनिर्वचनीयेन, ह्रूपयन्तीलज्जयन्ती, शोचिषाकान्त्या, अथ
इति विद्युतोदीप्तेः क्षणिकत्वादित्याशयः, अतएव क्षणप्रभापदोपादानम्,
विशदास्वच्छा, संविदेति तेनात्र सौक्ष्म्यं व्यज्यते, घरणिबिबुधोद्विजः,
पृथ्वीदेवश्च, कौमारे पृथ्वीपूजनस्यमिथिलायामाचारात्, साधुषु सुन्दरेषु
साधयन्ती अनुमापयन्ती, सेविनीदासी, विनीतानीतिरहिता विनयवती
च, मनोरमाच्छन्दोमनोज्ञाच, एवमग्रेऽपि सुवर्णालंकारः हेमोपादानकोऽ-
लङ्कारः शोभनस्वरूपस्यतादृशस्वरूपायावाभूषणं च, शुचिः ग्रीष्मः प्रयतश्च,
तपोमाघः तपस्याच, अपर्ण्याज्योतिष्मतीपदाभिधेयालता ज्योतिष्मतीज्यो-
तिर्युक्ताच, वैश्रवणः कुबेरः अलकोद्भासिता अलकेनालकायां चोद्भासि-
ता, अवयवलक्षणानि अङ्गेषु समुद्रोक्तानिचिद्धानिप्रतिज्ञाहेत्वादीनां लक्ष-
णानि च, सुप्रसन्नकानना सुप्रसन्नक माननं यस्याः सुप्रसन्नं काननं यस्यां
सा, सव्यसाचिनार्जुनेन, कर्णस्थितिः वीरकर्णस्यमर्यादा श्रवसः स्थिति-
श्च, अदूषणाद्वेषादिभिः श्रुतिकटुत्वापुष्टार्थत्ववाच्यरसत्वादिभिश्चान्वयार्थ-
संगतैः दोषैर्विधुरा, सद्भावः साधुतासतीभक्तिस्सन्तोविभावादयोभावाश्च,
सुकुमाग अतिमृदुला सौकुमार्यगुणोपेताच, अलङ्कारसङ्कीर्णा अलङ्कारै-
स्तादृकादिभिर्व्याप्ता सदकरालङ्कारवतीच, चारुवृत्तारुचिरचरित्रा ता-
दृशच्छन्दस्काच, चरणः पदं श्लोकपादश्च, महस्रनेत्रविश्रमयः सहस्रसूक्ष्म

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१७५)

कस्य नयनरयेन्द्रस्यचादचर्यम्, अमूरमदगहृदया अमूरमकटिनम् अमूरेतद
 भिषानेवा मदयं हृदयं यरयास्मा, महंशः गर्माचीनं कुक्कुन्तयाविधोदेष्टुम्,
 गौरी गौरवर्णातदभिधेयाच, एरमप्रेऽपि आर्याश्रिष्टाच, किवाचनं शिवायाः
 पार्वत्याश्चिद्वक्ष्य च पूजनम्, कौमारतस्याचारात् । चामरः च गर्गमृगवेष्ट
 स्तदाख्योगक्षमश्च, ताम्रोधातुरतदभिधानोगक्षमश्च, कटोर्जिनानरद्विणी ।

पूरस्य, आकृतिरिवोज्ज्वलस्य, यमगीवपीतूपस्य, छेटेव
पाठीर द्रवस्य, वल्लरीवकाञ्चनस्य, द्विजपति मां-
दनाग्रमिव अप्रतिहतशामनेव विजयवैजयन्तीव मा-
नस्वरुपमिव मदनस्य, अभिदेवतेव मौन्दर्यस्य, म-
न्दुरं व लोचनचुरङ्गसरस्य, (रमणीय) मनोतममर्गदित्या-
गमक पदमिव कयलसमवसरस्य, मूर्तिरिदायेन्दनकभा-
यस्य आलोक्यमयीव देहदीप्तिभिः, तमोमयीव दुन्दुब्ध-
कान्तिभिः, निम्नमयीवाम्बुजप्रभाभिः, मोदधि रसैः
न्ध्रीणां, मौलिमालामणिरत्नदरीणां, र मितिः स्नेहा-
शाला शालानतानाग्र, आकृतिरिवीताचार, आलोक्य-
कुलीन कन्यकानां, देदन्तुहिरुदितमैर्त्तन्यकानां, र-
रिदिग्वतामपिदूरतः पश्यतां, परिणेषतामपिदूरतः पश्यतां

इति मेविल भोदिम भोदिम भोदिम भोदिम

॥ श्री गणेशाय नमः ॥

১৯৪৬ সালের ১৯ জানুয়ারি, ১৯৪৬ - ১৯৪৭ সালের
 ১৯ জানুয়ারি, ১৯৪৬ - ১৯৪৭ সালের ১৯ জানুয়ারি, ১৯৪৬ - ১৯৪৭ সালের
 ১৯ জানুয়ারি, ১৯৪৬ - ১৯৪৭ সালের ১৯ জানুয়ারি, ১৯৪৬ - ১৯৪৭ সালের

11/21/2011

(१७४)

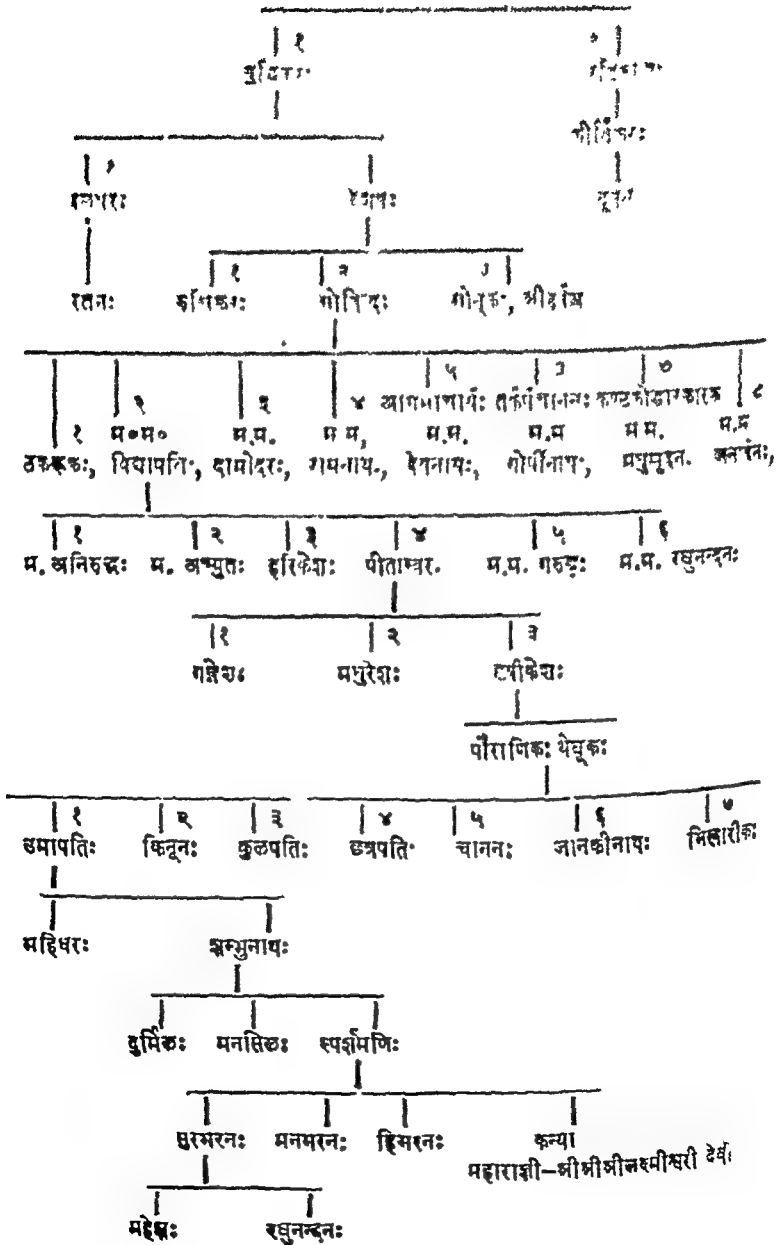
❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

विश्रमयकारिणी, कृष्णमूर्तिरिवाक्रूरसदयहृदया शोभ
नव्यजनाकृतिरिव सद्दंशसम्भवा, उमेव गौरी आर्या
शिवार्चनं निरताच, दुर्गेव निरस्तचामरा चरणावधी
रित ताम्राभिमाना आवर्त्यमानचारित्राच, कल्लोलि-
नीव लावण्यस्य, यष्टिकेवहाटकस्य, शलाकेवकर्पूर

केनापि अनिर्वचनीयेन, ह्रूपयन्तीलज्जयन्ती, शोचिषाकान्त्या, अब
इति विद्युतोदीप्तेः क्षणिकत्वादित्याशयः, अतएव क्षणप्रभापदोपादानम्,
विशदास्वच्छा, संविदेति तेनात्र सौक्ष्म्यं व्यज्यते, घरणिबिबुधोद्विजः,
पृथ्वीदेवश्च, कौमारे पृथ्वीपूजनस्यमिथिलायामाचारात्, साधुषु सुन्दरेषु
साधयन्ती अनुमापयन्ती, सेविनीदासी, विनीतानीतिरहिता विनयवती
च, मनोरमाच्छन्दोमनोज्ञाच, एवमग्रेऽपि सुवर्णालंकारः हेमोपादानकोऽ-
लङ्कारः शोभनस्वरूपस्यतादृशस्वरूपायावाभूषणं च, शुचिः ग्रीष्मः प्रयतश्च,
तपोमाघः तपस्याच, अपर्ण्याज्योतिष्मतीपदाभिधेयालता ज्योतिष्मतीज्यो-
तिर्युक्ताच, वैश्रवणः कुबेरः अलकोद्भासिता अलकेनालकायां चोद्भासि-
ता, अवयवलक्षणानि अङ्गेषु समुद्रोक्तानिचिद्गानिप्रतिज्ञाहेत्वादीनां लक्ष-
णानि च, सुप्रसन्नकानना सुप्रसन्नक माननं यस्याः सुप्रसन्नं काननं यस्यां
सा, सव्यसाचिनाऽर्जुनेन, कर्णस्थितिः वीरकर्णस्यमर्यादा श्रवसः स्थिति-
श्च, अदूषणाद्वेषादिभिः श्रुतिकटुत्वापुष्टार्थत्ववाच्यरसत्वादिभिश्चञ्चलार्थ-
सगतैः दोषैर्विधुरा, सद्भावः साधुतासतीभक्तिस्सन्तोविभावादयोभावाश्च,
सुकुमाग अतिमृदुला सौकुमार्यगुणोपेताच, अलङ्कारसङ्कीर्णा अलङ्कारै-
स्तादृकादिभिर्व्याप्ता सङ्करालङ्कारवतीच, चारुवृत्तारुचिरचरित्रा ता-
दृशच्छन्दस्काच, चरणः पदं श्लोकपादश्च, सहस्रनेत्रविश्रमयः सहस्रसूक्ष्म

॥ कविप्रतिष्ठा प्रयोग संस्कारसंग्रहः ॥

संविदाः सप्तदशः



❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

(१७७)

अथ पञ्चमोच्छ्वासः ।

अभृदभृतचराद्भुतविशदपदतपोऽनलविभूतिभुमभूमिः,
भृमीश्वरनिदरशिरश्श्रेणिकाविभूषणभृतातिभासुरविक
श्वर चरणाम्भोजनिः, खण्डवलाभिधाविधान प्रतीता-
न्वय दुग्धोदधि विवर्धनपार्वणसुधा निधिः, कविता
(कवन) वसुधाविधिः, बुद्ध्यावधीरितबुधावधिः, वि-
हगराजइव पराभवभयभरभ्रान्ताहिसंहतिः, सीरध्वज-
इव प्रविदितसम्बिदेतविदेहाधिपतिः, गिरिगहनप्रदेश
इव जनितजगदुपयोग कारकागमगणः, मुकुरोज्ज्व-
लमुकुटइव वर्णनीयसङ्गीरमणिसुवर्णविसर सेवितः,
सकलानङ्कपाल यन्त्याऽपि सत्या कीर्त्या समत्या
हृतः, भाविताशेषभुवनाभोगेनाऽपि दग्धैकद्वेषणेन
प्रतापदहनेनोद्दीपितः, स्वच्छमाचरन्नपि श्यामाचरण
परायणः, वदान्यसारोऽप्यनुदारः, अचलानन्दविधा-
यकोऽपि विबुधमण्डलाखण्डलः, अलङ्कारोभूसुरा-
णां, कर्णधारः शास्त्रसागराणां, लज्जाकरः सुरशाखि
सुरभिचिन्तामणीनां, विहरणावनी पङ्कदर्शनी विला-
सिनीनां, कारुणिक गणाग्रेसरः क्षोणीश्वरः

म० म० महेशठक्कुरः

श्रीः । विशदपदेतिद्वं श्येतवर्त्मार्थकं तपस्स्वरूपेऽनलेऽद्भुततत्त्वोपपादकं
बोध्यम् अनङ्कस्यकृष्णवर्त्मत्वात् । विभूतिर्भसितमैश्वर्यं च, भूमा अ

ष्यम् । बुधावधिः सकलबुधश्रेष्ठः । अहिंशशत्रुशर्पश्च, सीरध्वजोजनकः ।
 संविदेतः ज्ञानेनचित्रः । विदेशो जीवन्मुक्तः मिथिकादेशश्च, ।
 आगमः शास्त्र मगमोदृक्षश्च । सद्धीरमणिसुवर्णानां ।
 सज्जातीनां, समीचीनहीरकमौक्तिककनकानां च । अङ्गपालयन्त्या, आ-
 झन्त्या, सत्या पतिव्रतया कान्तया च । अत्याहुतः दूरं प्रापितः ।
 व्यापृतः श्यामाचरणेति, श्याममाचरणं कालीपदं च । गारोमुख्यः,
 दारः न उदारः दारैरनुगतश्च । अचळानन्दः अचळानां गिरीणां ।
 पृथिव्याः, अचळः स्थिरोवा आनन्दः । विबुधोदेवः वि-
 कर्णधारोनाबिकः । सुरशाखी कल्पद्रुमः, सुरभिः कामधेनुः ।

य आशांशुक विहसितयशाः, प्रवृद्धवृषाविष्ठितः, उत्त-
 माङ्गगृहीतगोविन्दपदारविन्दामृतः, परपुरतापकः
 संजातपरमानन्दः, वाञ्छितप्रदः, शुभ्रांशुलाञ्छितः,
 साक्षान्महेशइवामन्यतमानवैः । यमधिकोन्नमित शिरो
 धि रोधितत्रपा यौवनमदालसा अपि लालसाविवशास्स
 सङ्कोचलोचनेन ललना व्यलोकयन् । येन समातन्य
 माने वैदुष्यनिकषे परीक्षणे समुत्तीर्णा विचक्षणाः
 क्षणादेवक्षोणीतलचिरस्थायिनी मलभन्तसमन्ततो वि-
 ज्ञाततरां समज्ञां प्राज्ञबहुलैरपि जनसमुदयैस्समुद्गीय-
 मानाम् । यस्मै सुकृतागमवनलवनलीन यवनवशं
 वदामिलां मिथिलायाः कलयतेऽसोढ दुःखायाशेषवि-
 शेषसद्गुर्यावदतिक्रान्तवैदुष्यतोषितो भिल्लीकृत
 मणिं दिल्लीसार्वभौमो मिथिलाज्याराज्यं व्यसि-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१७९)

सृजत् । यतः पराजयाशङ्कयेवाक्षपादः काणादश्चादि-
मोदूरदर्शिनां पुरैव प्रयतकरणीमपि तीरभुक्तिधरणी
ममुञ्चत् । यस्यचचन्द्रात्मजतया युक्तरूपैव बुधरू-
पताऽभवत् । यत्रच शारदारमाच प्रत्नतरामप्युदस्य-
सपत्नतां यत्नात्सद्वर्षं सहसासद्वसति मकरोत् । यो
गमायण निशमनसमुचितां दक्षिणामिव स्पर्शमणिं
सामीरणेस्सकाशादासादयत् । योऽधिदिल्लिकल्लुपमल्ल
विभेदभल्लकवदाचरित दल्लकोल्लासिवल्लिन्दाचल
कन्यकाजलेमज्जन्नवाप्यरवापनदशावेखण विपयीकृतां
पापाणमयीं भगवतीप्रतिमा मतितमां तमांसिरोच्चिपा-
तिरस्कुर्वती मगदीदादरेण ॥ ० ॥

विदितं यथा इति । इह विशेष्यविशेषणभाव मातिलोमपात्ताधारणदं
शोधयम् । प्रवृद्धः एवितः एयविरश्च, नृपः पुण्यं गंगाक्षेत्र । गोविन्दपदा
रविदाणसं हरिवारणोदकं गंगा च । परपुत्रतापकः परस्य दयाः पुत्रद
मगरय विपुत्रय च दातव्यः । परमानन्दः सदमिधानो गोपश्च । पुत्रायुः
रक्षत्त्वान्तिः चन्द्राय । शिरोधिः शीघ्रा । सप्तवाप्योपानं च । इति ।
प्रज्जतरामातिदयेन भार्यानाम् । शरमा इति एतद्युताय । म. इति भाष्यं
मिधानमस्तु, इति च. एतद्युताय । अथैव न मगदीदरेण ।

अथैतरय गोपालान्तुतश्च मङ्गलमस्तु इति ।
वीग, धीसमेहस, नन्निवभान्तुतुति इति ।

त्वारः पुत्रा वभ्रुवुः । यत्र गोपालः किल्बिषकृगल
 कालः पितरिकाशिकायां निर्वाणं सुपर्वीमन्त्रातेनापि
 दुरवापमाप्तुमुपयाते प्रसाधयामास महामहीपाल-
 पदवीम्, यदीय निदेश मासादयन्नेव दयादर्शिता-
 भ्युदयां तातेन दूरादानीतां, देवीं, परिदारितारिपा-
 लिकां, निजपदसारससेवकालिपालिकां, कपालि-
 कामनापूरिकां, श्रीकङ्कालिकामच्युतस्समाराध्यतस्याः

“ महेशतनयद्रोही स्वर्गारोही भविष्यति ।

अचिरेणैव कालेन कङ्काली कवलीकृतः ॥”

इतिवरं प्राप्य प्रमुदितः पृतनासनाथस्तृणकमिव
 त्रिलोकीं कलयन् कलहाय निरयात् । ततः क्षणादेव
 क्षिप्रक्षणनक्षम कौक्षेयकच्छटाच्छेदित भौरजातीया-क्षी
 णमद विपक्षक्षत्रियतनुक्षेत्रक्षतोच्छलच्छोणिताच्छन्नाम
 क्षामएवरणक्षोणीं व्यतानीत् । अकार्षीच्चस्वायत्ततावती
 समरावतीं तस्यनगरीम् ॥ अथ कदाचन दैवदुर्विपाका
 दनुजविप्रलम्भेनावधिसम्बन्धमदधानेन विमनायमा-
 नोऽन्तरायमन्तरादुष्कर तपश्चरणकामो वैमात्रेयं
 आतरं प्रतिभूपतिदलभयङ्करं शुभङ्करं भूमीभृतमभा
 वयत् । येनग्रन्थनातिथीकृतास्तिथिनिर्णय प्रभृतयो
 खानिततरा स्तङ्गागाश्च कृत प्रयतयागा
 तमाणा उपकुर्वन्ति सर्वान् । यस्मिन्

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१८१)

विजयाय प्रयाणं विदधत्येव वारिदायन्तेस्म वैरिव-
नितानां लोचनानि, । यत्र शास्त्रीय विचारं चिकी-
र्षत्येव चिरं चकम्पिरे प्रतिविपश्चितां हृदयानि ॥

अरिपालिकां रिपुपंक्तिम् । पृतनासेना । कच्छाय युद्धाय । सणनं
मारणम् । कौक्षेयकः अस्तिः । भौरजार्तायः भौराग्रामवास्तव्य एष आसी
त् । अमरावती नगरी तु मिथिजायां कपळानदी प्रान्तेऽवर्तत । अभावपत्त ।
अकरोदिति यावत् ।

ततोऽस्यसुताश्शात्रवसीमन्तिनीसंहतिस्तुताः सद-
परुषा रूपोन्मूलितकलुषाः पुरुषोत्तम नारायण सुन्दरा
शुक्ताधुतधराधराः क्रमेण भृगालकप्रवरा अभूवन् ।
येषु सुरमथन इव रुक्मिणी प्रेमस्थेमानमास्थितः
प्रथमोनिगस्थायवल्थिनीभिः परिपन्थिनां पृथि-
वी मात्मसादकरोत् ॥ एतस्मात् सन्मतिपरिपाकस्या
करो लालाकः, ततश्च सुकृतव्रतति कन्दः गुणानन्दः
ततश्च गुणिजनानां नाथ एकनाथः, ततश्च कीर्ति
विततः प्रतापसिंहो माधवमिहश्चाजन्यताम् ॥

अस्तोक सुश्लोकभरेण कविवरेण सकलाहिना
हितदरेण सुन्दरेणचानेकत्र दीर्घिका स्सविशेषा अ-
स्वानिपत । अघटिच कूटचेष्टावेष्टितं प्रतिभटानां कूट
मुत्पाटघ निष्कण्टकं गण्डूपटलम् । अथइतोमहिनाय
नरपती नरपतिप्रणतपादपङ्कजावजनिपानाम् ।

तयोराद्योऽनवद्यविद्या प्रधनवीरो विरोधितां दधानस्य
पृथुधनस्य गजसिंहाभिधानस्य दुर्गं दुर्गतं व्यता-
नीत् । परिणिनायचतदीयांश्रियं स्वयंवरेणविधिना

नरपतिश्च सङ्गरेजङ्गम्यमानानभङ्गविक्रमान् प्रज्ञ-
या सङ्गतानपि मोरङ्गदेशीयान् प्रसभं पराभूय
भूयः सार्वभौममभ्यनन्दयां वभूव । उपचाययां च
कारचरणेन मणिवितरणेनच कलाकरमूर्तिजित्वरीः
कीर्तीः कुलानिच कवीनाम् ॥ अथामुष्य मेदिनी
शमुष्यस्तुष्यद दूष्य वैदुष्यसंघो राघवसिंहस्तनूजो
ऽभवत् । यो भृपसिंह माहवे सहससाहसो विनिद-
त्य वाहेन वदलकोलाहलां पचमदलामाह्वयेन तप्ता
ममिदीपितदर्पाणिग्रहीत । व्यजेष्टचेष्टसमारचमृता-
तचेष्टयैव ध्रुवसिंह मधिपनिधरण्याः । यदीयविरुदा-
वर्त्या मद्यन्वेऽपि मद्योदीत हृदय मुद्रायन्ति वृन्दानि
दन्दिनाम् ॥ ततस्तस्मादामन्दनेजिष्णुस्त्वो निष्णु
सिद्ध नेम्बसिद्धौ समस्तनगोष्ठ आम्न निष्णातो प्रा-
दुग्धनाम् । ययोऽगमः पायलिपुत्रपदप्रयित पुण्य
यविवेष्टेवे विवेयोवितना माहात्म्यं सार्वभौमस्य ॥

नरपतिः ॥ १८३ ॥ अङ्गरेजङ्गम्यमानः । अङ्गरेजङ्गम्यमानः । अङ्गरेजङ्गम्यमानः ।

दूष्य ॥ १८४ ॥ दूष्य ॥ १८४ ॥ दूष्य ॥ १८४ ॥ दूष्य ॥ १८४ ॥ दूष्य ॥ १८४ ॥

विद्वन्मोक्षदत्तः । विद्वन्मोक्षदत्तः । विद्वन्मोक्षदत्तः । विद्वन्मोक्षदत्तः । विद्वन्मोक्षदत्तः ।

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१८३)

युद्धम् । तुष्पदिस्पादि तुष्पन् अदृष्य वैदुष्यस्य संघोषस्मात्सङ्घर्षः ।
 आरधे युद्धे । सत्सं दासयुक्तम् । बाहेन बलेन । चमू सेना, मूषे युद्धे ।
 विधेयो विनयग्राही ।

विक्रमसमीकृतामन्ददर्पकन्दर्पदहनोऽधिकन्दर्पिकातर
 द्विणीतीरं भीषणतंसमरमकरोत् । यस्मिञ्छात्रवस्तुभ्य-
 च्छरीरक्षरञ्छोणितप्रोक्षिता यस्यकीर्ति रकलितोपमानं
 श्वेतिमानमासादयामास । यस्यविश्राणनसलिलशैव-
 लिनीसञ्चयेषुव्यसिंसृजदसूनू निःस्वतास्वतएव ॥०॥
 अथासौसूनुश्चान्यशेष मिव रसाश्रितं भोगिनायकं च
 विभाकरमिव ओजोव्याप्तभुवनं राकापतिमिव विल-
 सितकलाकलापं, शमितचकोरलोचनप्रतापं च प्रताप
 सिंहमभिषिपेच । ततोऽयमप्यपत्यमनवाप्तो निज-
 पदेक्षितिपसमुचितैर्गुणैरुपचितं माधवसिंहमास्थाप-
 यदास्थया विधानैः । यः खण्डवलान्ववायावदातज-
 लजातजातविभातसमयः, साधुव्रातमानसकृमुदसमु-
 ह्लासकलामयः, कात्यायनीचरणइवसिंहाकलितः,
 कंसक्षयकारीवधर्मपक्षरक्षकः, सव्यसाचीवदुश्शासन
 सपत्नः, उदन्वानिवसन्तानसन्तोषितसुमनस्स-
 न्तानः, खगनायकइवजिह्मगद्वेषणः, चन्द्रइवसमु-
 दृतपितृकोजैवातृकम्, बहुवाहिनीनाथोऽपिमाधवः,
 बलगृहीतपरवसुमतीकरोऽपिपाप्मनाऽस्पृष्टः, शुचि

रपि जीवनात्मा, सिंहोऽपि नरकृञ्जरः, धीरोदात्त
 शान्तललितः, दक्षिणोऽनुकूलश्च, तिग्मधिषणः, दुर्ग
 तैकशरणः, यो देशान्तर माश्रितेभ्यश्श्रोत्रियेभ्यो निज
 राज्य आनाय्य प्राज्यमास्वय्य निकाय्य सत्तमं, पुरु,
 प्रशस्य सस्य सम्पादनदशं सपदिपरमादरेण केदार
 मददत् । यस्तदीयपरिणयानुबन्धिसाधुतासाधनं धनं
 प्रतिपाद्यकौतूहलकमप्रवध्नात् । यो घाम्ना नाम्ना
 साम्नाच समाम्नातोऽनिभामभावयत्सभाशोभाम् ।
 यं सुदर्शनोज्ज्वलकलेवरं माधवमिवापरममन्यन्तज-
 नाः । येन निष्ठया प्रतिष्ठाविधिना सन्निधापिताः
 सुरधुनीधूर्जटिप्रधानविबुधा अधुनापि समुद्धरन्ति
 निधनमधिगतानमितान् ।

निःस्वता दरिद्रता । रसाश्रितं रत्नादि विपयिण्याभग्नावरणयाचितं
 पृथिव्याचाश्रितम् । भोगी भोगवान् अहिश्च । ओजःमतापस्तेजश्च ।
 चकोरेति प्रकृते सत्पुण्यतया चकोरसदृशस्यनयनस्येत्याद्यर्थः । कलामप-
 धन्द्रः । सिंहेति सिंहेत्युपाधिना केशरिणाच आकलितः युक्तः प्राप्तश्च धर्मः
 पुण्यं युधिष्ठिरश्च । दुःशासनस्य दुष्ट शासनस्य तदभिधानस्यच, सन्तानः
 सन्ततिः कस्यद्वुमश्च, सुमना दशोमनमनादेवश्च, सन्तानः समुदायः जिह्मगः
 कुटिल दृष्टश्च । समुद्धृतपितृकः समुद्धार कर्माकृत पितृका गमुष्मीतपिट्ट
 गणश्च, जैवातृकः आयुष्मान् जैवातृकपदामिषेयश्च । वाहिनी नदी सेनाश्च,
 माधवः विष्णुः माधवाभिधानश्च । बलं बलात्कारः सैन्यं च, परवसुमतीद्वारः
 पराङ्मनाम्नः रिपुर्वायवी बलिश्च । शुचिरग्निः पूतश्च, जीवनात्मा

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१८५)

जलस्वकपः जीदनकारकश्च । सिंहः केशरी पराक्रमेण सिंहसदृशः माधव
सिंहश्च । नरकुञ्जरः नरोनागश्च नरश्रेष्ठश्च धीरोदात्तादिनायकमेदः अवि-
कल्पनादिगुणयुक्तः स्नान्तोलावण्यवलितश्च । दक्षिणः शृङ्गागीनायक
विशेषः समर्थश्च, अतुकूलः पूर्ववत् प्रकृतार्थः स्पष्टएव । निकायं गृहम् ।
पुरु बहुलम् । केदारं क्षेत्रम् । तदायेति श्रोत्रियस्येत्यर्थकम् , साधुता
गमणीयता, अनिभाम् अमदृशीम् । सुदर्शनोज्ज्वलकलेवरं सुदर्शनो-
ज्ज्वलकलेवरं शोभनदर्शनं मुज्ज्वलं च कलेवरं यस्य तं च । सन्निधापिता
इति, संनिधानमहङ्गारमपकागौ ।

येन च गृहीतवलितयात्रपयेव पातालमन्तर्महोदधे
रविशत । यस्य यशोविरादशोचिः प्रतापतापनश्चाप-
हाय विश्वविश्रुतशत्रुतामविरतं सममेवोदगात् ।
यस्य चातुलितां विचारचातुरीं विचिन्तयन् निज-
दुहितृसम्प्रदाने वारव्यस्यामपि समुदायश्चोत्रिपाणां
तदायत्तांहर्षादकार्षीत् । यस्सुकृतसंहत्येव जरयाऽपि
पर्यावलक्षितं क्षेत्रमभिवीक्षमाणः क्षणेन श्रेयश्शास्त्र-
निदेशानुमारेण सम्भारेणाभिषिञ्चात्मजन्मानं ज्याय
सं राज्यं सिंहासने वशीकृतदृषीको वाराणसीं चिरस्य
सुश्रूषमाणः प्रमोदयन्नमन्दं मन्दाकिनीं सलिलास्वा-
दनेन शरीरवल्लरीं कदाचिदाश्रितो मणिकर्णिकां तरु-
णिमनिवासरस्य मिहिरनिहितनयनाम्बुजन्मयुग्मः स्वा-
न्तेस्मरन्नरकान्तक ममरनिकरेणाप्यनवाप्यं भव्यं भव्यं
यपदमवापत् ॥०॥ बहिर्वृत्तिजीवितमिवैतस्यात्मजवरः,

(१८६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्रोद्यत्प्रतापतपनसन्तापित प्रत्यर्थिसार्थाधिष्ठिततुषारा-
 द्विकन्दरोदरः, निरवशेषनीति निकरनिगूढार्थतत्त्व नि-
 कामनिष्णाततया नितान्त निराकृत निखिलनयनि-
 पुणता निकेतनः, सुनासीरइव चित्ररथराजित सगर्व
 गन्धर्व शिरस्स्वीकृत शासनः, प्रभावतीविभ्रमइव
 समुद्दीपित प्रद्युम्न द्योतितः, सदाशिवइव सोमामृतो
 पचीयमानवदनश्रुतिः, प्रौक्तिकमणिमालिकाविशेष
 इव कामिनीहृदयावस्थितः, खण्डवलान्वयगतोप्य
 खण्डवलपटलान्वितः, यशः पाटीरपङ्कानुलेपिताशा-
 द्गनावदनोऽपि धौरेयोधर्मवताम्, तपनावलोकन
 मपन्नोऽपि तपनोपस्थाता, प्रजापटलीप्रणयामत्र-
 भूतः छत्रसिंह आसीत् । यश्चन्द्रयाधाणिविबुधो-
 चित्यकृत्य विधानप्रबन्धमनुरुन्धानोऽपि धर्माविरोधि
 राज्यमण्डलमतितमामवीवृधत् । यो नैपाल नृपालस
 म्परायप्रदर्शितपराक्रमो भारतकाश्यपीपतिप्रेमपात्रनां
 प्रापत् । यस्य बलभा कीर्तिकामिनी काननेऽप्येका
 किनी भूमति भुवनेषु निर्भयम् । यद्विपक्षकान्ता
 बहोज युगलमर्थतोऽपि पयोधमनांदधौ ।

वनिः वैनोवनिः कथम् । प्रत्ययपदं कैवलयम् । विवराणाः विषयगो-
 र्वाः सन्त्यर्वाः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः
 प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः प्रत्ययः

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१८७)

चन्द्रामृतेन वा उमा चन्द्रामृताभ्यां वा इत्याद्यर्थः । हृदयं मनः वक्ष्यम् ।
 खण्डेत्पादौ विरोधः स्फुटपत्र, परीहारे खण्डवज्रान्वयः खण्डवलाभिधानो
 वंशः बलं सैन्यमित्यर्थः । तपनो निरयप्रभेदः सूर्यश्च । अमघं भाजनम् ।
 दधाविति मियशोरुजनिताश्रुमम्पातेनेत्यर्थः ।

यः प्रोन्नतसुन्दरेषु मन्दिरेषु सदासुकृतोन्मुखो
 दानवदलद्वेषणेन्दुशेखरप्रमुखान् लेखान् प्रीत्याप्रत्य
 तिष्ठिपत् ॥ ०

ततश्छत्र सिंहादमित्रमदमलिनकटतटकरटिकुम्भक
 पाट पाटन पाटवाटितविकटकण्ठीरवः, प्रोज्ज्वलदोजो-
 ज्वलनजातार्जुनयशोजैवातृकः, सान्द्रहार्देन चन्द्र-
 प्रिय प्रायोपलप्रकर निर्मापितेषु प्रोत्तुङ्गशृङ्गमनो
 पहारि मन्दिरेषु विधिस्थापिताराधितराधापतिः,
 अतिविशदसन्मतिः, सकलसुकृतिलोकनतुलानुकूलः
 पापण्डशमीशालकुलमूलकूलङ्कषः, ऊर्ध्वजठजानुः,
 तेजोविजितभानुः । वनीयककमनीयदायकः अव-
 नीपतिमालानायकः, अतिमानमानवातन्यमानबहु-
 मानः, धर्मसमानः, प्राचीनावार रक्षणचणः, मेदिनी
 तलमनितमनीषिभिः समंक्षपितप्रचुरक्षणः, संमिलन
 दूरीकृतदुर्जन गणः, शर्वइवसर्वमङ्गलोपचारचतुरः,
 प्रोन्नतवसुवंशइवसुरससम्भावितः, चित्रभानुरिव प्रति

(१८६) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

प्रोद्यत्प्रतापतपनसन्तापित प्रत्यर्थिसार्थाधिष्ठिततुषारा-
 द्विकन्दरोदरः, निरवशेषनीति निकरनिगूढार्थतत्त्व नि-
 कामनिष्णाततया नितान्त निराकृत निखिलनयनि-
 पुणता निकेतनः, सुनासीरइव चित्ररथराजित सगर्व
 गन्धर्व शिरस्स्वीकृत शासनः, प्रभावतीविभ्रमइव
 समुदीपित प्रद्युम्न द्योतितः, सदाशिवइव सोमामृतो
 पचीयमानवदनश्रुतिः, मौक्तिकमणिमालिकाविशेष
 इव कामिनीहृदयावस्थितः, खण्डवलान्वयगतोप्य
 खण्डवलपटलान्वितः, यशः पाटीरपङ्कानुलेपिताशा-
 ङ्गनावदनोऽपि धौरेयोधर्मवताम्, तपनावलोकन
 सपत्नोऽपि तपनोपस्थाता, प्रजापटलीप्रणयामन्न-
 भूतः छत्रसिंह आसीत् । यश्चन्द्रयाधाणिविवुभो-
 चित्यकृत्य विधानप्रबन्धमनुरुन्धानोऽपि धर्माविरोधि
 राज्यमण्डलमतितमामवीवृधत् । यो नैपाल नृपालस
 म्परायप्रदर्शितपराक्रमो भारतकाश्यपीपतिप्रेमपात्रतां
 प्रापत् । यस्य वल्लभा कीर्तिकामिनी काननेऽप्येका
 किर्ना भूमति भुवनेषु निर्भयम् । यद्विपक्षकान्ता
 वक्षोज युगलमर्थतोऽपि पयोधरतांदधौ ।

वलिः देवोन्नतिः कथम् । अद्ययपदं कैवल्यम् । चित्ररथः चित्रवर्गो
 रथः गन्धर्वश्चेष्टयः, गन्धर्वः सुरगः देवयोनिविशेषश्च । प्रद्युम्नं धनम्,
 कृष्णं स्वप्नश्च अश्रुतः । मोमेत्यादि, मोममृताजलेन समाया अपरापुत्रेन

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀ (१८७)

चन्द्रामृतैर्न वा उमा चन्द्रामृताभ्यां वा इत्याद्यर्थः । हृदयं मनः वक्ष्ये ।
 खण्डेत्यादौ विरोधः स्फुटयन्, परीहारे खण्डवत्त्वान्वयः खण्डवत्ताभिधानो
 वंशः बलं सैन्यमित्यर्थः । तपनो निरयप्रभेदः सूर्यश्च । अमत्रं भाजनम् ।
 दधाविति प्रियशोरुजनिताश्रुमम्पातेनेत्यर्थः ।

यः प्रोन्नतसुन्दरेषु मन्दिरेषु सदासुकृतोन्मुखो
 दानवदलद्वेषणेन्दुशेखरप्रमुखान् लेखान् प्रीत्याप्रत्य
 तिष्ठिपत् ॥ ०

ततश्छत्र सिंहादमित्रमदमलिनकटतटकरटिकुम्भक
 पाट पाटन पाटवाटितविकटकण्ठीरवः, प्रोज्ज्वलदोजो-
 ज्वलनजातार्जुनयशोजैवातृकः, सान्द्रहादेन चन्द्र-
 प्रिय प्रायोपलप्रकर निर्मापितेषु प्रोत्तुङ्गशृङ्गमनो
 पहारि मन्दिरेषु विधिस्थापिताराधितराधापतिः,
 अतिविशदसन्मतिः, सकलसुकृतिलोकनतुलानुकूलः
 पाषण्डशमीशालकुलमूलकूलङ्कषः, ऊर्ध्वजठजानुः,
 तेजोविजितभानुः । वनीयककमनीयदायकः अव-
 नीपतिमालानायकः, अतिमानमानवातन्यमानवहु-
 मानः, धर्मसमानः, प्राचीनाचार रक्षणचणः, मेदिनी
 तलमनितमनीषिभिः समंक्षपितप्रचुरक्षणः, संमिलन
 दूरीकृतदुर्जन गणः, शर्वइवसर्वमङ्गलोपचारचतुरः,
 प्रोन्नतवसु सुरसमम्भावितः, चित्रभानुरिव प्रति

(१८८) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

रुद्धकैरवोदयः, प्रमत्तमातङ्गइव पदन्यासापहतजन-
मानसः, व्याकृतिनिबन्धइव सप्रकृतिप्रत्ययः, पृषद-
श्वसस्वशिखाश्लेषितोऽपिनयनराजितः, सुप्रीतगुरुपि-
द्धिजराजः, रसास्थितोऽप्यवियातः, शास्त्रनिकरनिकेतभू-
तोऽपिचेतोहरः, रुद्रसिंहोऽवततार । येनसांसिद्धिकश्च-
द्धया विश्वाशापावनं तीर्थकदम्बकं सममानि गम-
नेन ! येनच खानितः सुरससलिलः सामीरणिसेवि-
तः कासारस्सरस्वन्तमपि तिरस्करोति । यस्यवैमात्रे-
यो वासुदेवसिंहो मेध्यमूर्तिस्समेधस्समेधमानयशाग-
जगन्धवारिवन्धुरां गन्धवारिपुरीमध्यवात्सीत् ॥ ० ॥

कटः कपोलः, करटी गजः, कण्ठीरवः सिंहः । वनीपकः पाचकः,
नायकः मध्यमणिः । अतिमानमपरिमितम् । मनितः विदितः, सर्वमङ्गलो-
पचारः, सर्वेषामङ्गलायोपचारः सर्वमङ्गलाया उमायाः उपचारश्च । वसु-
धैरम्, सुरसः रसिक विशेषः शोभनोरमः, जलंच । कैरवो रिपुः कुमुदं
च कैरवम् । पदन्यासः चरणगतिः सुसिद्धन्त रचनाच । प्रकृतेः मूक-
प्रकृतेः सचित्रादेर्वा प्रत्ययेनविश्वासेन प्रकृतिप्रत्ययाभ्यां वा सहितः,
अन्यद्वयाभ्यां कवि मुखादवगन्तव्यम् विस्तरभीत्यानेहमपश्यते । पृष-
दश्चमत्तोऽग्निः, नयेननराजितः नयनाभ्यां राजितश्च । गुरुर्वाचस्पतिः
आचार्यादिश्च, द्विजराजश्चन्द्रः द्विजानांपतिश्च रमास्थितः रते रत्यादौ
रमायां पृथिव्यां चास्थितः, अक्रियानः अधृष्टः । शास्त्रनिकरः ब्रह्मज्ञा-
नमूढः । विश्वादासककादिकः । समेषः मेमासी ॥

चन्द्रमरीचिरुचिरः, शरदागम इव बन्धुजीवामोद ब-
न्धुरः, हिमसमयइव नमज्जन प्रीतिदायकः, वैनतेय
इव विहिताहितापकृतिः, उन्मदमातङ्गइव दानवा-
रि विभासितकरः, वारिधिरिव वेलास्फूर्तिश्लाघनीयः,
वासारइव द्विजराजिराजितवनः, धवलदलाष्टमीतमी
समयइव भालेन्दुशकलमनोरमः, लोचनविशदीकृत
आनन्दवर्धनोदितोध्वन्यालो गोवा, शुकनाससम्भासि-
तः कादम्बरी प्रवन्धो वा, अधिगमिताधरप्रतिबिम्बवि-
म्बकस्सिद्धान्तलेशोवा, शशिवदनोपेतो वृत्तदर्पणोवा,
मणिस्रगालिङ्गितसुग्रीवः प्राचेतसो च्छासोवा, विपुल
स्कन्धवन्धो भागवतं वा, मण्डनविकाशितहृदयो मे-
त्रेयीब्राह्मणोवा, विततबाहुशाखोवेदोवा, जङ्घाका-
ण्डमण्डितः पारस्करसूत्रसञ्चयोवा, चन्द्रकान्तललि-
तपदोपस्कृतः पिङ्गलागमोवा ।

कामददर्शनः इष्टदालोकनः मदननाशकनयनश्च । न देशजा प्रणय
विषयः देशीयानामप्रणयस्य न विषयः न देशादव्येर्जाताया रमायाः प्रणयस्य
विषयः । लोकेशोविधिः, कमलासनं कमलायाः स्थितिः कमलात्मकमासनं
च । आम्नायः कुलं सद्युपदेशोवेदश्च, एतेनमीनावतारसादृश्यं दर्शितम् ,
एवमेवाप्रेषिकूर्माद्यवतारसादृश्यं वेदितव्यम् । गोपिनानन्तः रक्षिता अन-
न्तापृथिवी अपरिमेयजनाश्च येनसः । गोत्रं कुलम् गोत्रा पृथ्वी । हिरण्याक्ष
प्रदः कनकज्ञानदाता हिरण्याक्षामिधानस्यासुरस्य स्वण्डकश्च । बलिः करः

(१९०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

गुणोत्करा स्सोदरा विविदिरे ॥ ० ॥

अभिषिष्टः याचितः, मानववंशः नरकुलं मनोः कुलं च । वाजि-
राजः तुरगराजः गरुडश्च, पदं स्थानं चरणश्च । परिकरः परिवारः पर्य-
ङ्कश्च । ईशो नृपतिः शिवश्च । गुणेति सामुद्रिके शास्त्रे समुद्रेण गुणदोष-
योर्विवेकस्य विहितत्वादिति, पवनाशनः शर्पः वायुवक्षणो न तपः कुर्वाणश्च
विनतामोदः विनताया विशेषेण नम्रस्यचमोदः । अकलङ्कीतनयोऽकल-
ङ्कितो नयोवायस्यसः । इरामघं वचनं च । पुरः त्रिपुरोनगरं च पुरम् ।
असमदर्शनः शिवः अनुपमदृष्टिश्च ॥ ❀ ॥

अथैतस्यतनयः त्रिनयनइव कामददर्शनः, केशव
इवनदेशजाप्रणयविषयः, लोकेशइव कमलासनविभा-
सितः प्रजापतिश्च, नारायणावतारनिकरइव पालिता-
म्नायः, गोपितानन्तः उद्धृतगोत्रः, हिरण्याक्षप्रदः, नि-
यमितवलिः, बलविजितराजव्रजः, अमोघमार्गण गण-
गमनः, उग्रसेनामोदनः, दर्शिताशेषक्षणभावः, ज्वलन-
हुत यवनमदश्च । विभावसुखिवसुधाराज्यमोदितः,
छायान्वितः, मरुलकामिनी नयनोत्पलविकाशकश्च ।
सोमइवमुदितयोगिस्तोमः, व्योमाङ्गनाश्रितः, उदया-
नुरक्तमण्डश्च अङ्गारकइव धरणिवर्धनः, सौम्यइव
काव्यप्रियः, वाचस्पतिरिव वृन्दारकप्रकरसेवितः,
भार्गवइव कर्तुरमालाञ्जितः, सौगिरिव विरोचनाग-
तिः । कुसुमाकरइव मण्डवलाकुलकाननमुपमाकरः,
निदावइव क्षणदामोदिसदागतिः, प्रावृदकालइव नक्ष

चन्द्रमरीचिरचिरः, शरदागम इव बन्धुजीवामोद व-
न्धुरः, द्विमसमय इव नमज्जन प्रीतिदायकः, वेनतेय
इव विहिताहितापकृतिः, उन्मदमातङ्ग इव दानवा-
रि विभामितकरः, वारिधिरिव वेलास्फुर्तिश्लाघनीयः,
कासार इव द्विजराजिराजितवनः, धवलदलाष्टमीतमी
समय इव भालेन्दुशकलमनोरमः, लोचनविशदीकृत
आनन्दवर्धनोदितो ध्वन्यालोको वा, शुकनाससम्भासि
तः कादम्बरी प्रवन्धो वा, अधिगमिताधरप्रतिबिम्बवि
म्बकस्सिद्धान्तलेशो वा, शशिवदनोपेतो वृत्तदर्पणो वा,
मणिस्रगालिङ्गितसुग्रीवः प्राचेतसोच्छ्वासो वा, विपुल
स्कन्धवन्धो भागवतं वा, मण्डनविकाशितहृदयो मे-
घ्रयीव्राह्मणो वा, विततवाहुशाखो वेदो वा, जङ्घाका-
ण्डमण्डितः पारस्करसूत्रसञ्चयो वा, चन्द्रकान्तललि
तपदोपस्कृतः पिङ्गलागमो वा ।

कामददर्शनः इष्टलोकनः पदननाशकनयनश्च । न देशजा मणय
विषयः देशीयानाममणयस्य न विषयः न देशादव्येर्जाताया रमायाः मणयस्य
विषयः । लोकेशो विधिः, कपलासनं कपलायाः स्थितिः कपलात्मकमासनं
च । आम्नायः कुलं सदुपदेशो वेदश्च, एतेन मीनावतारसादृश्यं दर्शितम्,
ऐबमेवाग्रेपि कूर्मावतारसादृश्यं वेदितव्यम् । गोपिनामन्तः रक्षिता अन-
न्तापृथिवी अपरिमेयजनश्च येन सः । गोत्रं कुलम् गोत्रा पृथ्वी । हिरण्याक्ष
प्रदः कनकज्ञानदाता हिरण्याक्षाभिधानस्यासुरस्य सल्लक्ष्य । बलिः करः

(१९०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

गुणोत्करा स्तोदरा विविदिरे ॥ ० ॥

अभिष्वस्तितः याचितः, मानववंशः नरकुलं मनोः कुलं च । वाजि-
राजः तुरगराजः गरुडश्च, पदं स्थानं चरणश्च । परिकरः परिवारः पर्य-
ङ्कश्च । ईशो नृपतिः शिवश्च । गुणेति सामुद्रिके शास्त्रे समुद्रेण गुणदोष-
योर्विवेकस्य विहितत्वादिति, पवनाशनः शर्पः वायुभक्षणेन तपः कुर्वाणश्च
विनतामोदः विनताया विशेषेण नम्रस्यचमोदः । अकलङ्कीतनयोऽकल-
ङ्कितो नयोवायस्यसः । इरामघं वचनं च । पुरः त्रिपुरोनगरं च पुरम् ।
असमदर्शनः शिवः अनुपमदृष्टिश्च ॥ ❀ ॥

अथैतस्यतनयः त्रिनयनइव कामददर्शनः, केशव
इवनदेशजाप्रणयविषयः, लोकेशइव कमलासनविभा-
सितः प्रजापतिश्च, नारायणावतारनिकरइव पालिता-
म्नायः, गोपितानन्तः उद्धृतगोत्रः, हिरण्याक्षप्रदः, नि-
यमितवलिः, बलविजितराजव्रजः, अमोघमार्गण गण-
गमनः, उग्रसेनामोदनः, दर्शिताशेषक्षणभावः, ज्वलन-
हुत यवनमदश्च । विभावसुरिवसुधाराज्यमोदितः,
छायान्वितः, मरुलकामिनी नयनोत्पलविकाशकश्च ।
सोमइवमुदितयोगिस्तोमः, व्योमाङ्गनाश्रितः, उदया-
नुरक्तमण्डश्च अङ्गारकइव धरणिवर्धनः, सौम्यइव
काव्यप्रियः, वाचस्पतिरिव वृन्दारकप्रकरसेवितः,
भार्गवइव कर्वूरमालाञ्चितः, सौरिरिव विरोचनारा-
तिः । कुसुमाकरइव खण्डवलाकुलकाननसुषमाकरः,
निदाघइव क्षणदामोदिसदागतिः, प्रावृद्धकालइव नक्ष

श्रीलक्ष्मीशरी चरितम् ॥ (१९१)

चन्द्रमरीचिरुचिरः, शरदागम इव बन्धुजीवामोद ब-
न्धुरः, हिमसमय इव नमज्जन प्रीतिदायकः, वेनतेय
इव विहिताहितापकृतिः, उन्मदमातङ्ग इव दानवा-
रि विभासितकरः, वारिधिरिव वेलारफूर्तिश्लाघनीयः,
वासार इव द्विजराजिराजितवनः, धवलदलाष्टमीतमी
समय इव भालेन्दुशकलमनोरमः, लोचनविशदीकृत
आनन्दवर्धनोदितोध्वन्यालो गोवा, शुकनाससम्भासि
तः कादम्बरी प्रवन्धो वा, अधिगमिताधरप्रतिबिम्बवि
म्बकसिद्धान्तलेशोवा, शशिवदनोपेतो वृत्तदर्पणोवा,
मणिस्रगालिङ्कितसुग्रीवः प्राचेतसो च्छासोवा, विपुल
स्कन्धवन्धो भागवतं वा, मण्डनविकाशितहृदयो मे-
त्रेयीब्राह्मणोवा, विततबाहुशाखो वेदोवा, जङ्घाका-
ण्डमण्डितः पारस्करसूत्रसञ्चयोवा, चन्द्रकान्तललि
तपदोपस्कृतः पिङ्गलागमोवा ।

कामददर्शनः इष्टशालोकनः मदननाशकनयनश्च । न देशजा मणय
विषयः देशीयानामप्रणयस्य न विषयः न देशादव्येर्जाताया रमायाः प्रणयस्य
विषयः । लोकेशोविधिः, कमलासनं कमलायाः स्थितिः कमलात्मकपासनं
च । आम्नायः कुलं सद्गुणदेशो वेदश्च, एतेन मीनावतारसादृश्यं दर्शितम्,
एवमेवाग्नेपि कूर्मावतारसादृश्यं वेदितव्यम् । गोपिनान्तः रक्षिता अन-
न्तापृथिवी अपरिभेजनाश्च येन सः । गोत्रं कुलम् गोत्रा पृथ्वी । हिरण्याक्ष
प्रदः कनकज्ञानदाता हिरण्याक्षभिधानस्यासुरस्य स्वण्डकश्च । बलिः करः

(१९२) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरी चरितम् ❀

वैरोचनिश्च । वलं सैन्यं शक्तिश्च, राजामुपः क्षत्रियश्च । मार्गणः याचकः
 श्वरश्च । उग्रसेनामोदनः तीक्ष्णसेनायाः उग्रसेनाभिधानस्यचामोदनः ।
 अशेषक्षणभावः सकलोत्पन्नवभवनं सच्छेषेषुसणिकृत्वंच । उवकनहुतयवनमदः
 उवकनेऽग्नौ हुतयवः नमदः हुतः यवनानांमदोयेनसच । वसुधा राज्यं
 पृथ्वीराज्यं वसुधारासम्बन्धिघृतं च, छायाकान्तिः सूर्यप्रियाच, योगी
 योगाभ्यासी अविद्युक्तः कामोच । व्योमाङ्गनाश्रितः व्योमाङ्गनामुपा मा-
 काशाङ्गणं चाश्रितः । उदयानुरक्तमण्डलः उदये वृद्धौ प्रकाशविशेषेणा
 अनुरक्तं मणयि रक्तवर्णं च मण्डलं प्रजामण्डलं चक्रवालं वा यस्यसः वर्धन
 इति पतित्वेन सुतत्वेनच बोध्यम् काव्यं कविकर्मशुक्लकाव्यः ज्योतिर्निबन्धे
 बुधशुक्रयोस्वरूपस्य प्रतिपादनात् । वृन्दोक्तः सुरःश्रेष्ठश्च । कर्षा
 माञ्चा चित्रमाश्यं राससपरम्पराच । सौरिशनिः विरोचनः कान्तिरहितः
 सूर्यश्च । क्षणश उत्सवदा आमोदिनीसतीमागतिर्यस्य रात्रावामोदीसदा
 गतिर्वायुर्यत्रसच । नखेत्यादि नखरेन्दोः कन्त्यारुचिरः आकाशेन्दु
 कान्तिरुचिरोनेत्यर्थः । बन्धुजीवः बन्धूनांजीवः पुष्पविशेषश्च । नमेत्यादि
 नमतां जनानां प्रीतिदायकः मज्जनेन प्रीतिदायकइत्यर्थः । अहितस्याप-
 कृतिः अहेस्तापकृतिः । दानेति उत्सर्गजलविभासितहस्तः मदजलविभा-
 सितशुण्डश्चेत्यर्थः । वेला अवसरो मर्यादाच, द्विजो विप्रो विहगश्च, वनं
 गृहं विपिनं जलं च । शकलं खण्डः लोचनेन नेत्रेण लोचनाभिधानया
 टीकयाच, आनन्दस्य वर्द्धनाय उदितः आनन्दवर्धनाचार्येण भाषितश्च
 शुकनासः शुकतुलितनासिकः शुकनासेनसचिवेन सम्भाषितश्च श्लेषे
 रेवयात् । अघरस्य प्रतिविम्बं विम्बफलम् अधरः प्रतिविम्बोयस्मात्
 तादृशोविम्बश्च । शशिवदनं शशिवदना तदभिधाने छन्दश्च । सुग्रीवा
 शोभनकन्धरा सुग्रीवश्च वानरः । मण्डनं भूषणं मण्डनमिच्छश्च मण्डनः

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

(१९३)

दृश्यं वसोरहस्यं च, मैत्रेयीत्रांसणोवृहदारण्यकम् । चन्द्रचिरेण कृत्स्नैः
पदेन, चन्द्रकान्तलक्षितपदाभ्यां छन्दोभ्यांचोपस्कृतः ।

परिपालितप्रजोऽपिनरक्षणकरः, केशवोप्यवामनावता-
रः, परममदाश्लेषितोऽपिधुरीणोधार्मिकाणाम्, प्रोदित-
प्रतापदहननिर्दग्धद्वेषणसम्भूतभृत्याभृषितोऽपि पूतः,
अनेकपनायकोऽपि नगजानुगतः, निरस्तद्विजि-
ह्वोऽपि धरणिभृत्, सवनश्रितोप्यवनपरायणः, कुमु-
दावर्धकोप्यक्षयिवसु स्तमसानासादितश्च, सकलाशा-
पूरककरोऽपि अमिततुरङ्गमो दोषानभिभूतश्च, लोके-
शोप्यनाभिजातः, विजितदर्पकोऽपि मनोजवशः, भो-
गवानपि मन्त्रानुचारिपराक्रमः, अद्वितीयोऽपि द्वि-
तीयानुरक्तः, सुन्दरदर्शनोऽपि कविः, आत्तदण्डहोऽ-
पि परिगोपिताशेषतापसः, सृगयाशीलोप्यनाकलित
काननक्लेशः । भीमेनापिशिरसास्वीकृतशासनः,
कुलपालिपालनः । वदान्यतमः, सर्वदागृहीततारः ।
सत्यव्रतः आस्वादितरमणीरसः ।

न रक्षणकरः नहि रक्षणकरः नरस्य क्षणकरश्च केशवो हरिः पुंनाग
श्च, न वामनावतारः अवामनः अखर्हः अवतारोयस्य स च । परममदा-
श्लेषित परेषां प्रेमदया परेण प्रमदेनचाश्लेषितः । भृत्याभरमनापेक्ष्येण
च । अनेकपोगजः अनेकेषां पादबन्ध, न गजेनानुगतः नगजानुगता-
नुगतश्च । द्विजिह्वः सर्पः खड्गश्च, धरणिभृत् पर्वतो राजाच । सवनं वनपुतं

(१९४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

पजनं च, अवनं वनरहितं पाकनं च । कुमुदं कैरवं पृथिव्या इषडच कु-
मुत्, वसु कान्तिः धनं च । तमसाराहुणा ज्ञानेनच सकलाशा समस्ता
दिशा, सकलजनानां तुष्णा च । दूरः किरणः हस्तश्च, अमितेति, रवे-
स्तप्ताश्वत्वाद्विरोधः, दोषया दोषैश्चानभिभूतः । लोकेशोविधिः लोका-
नामीशश्च, अनाभिजातः नायेर्नजातः सुन्दरश्च । मनोजवशः कामा-
धीनः, पितृसन्निभश्च । भोगवान् फणी सुखीच, मन्त्रोपनुर्विचारश्च ।
अद्वितीयः एकमात्रं सजातीयद्वितीयरहितश्च, द्वितीयानुरक्तः द्वितीयस्मिन्
द्वितीयायां श्रीतारिण्यांचानुरक्तः । दर्शनं नयनम्, कविः शुक्रः, कवयिता
च । आचदण्डकः गृहीतदण्डकाभिधानविपिनः गृहीतदण्डश्च, राम-
मादाय विरोधः । मृगयेत्यादि मृगयाञ्छेष्टः भीमः भीमसेनः भयं-
करश्च, एताभ्यां युधिष्ठिरापेक्षयाव्यतिरेकः । गृहीततारः गृहीता तारा
हरिश्चन्द्रस्यजाया भगवती च येन सः, एतेन तदपेक्षयाव्यतिरेकः ।
सत्यव्रत इति एतेन भीष्मापेक्षयाव्यतिरेकः ।

प्रवीरो मङ्गलकरः, परसमाधिसहिष्णुः जिष्णुः । अकूरः
गोकुलानन्दनः । चन्द्रकान्तः सुकुमारः । सूरतः शूरतरः
उपायप्रयोगकुशलः, द्विषददलितदलः, कृतलक्षणः,
नवपेशलक्षणप्रदर्शनः, विचक्षणप्रतीक्ष्यः, रक्षणमसदी-
क्षितः स्वच्छयाशयावलक्षः उदारदयेक्षितप्रजः कुल-
पर्यायप्राज्ञः, रसाभिज्ञः विद्वितबहुयज्ञः । सप्रतीकश्रुति
स्मृतितन्त्रसन्ततिस्वतन्त्रेण, यजनजपनहवनध्यान
प्रधानधर्मानुष्ठानपरम्परापरोक्षणेन, अनुदिनं वदन

समुदयेनदितानि कथयता पृथिवीनाथंप्रथयमानेन,
 राजानुरागरोदितेन, पुरोदितेन, धर्मागमगहनसञ्चार-
 पद्धाननेन, सदभिजनजननयातेन, शीतलतरशील-
 शालिना. सुकृतसचिवेन,, सदगारधारकैः स्तम्भैरि-
 सारसङ्कतैः, अष्टजिनवृत्तिभिः प्रवृद्धैः, असद्व्यसन-
 महापवनेनाप्यनवधीरितिधीरभावैश्च, परार्थानुमानैस्वि-
 न्यायानुयायिभिः, शक्तिसाधकैरिव संवृतमन्त्रैः, साधु-
 साधनैरिव विपद्धाननुबन्धिभिः, कविप्रवरैरिव रहसि-
 पदानि चिन्तयानैः, महामुनिवनैरिवाल्लुब्धैः,
 गणितनिपुणैरिव देशकालकोविदैः, नीतिविशारदैः,
 प्रतिभातिविशदैः, प्रगल्भैः, समज्यारञ्जनैः,
 मन्त्रिजनैः,, दाशैरिव भुवनाशयशयितग्राहकैः,
 योगिपटलैरिवास्पृष्टव्यसनैः, रतिस्थायिभावैरिव
 शुचिताञ्चितैः, क्षोणीश्वरैरिव क्षमारक्षकैः त्रिदशा-
 स्थानकैरिव स्फुरितधिषणैः, यथाभिहितभाषणैः, तृष्ण-
 याऽकृष्णैः क्रोधानवधूतैः, दूतैः,,

प्रवीरेति, एतेन यमापेक्षयाव्यतिरेकः । जिष्णुः जयनशील इन्द्रश्च,
 एतेनेन्द्रापेक्षयाव्यतिरेकः । अक्रूरेति, एतेनाक्रूरापेक्षया व्यतिरेकः ।
 चन्द्रकान्तः इन्दुसुन्दरः चन्द्रकान्तशिलाच, एतेनोक्तशिलापेक्षयाव्यति-
 रेकः । सूरतः दयालुः शूराद्वा उपायेति, सामदानादीत्यर्थः । कृतकक्षणः
 गुणैः प्रतीकः । पेशकः चारुः । पर्यायः क्रमः । प्रतीकः अङ्गम् । सारं न्याय्यं

(१९४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

यजनं च, अवनं वनरहितं पाकनं च । कुमुदं कैरवं पृथिव्या हर्षश्च कु-
मुदं, वसु कान्तिः धनं च । तमसाराहुणा अज्ञानेनच सकलाशा समस्ता
दिशो, सकलजनानां तृष्णा च । हरः किरणः हस्तश्च, अम्रितेति, रवे-
स्तप्ताश्वत्वाद्विरोधः, दोषया दोषैश्चानभिभूतः । लोकेशोविधिः लोका-
नामीशश्च, अनाभिजातः नाभेर्नजातः सुन्दरश्च । मनोजवशः कामा-
धीनः, पितृसन्निभश्च । भोगवान् फणी सुखीच, मन्त्रोमनुर्विचारश्च ।
अद्वितीयः एकमात्रं सजातीयद्वितीयरहितश्च, द्वितीयानुरक्तः द्वितीयस्मिन्
द्वितीयायां श्रीतारिण्यांचानुरक्तः । दर्शनं नयनम्, कविः शुकः, कवयिता
च । आचदण्डकः गृहीतदण्डकाभिधानविपिनः गृहीतदण्डश्च, राम-
मादाय विरोधः । मृगयेत्यादि मृगयाञ्जाखेटः भीमः भीमसेनः भयं-
करश्च, एताभ्यां युधिष्ठिरापेक्षयाव्यतिरेकः । गृहीततारः गृहीता तारा
हरिश्चन्द्रस्यजाया भगवती च येन सः, एतेन तदपेक्षयाव्यतिरेकः ।
सत्यव्रत इति एतेन भीष्मापेक्षयाव्यतिरेकः ।

प्रवीरो मङ्गलकरः, परसमाधिसहिष्णुः जिष्णुः । अक्रूरः
गोकुलानन्दनः । चन्द्रकान्तः सुकुमारः । सूरतः शूरतरः
उपायप्रयोगकुशलः, द्विपददलितदलः, कृतलक्षणः,
नवपेशलक्षणप्रदर्शनः, विचक्षणप्रतीक्ष्यः, रक्षणमसदी-
क्षितः स्वच्छयाशयावलक्षः उदारदयेक्षितप्रजः कुल-
पर्यायप्राज्ञः, रसाभिज्ञः विहितबहुयज्ञः । सप्रतीकश्रुति
स्मृतितन्त्रसन्ततिस्वतन्त्रेण, यजनअपनहवनध्यान
प्रधानधर्मानुष्ठानपरम्परापरोक्षणेन, अनुदिनं वदन

समुदयेनहितानि कथयता पृथिवीनाथं प्रथयमानेन,
 राजानुरागरोहितेन, पुरोहितेन, धर्मागमगहनसञ्चार-
 पश्चाननेन, सदभिजनजननयातेन, शीतलतरशील-
 शालिना, सुकृतसचिवेन,, सदगारधारकैः स्तम्भैरि-
 सारसङ्गतैः, अवृजिनवृत्तिभिः प्रवृद्धैः, असद्व्यसन-
 महापवनेनाप्यनवधीरितिधीरभावैश्च, परार्थानुमानैरिव
 न्यायानुयायिभिः, शक्तिसाधकैरिव संवृतमन्त्रैः, साधु-
 साधनैरिव विपश्चाननुबन्धिभिः, कविप्रवरैरिव रहसि
 पदानि चिन्तयानैः, महामुनिवनैरिवालुब्धैः,
 गणितनिपुणैरिव देशकालकोविदैः, नीतिविशारदैः,
 प्रतिभातिविशदैः, प्रगल्भैः, समज्यारञ्जनैः,
 मन्त्रिजनैः,, दाशैरिव भुवनाशयशयितग्राहकैः,
 योगिपटलैरिवास्पृष्टव्यसनैः, रतिस्थायिभावैरिव
 शुचिताञ्चितैः, क्षोणीश्वरैरिव क्षमारक्षकैः त्रिदशा-
 स्थानकैरिव स्फुरितधिषणैः, यथाभिहितभाषणैः, तृष्ण
 याऽकृष्णैः क्रोधानवधूतैः, दूतैः,,

प्रवीरेति, एतेन यमापेक्षयाव्यतिरेकः । जिष्णुः जयनशील इन्द्रश्च,
 एतेनेन्द्रापेक्षयाव्यतिरेकः । अक्रूरेति, एतेनाक्रूपापेक्षया व्यतिरेकः ।
 चन्द्रकान्तः इन्दुसुन्दरः चन्द्रकान्तशिलाच, एतेनोक्तशिलापेक्षयाव्यति-
 रेकः । सूतः दयालुः शूराद्वा उपायेति, सामदानादीत्यर्थः । कृतकक्षणः
 गुणैः प्रतीकः । पेशलः चारुः । पर्यायः क्रमः । प्रतीकः अङ्गम् । सारं न्याय्यं

7

8

9

10

11

12

वेषैः, प्रस्तरनखखुरोत्खातखर्वीकृतोर्वीधरशेषनिश्शेष
समुत्फुलफणैः, विस्मापितानिमेषलेखगणैः, समर-
प्रकरचतुरै स्तुरङ्गैः, अवितथाचट्टलचाट्टसंलापपट्टता
मुपगतैः, प्रभावभव्यभाव भाजनैः, लोभानभिभूत-
हृदयैः, गहनगरुगणितविज्ञानगेहैः भाण्डागारिकैः,
प्रभोर्भालनिभालकै रप्यलालाटिकैः, भक्ति-
वारिभरितैः, भृत्यैः, रभिराजितः । गिरिराजनन्दिनी
पदारविन्दमकरन्दमिलिन्दमानसः, विस्रम्भभृमिः
सार्वभौमस्य, घनसमयो जनवनसमवनस्य, पुरो-
गतः कारुणिकानाम्, अवलम्बश्शूरतालतानाम्
आधारदण्डः सुकृतवैजयन्तिकानाम्, प्रालेयशिलो-
च्चयोऽनेकविवेकमहाभेषजानाम्, कुलङ्कषनदोदीनता-
द्रुषाणाम्, सन्तानपादपोऽर्थिसन्तानानाम्, तपस्सि-
द्धिभारतीयानाम्, लक्ष्मीश्वरसिंहोवभूव ॥ योयुररिति
कथकैः, उदयनइतिनास्तिकैः, प्रभाकरइतिदोषोत्करैः,
दवइतिवृजिनिवंशैः, नासत्यमूर्तिरितियौवतैः कल्पा-
न्तइतिसपात्रैः, रामइति प्रजापुञ्जैः, विन्तामणिरिति
मार्गणैः, रगृह्यत ।

सार्धैर्दारैः, इणिग्भिः, मधनं मुदं मरुदं धनं । सुरगः कुरुः विष्टं-
च । वैवस्वतो यमः । इतिगः आयतः । अश्वसवाधरैः दग्धद्वारदारैः ।
भारतः कपोलः अश्वकवः इत्योपरिरित्यने ररह । अयन्तु अन्तिर्बन्

(१९८)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

परिगतं धाराभिधानोगतिविशेषः । अर्वः कुत्सितः, अर्वन् अश्वः, अव-
स्यायशार्बरैः अभिमानतमोभिः । हेषाशब्दभेदः । विस्मापितेत्यनिमेष-
त्वोपपादकम् । भावोभक्तिः, गहनं कठिनम् । निभाळकैः द्रष्टृभिः, अका-
ळाटिकैः प्रभोर्भाळादक्षिभिः अकार्याक्षमैश्च । जनवनं जनानां समूहएववनं
विपिनम् । सन्तानतरुः कल्पवृक्षः । गुरुः वाचस्पतिः, उदयनः उदय-
नाचार्यः, दोषोत्कर्षैः दोषाणां मुत्करस्समुदायएव दोषाणां रात्रीणामुत्क-
रस्तैः । दवोवनाग्निः, वृजिनिवंशैः वृजिनिनां पापिनांवंशः कुलमेव वंशो
वेणुस्तैः । कल्पान्तः प्रलयः, उल्लेखालङ्कारः ॥

यो गौखेणवर्णेनचकाञ्चनाचलमप्यधश्चकार । यशशा-
त्रवायशोऽन्धमसप्रबन्धविध्वंसितधर्मानुसन्धानजगति
जगतीमातन्यमानोऽप्यस्तुयतएव धार्मिकैः । यः
सकलकाश्यपीश कमनीयकीर्तिकन्यकयासाकं क्रिय-
माणेपरिणयेपिप्रायनिजस्थापितप्रोज्ज्वलत्प्रतापपावकं
परिपान्थिना यशोलाजैः । विनाशितवैरिजीवनो
ऽपियः पृथतमपि निरमितुं नापास्यदेतदीयनारीनयन
नलिननिस्सरन्नीगनिर्झरान् । यंच नगरमयमानमीष
दपि निशमयन्त्येव काचिद्रिलोकयितुकामानिष्का-
श्यन्ती निकेतनात्कृतकलं विकलितमपि कनक-
काञ्चीगुणं नाकलयत् । इतराच व्रजनजवघुटितामपि
मौक्तिकावलीनालोचयत् । अपगच केशपाशनिपतित
प्रमृत्तपटलैः पृथिवीमपूजयत् । अन्या च विनिवृत्ता-

वरणवसनवहोजगिरीशमाक्षात्करोणतरुणाननतिशय-
मनायानमानन्दमविन्दयत् । पराचाधिप्रसाधनविधि-
विधीयमानार्धविशेषकेव पथिपश्यतां प्रतिपादयन्ती
प्रत्यश्चकौतूहलानि तिलकानवसितिर्तिनाचिन्तयत् ।
किंवदुना, काचिद्गाढमालिङ्ग्यपरिचुम्ब्यमानाधर-
किसलया सहेसा निरस्यैव स्वामिदृढबाहुयुगनिगड-
निविडवन्धनं केलिकेतनान्निरगात् । यमोजसाऽ-
धिकमवधायातिगाढग्लानिग्लपन्नगोचरीकृतोवाङ्वा-
मिरन्तकामनाश्रितोदन्वदन्तस्सुधावाधितचेताअपि-
नितान्तत्रपाभिर्निष्क्रमितुमनीहमानो जीवनकाल-
जालं यापयत्यद्यापि । निमीलितेऽपिनयनकमलेक-
मलोल्लासकारकं यमालोकयन् लोकाः । येनरुषा
विषयीकृतानां द्विषतां नावनीवनीचप्रत्यपादयतां
लेशमपि विश्रमस्य । येनसकृदपि सम्भाषिता स्सुकृ-
तसारसन्दोहशालिनंरवमसंशयंभाषयन्तिसकलाः ।

स्नात्रवेत्यादि, व्याजस्तुतिः, गतिम् अग्निहोत्रादिक्रियाम् । पिप्राय
प्रीणातिस्म । जीवनीपीति, विनाशितं-वैरिणो, जीवनमेवजीवनंजलंयेन-
सइत्यर्थः । गिरीशः गिरिराज इतिशब्द, अनायास भित्तयेन मोक्षानन्ददापे-
क्षया व्यतिरेकोबोध्यते । अनवसितिम् असमाप्तिम्, अन्तकामना मरणेच्छा,
बाधितचेताइति मरणाभावादित्याशयः । आलोकयन्निति, कमले निमी-
लिते कमलोल्लासकारकस्यरवेरदर्शनाद्गिरीशभासेन सकललोकहृदयव-

(२००)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

तिस्त्वं व्यज्यते । प्रत्यपादयतामिति, तथाच विरुद्धावपितदनुवर्तनार्थमेक-
कार्यं कुरुत इति ध्वन्यते । साधयन्ति, अनुमिन्वन्ति नचासंशयपदं नि-
ष्फलं, रत्नकोशकारेणानुमितेरपिसंशयत्वस्याभ्युपेतत्वादिति सत्प्रतिपक्ष-
दीधितौ स्पष्टम् ॥

यस्मै सकलान्तरीपवर्तिनाममानसम्मानभारभागिने-
स्पृहयन्त्यशेषभूमीभुजः । यस्मादधिकद्वयकलससप्त-
तिकलाकुशलताकलितकीर्तेः कुत्सा निकारं कल्प-
ञ्छुचोलाञ्छनञ्छलेन श्यामलिमानंदधानश्शशधरः
प्रसाधयत्यधुनापि षोडशकलोहरिपदंकरामृतैः ।
लक्ष्मीश्वरं वीक्षितुमिवविच्छातेन कासारकैतवात्प्रका-
शतेसरस्वतासोरसालयेवहृदयस्थितपुरुषोत्तमा, दृश्य-
रत्नभृता, मदोत्कटकटघटितकरटिघटाभिहटिता, कनक-
कान्तिकनिता, दर्शितदुर्गतोदारदरभंगा, दरभंगा-
भिधाना यस्य प्रधानगजधानी । यस्य न वासवस्येव
दुस्सहपरतपस्यानि शीलानि, नवा गाण्डीविमण्डल-
स्येवच्छललांछितानि चरितानि । यस्य कीर्तिरेव सकल
कालमालोककारिका, आचाररक्षणं क्षणदासु प्रदीप-
न्यासः, विद्याव्रततिकुसुमामोद एव घ्राणसन्तर्पणः,
सुषमैकफलानि वकुलकमलकेसरकुलानि, एक विक्रम
एव परमस्सहायः, राजश्रीविचेष्टितमनुवरप्रपञ्चः,
तारिणीगुणगानग्रहणमेवश्रवणालङ्कारः, भारभूते

विविधमणिकिर्मीरिते कुण्डले, निपतिताः कामिनीनां
मेचकच्छटाः कटाक्षाएव विकचकृशलयवलयविरचिता
मालिका गुणवदनुरागितानुमापनं मरकतमणिमाल्य-
परिधानम् । सदुपभोगेलिमापरिमितरत्नरमणीयता-
मवसाययस्मिन्नसोढशोकस्यदक्षोभतस्सापस्मारइवे—
दोनीमपि विजृम्भतेऽभोनिधिः । यत्रच धरित्रीशा-
सनाधायके राजविरोधिताध्वान्तेषु, सद्वृत्तमुक्तता
हारेषु, भोगिविद्वेषः शिखावलेषु, न लोकेषु । उत्तर-
लतावादेषु, कुटिलता तरुणीविलोकनेषु, भक्तिभङ्गो
विलासिनीकपोलेषु, नस्वान्तेषु । सीमाविवादः शास्त्री
यकल्पनेषु नक्षेत्रेषु । शब्दानुशासनेऽपवादः, मा-ध्य
मिकदर्शनेऽन्यवादः, न्याये प्रतिज्ञाहानिः, समासेविग्रह
विचारः, किञ्चावसरिकवृष्टिसृष्टिकारितावारिधरेषु,
सामयिकविपुलशालिशालिता क्दारेषु, सम्भृतप्रसव
ता पादपेषु पूर्णकामता प्रजास्वासन् ॥ क्षितिभृत्पक्ष
विच्छेदनाय पावेयपरमाणुभिरिवोदपादयद्यदीयदृढ-
विग्रहं वेधाः । यदवलोकनकालविगलितवीटिकानीवि
बन्धना युवतयोऽभूवन् । विराय माधवंसाधयन्नपि ना
द्यत्वेऽपि दधातिसहस्रदीधितिर्यदीयप्रतापतुलनाम् ॥❀॥

अन्तरीपं द्वीपः । निकारं परिभवम् । हरिपदमाकाशं विष्णोश्चरण-
ञ्च । करामृतैः करजलैः किरणरूपैरमृतैश्च । विच्छातेनायातेन हृदयं
३६

(२००)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

तित्वं व्यज्यते । प्रत्यपादयतामिति, तथाच विरुद्धावपितदनुवर्तनार्थमेक-
कार्यं कुरुत इति ध्वन्यते । साधयन्ति, अनुमिन्वन्ति नचासंशयपदं नि-
ष्फलं, रत्नकोशकारेणानुमितेरपिसंशयत्वस्याभ्युपेतत्वादिति मत्प्रतिपक्ष-
दीधितौ स्पष्टम् ॥

यस्मै सकलान्तरीपवर्तिनाममानसम्मानभारभागिने-
स्पृहयन्त्यशेषभूमीभुजः । यस्मादधिकद्वयकलसस-
तिकलाकुशलताकलितकीर्तिः कृत्सा निकारं कलय-
ञ्छुचोलाञ्छनञ्छलेन श्यामलिमानंदधानश्शशधरः
प्रसाधयत्यधुनापि षोडशकलोहरिपदंकरामृतैः ।
लक्ष्मीश्वरं वीक्षितुमिवविच्छातेन कासारकैतवात्प्रका-
शतेसरस्वतासोरसालयेवहृदयस्थितपुरुषोत्तमा, दृश्य-
रत्नभृता, मदोत्कटकटघटितकरटिघटाभिहृदिता, कनक-
कान्तिकनिता, दर्शितदुर्गतोदारदरभंगा, दरभंगा-
भिधाना यस्य प्रधानगजधानी । यस्य न वासवस्येव
दुस्सहपरतपस्थानि शीलानि, नवा गाण्डीविमण्डल-
स्येवच्छललांछितानि चरितानि । यस्य कीर्तिरेव सकल
कालमालोककारिका, आचाररक्षणं क्षणदासु प्रदीप-
न्यासः, विद्याव्रततिकुसुमामोद एव प्राणसन्तर्पणः,
सुषमैकफलानि वकुलकमलकेसरकुलानि, एक विक्रम
एव परमस्सहायः, राजश्रीविचेष्टितमनुवरप्रपञ्चः,
तारिणीगुणगानग्रहणमेवश्रवणालङ्कारः, भारभूते

विविधगणिकिर्मीरिते कुण्डले, निपतिताः कामिनीनां
मेचलच्छटाः कटाक्षाएव विकचकुञ्जलयवलयविरचिता
मालिका गुणवदनुशगितानुमापनं मरकतमणिमाल्य-
परिधानम् । सद्गुणभोगेलिमापरिमितरत्नरमणीयता-
मवसाययस्मिन्नसोढशोकस्यदक्षोभतस्सापस्माद्वे-
दोनीमपि विजृम्भतेऽभोनिधिः । यत्रच धरित्रीशा-
सनाधायके राजविरोधिताध्वान्तेषु, सद्गुणमुक्तता
हारेषु, भोगिविद्वेषः शिखावलेषु, न लोकेषु । उत्तर-
लतावादेषु, कुटिलता तरुणीविलोकरुनेषु, भक्तिभङ्गो
विलासिनीकपोलेषु, नस्वान्तेषु । सीमाविवादःशास्त्री
यकल्पनेषु नक्षेत्रेषु । शब्दानुशासनेऽपवादः, मा-ध्य
मिकदर्शनेऽन्यवादः, न्याये प्रतिज्ञाहानिः, समासेविग्रह
विचारः, किञ्चावसरिकवृष्टिसृष्टिकारितावारिधरेषु,
सामयिकविपुलशालिशालिता क्तेदारेषु, सम्भृतप्रसव
ता पादपेषु पूर्णकामता प्रजास्वासन् ॥ क्षितिभृतपक्ष
विच्छेदनाय पावेयपरमाणुभिरिवोदपादयद्यदीयदृढ-
विग्रहं वेधाः । यदवलोकनकालविगलितवीटिकानीवि
वन्धना युवतयोऽभूवन् । चिराय माधवंसाधयन्नपि ना
द्यत्वेऽपि दधातिसहस्रदीधितिर्यदीयप्रतापतुलनाम् ॥❀॥

अन्तरीपं द्वीपः । निकारं परिभवम् । हरिपदमाकाशं विष्णोश्चरण-
ञ्च । करामृतैः करजलैः किरणरूपैरमृतैश्च । विच्छातेनायातेन हृदयं
२६

मध्यदेशोपनश्व । पुरुषोत्तमः पुरुषेषु उत्तमः हरिश्च । कनिता नीति
 दरभङ्गोपीतिनाशः । गुणवत् माल्यं गुणीच । स्यदोषेणः । राजा च
 भूपश्च । सद्बृत्तमुक्तता समीचीनवर्तुक्रमौक्तिकता समीचीनाचार्य
 ताच । भोग्या सर्पः भोक्ताच । शिलावलो मयूरः । उत्तरकता
 परम्परा चाञ्चल्यश्च । भक्तिः रचनाविशेषो देवादिविषयिणी इति
 शून्यवादः विषयविषयिणोरसत्त्ववादः अर्थशून्यमभिधानं च । नति
 हानिः प्रथमं निग्रहस्थानं, प्रतिघुनेर्हानिश्च । विग्रहः समाः निति
 वाक्यविशेषः रणश्च' क्षितिभृत् राजा पर्वतश्च, पक्षः सहृद् गण
 पावेयपरमाणुभिः वज्रारम्भकपरमाणुभिः, वीटिका कञ्चुकी,
 नारायणं वैशाखमासं च ॥ * ॥

यस्यानुजो हरइव परमदनाशनः, केशव इव क्र-
 मोपचितकीर्तिकायः, आर्गवइव सदासाधितशङ्करचर-
 ण ।ङ्कजः, दासरथिरिव विदेहजानन्दनः, धर्मइवकृष्णा
 लङ्कृतालयः, सरस्वानिव शिशुमारमनोरमः, सरो-
 जन्मस्तोमइव भ्रमरहितः, उपवनप्रदेशइव तिलका-
 लितप्रियालपनसप्रमोदः प्रलयप्रभञ्जनइव धरणिधर
 प्रकरवम्पकारकः, कासारसारइव सप्रसादानिमिष
 विसरः, ब्रह्मविवदिषइव विजितविषयोपायचतुष्टयो-
 पेतः, ज्योतिषनिबन्धइव विवस्वन्मङ्गलविकाशकः,
 जैमिनिमुनिरिव शक्तित्रयसाधकः, गोविन्दविग्रहइव
 गुणाक्रान्तकुवलयः, संयमितचेताइव संजातानेकसि-
 द्धिः, गगनाभोगइव षड्गुणागारतामुपगतः, हिम-

तमयइव ददृधान्योपकारकः, मत्स्यमण्डपइव सर्वतोभद्र-
 भासितः, चन्दनाचलइव चक्रिचित्तचौरः, वैदेहप्रदेश
 इव सफलसदनः, अन्तर्मातृकान्यासइव सन्मूलमणि-
 पूगधिष्ठानानाहतविशुद्धाज्ञा चक्रचञ्चितः, हरि-
 हृदयरथलइव वहलसस्मेरकाश्मीरजन्गासेवितः, नन्द-
 ननन्दितोऽप्यपारिजातः, विवर्धितवाणविम्रहोऽपि
 विश्वकंठुः, धनदोऽपि सुन्दरकलेवरः, स्थिरास्थितोऽ-
 पि सुधर्माधिपः, गुणाकृष्टभुवनोऽपि पद्माकरः,
 मन्दारातिरप्यविरोचनः, अस्तमितसमस्तेतिहासोऽपि
 सम्मानितसकलेतिहासः, निस्मपत्नोऽप्यधिकारिताम-
 वासोऽभ्युदयकृत्येषु, चरणानाहतद्विजमण्डलोऽपिप्र-
 थमकीर्तनीयस्सुकृतिनां कलापेषु, काञ्चीपरिवीक्षणा
 क्षिप्तवामाक्षीकोऽप्यक्षो णिरेवाक्षिणाम्, घनधूमधाराध्व
 स्तातपोऽपि सुरभिः, कृष्णपक्षप्रियोऽपि कलाकरः,
 शूरोऽपि शुचिरुचिः अवलोदितोऽपिविबुधः, गुरुरपि रुविः,
 कालीदासोऽपिगुणाढ्यः, शातवाहनोऽपिगोवर्धनः,
 वर्धमानोऽपि पार्थसारथिः, सिंहसंहननः, सहनः,
 धन्यः, राजन्य मान्यः, वर्णि वर्ण्यः, धरणिपाग्रगण्यः,
 सत्क्रियासुलीनः, विश्वजनीनः, सुकलः शुक्लकलः,
 कूकुदः, कलितककुदः, सफल प्रस्तावकः, अनन्त-
 संस्तावकः, परिगोपितान्धमूकः, दशाध्वरदहन-

दग्धादप्रदेशितद्रुदाकदलदोषशूकः, स्थूलन्नक्षयः
सुक्ष्मेक्षणः, चोभितविपक्षः, विक्रमविलसाकृतश्विनि-
पलक्षः स्वक्षाश्रितः बलक्षाशयः, अममसमज्ञः व्यङ्ग्य
विशेषज्ञः, कृतज्ञः, प्रथमपोतलपिनप्रवृत्तिप्रोतसंज्ञः,

परोऽन्यो रिपुश्च, मशोगर्वोर्ध्वश्च, अन्यत्रमदनेतिच्छेदः । विदेहजो
मैथिलः, विदेहजा सीतान । कृष्णः नामुदेवः कृष्णा द्रौपदीन ! शिशुमारः
स्मरोपमोवान्नः, जलजन्तुविशेषश्च । भ्रमोऽन्यत्रभ्रमर इति । हितस्तत्कार
कः अतएवपुंस्त्वम् । प्रियाळपनं परत्र प्रियाळपनमौ योज्यौ । अनिमिषोदेशो
मीनश्च । विषयोदेशः रूपादिश्च, उपासस्तेना शमादिमम्यत्तिश्च । विव-
स्वान् पण्डितः सूर्यश्च । शक्तित्रयं काल्यादि बाधेयशक्त्यादि च । कुत्रच्येति
पृथ्वी मण्डलं नीलकमलं च । सिद्धिः प्रभुमत्रोत्साहाख्या मनोजवित्वादिश्च ।
गगनाभोगोविस्तृतं गगनम् । षड्गुणाः सन्ध्यादि संख्यादि च । चक्रीहरि-
स्तर्पस्तार्चार्धौमश्च । नवनं यागः परत्रफलसानां द्रुमविशेषाणांवनमिति ।
आधष्ठानेतिच्छेदः चक्रं समूहः, मूलेत्यादि आज्ञास्तानि कमलदलानि
शरीरान्तःस्थितानि तत्तन्नामधेयानि चक्राणि । काश्मीरजन्मेति काश्मीर
जातः कुङ्कुमं च । नन्दनेति इद्रोद्यानं हर्षकारितनयश्च । अपेति परिहारे
च्छेदः । विश्वकेतुः प्रद्युम्नः, जगत्पताकः जगत्पताका च । स्थिरापृथ्वी
स्थिरोमुक्तिः जीवन्मुक्तिरितियावत् । भुवनं जलं जगच्च । मन्दश्शनिर्भाग्य
रहितश्च विरोचनः सूर्यः कान्तिशून्यश्च । ईतैर्हासः इतिहासश्च क्रमेण
बोध्यः । अधिकेतिभङ्गः । द्विजोविप्रश्चन्द्रश्च । काञ्ची रसना तदभिषा
नगरी च । आसिप्ता गृहीता दृष्टा च, वामाक्षी वामकोचना देवी च । अक्षि
पापम्, सुरभिः वसन्तः मनोज्ञश्च । कृष्णपक्षः श्यामकदलं नामुदेवभक्तश्च

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀ (२०५)

शूरस्त्रयो वीरश्च शुचिरुचिरिन्दुः, शुचीतिशुक्ल पवित्रयो, रुचीति
कान्तिलिप्तयोर्वैभवं च । अचलोदितः कुजःस्फिरवृद्धिमांश्च । शातेति
भङ्गः सुखार्थकः, वर्धमानः तदभिधानः दार्शनिक पण्डितः वृद्धिप्राप्तु-
षानश्च, पार्थ सारथिः तन्नामा मीमांसकेशः प्रकृते समर्थसारथिकः ।
सुकलोदाता भोक्ता च, ककुदं माधान्यं राजकाञ्चनं च, अनन्तोहरि-
परिमितश्च ।

नगनायकतनयाचरणमरालमिलितमानसः, देश-
कदम्बकप्रविदितोदारतोद्विक्त दानोदकनदी दूरीकृत-
दृढदीर्घ दैन्यद्रुमः, द्रविणप्रादेशनामोदित द्विजन्म-
दम्पति समुदय हृदयदिश्यमानसमुदयः, सत्तमाशना-
सनकौशेयांशुक मुकुटमसृणमांसलमरकतकमल-
रागमणिमौक्तिकप्रवालहारकार्त्तस्वश्वेतालङ्कारप्रकार
परिश्रुजितकुमारिकानिकरः, अवलम्बो ब्रह्मवर्चसानाम्,
निधानं सुजनतासुधानाम्, बीजं सुकृतशाखिनाम्,
निदाघवासरो वैरिजीवनानाम्, उच्छ्वसितं भारतो-
त्साहानाम्, कुलरिपुः पापण्डानाम्, अग्रणीरन्त-
र्वाणिकानाम्, पुण्यपरिणतिः, प्राणिपटलानाम्, खण्ड
बलाकुलाकूपारकौस्तुभमणिः, अभिघातिगहनाशु
शुश्रूणिः क्षोणीपतिः श्रीमान् रमेश्वर सिंहः ।

मानसं मनस्सरोविशेषश्च । जीवनंप्राणनंजकं च । अन्तर्वाणिकः शास्त्रवित्

यो नवयौवनावतारे पुण्यपदावलोकनकुतूहला-
 कूलितहृदयो भूयो भुविभ्रमणेन सैकतक्षोदरुचिरदक्षो-
 दधिरोधः प्रसाधिकामारभ्य कुमोरिकामाप्रालेयालय
 गिलोचयमाचनीलाचलाञ्चण्डिकाचरणचंचिताद्यावद्
 द्वारकां विद्यमानेन पवित्रयांत्रकार कलेवरं तीर्थ
 जातेन । गमनगोचरीकृतार्णवाभ्यर्णगोकर्ण स्तीर्ण-
 सागरो गोत्राप्यपि जगतीसागराद्बुदतारयत् । यो
 दिवसनिशेविभज्यकृत्यव्रजाय सायामयामास्वपि त्रि-
 यामासु घटिका त्रितयमेवानुकम्पते स्वापेन । यः
 पण्पिन्थिपशभृति भीत्येवचोर्गीनकाग गजलक्ष्मीम् ।
 यः स्तोत्रतोऽपि पुण्यप्रतीपपतितान् प्रेयसोऽपि
 नियमयति । यो वसुधासुशामन विशारदताप्रसा-
 दिता दमदृशमन्तोषमाजमग्राजम्मकाशान्महागजा
 विगजपदवीं प्रथमापन्यपगम्पगप्रापिकासुपाजितम् ।
 यो द्वेपायनदेशनादर्शितमन्विधानेगेषाम्नागमकृत्-
 यावताविदग्ग माश्लिष्यन्त्यां पुण्यनारकायां कामिना-
 न्निदः सुप्रशामभिनवागेन पुण्यन् मनिशेषमागभय-
 नि कृत्यकृतमुत्पान् सतीतिगः । यथादिदृशयोऽश-
 मत्र दिदृशयेनेन्द्रियेन्द्रेण विदितप्रयत्ननमनाशन-
 म्बन्धिनदान्निजोद्धेयने मदाभागतयामवत्तथां
 १०८८ यच्च विदितचेतसां विशदता चपञ्च-

वाचकतोचितमभिमानं विपश्चितां निचयस्य । यो
होमस्तोमकोटिपटितकोटिप्रमित स्वतन्त्र मन्त्रणा
नियन्त्रणादितसावित्रीमन्त्रहोमापरिमितश्यामामनुज
पनविगलितकलिमलामतिमेध्यतयाऽऽमोदिनीं मि-
थिलामेदिनीं मतनोत् ।

विबुधधुनीस्रोतः प्रतिरोधकमधरीकृतधराधरं नीहार-
महीध्रसविधवर्तिनं हादिनीदृढैर्दृषद्भिगवद्धं जगदनु-
द्धारहेतुं सेतुभेदंविच्छेदयन्नापादितप्रसन्नतालताप्र-
तानविततातिविनताशेषजनताकृतार्पणं कर्मधर्मरत्ना-
करोपाधिमधिदधानोविस्मृतिपथपथिकं यः प्रथित
कथमगीरथमकरोत् । यस्सहपूर्वाविर्भवान्ववायैः प्रो-
दञ्चत्प्राच्याचलपदे प्रतिष्ठापयांश्चभुव शोभनं भवनं
भुवनेशीपदान्भोरुहेणाम् । योऽपचितपुण्यपादपेषु
पदेषु पीडां साधारणतरेणाऽपि नरेणसोढुमशङ्कामोष
दप्यविगणप्य सत्स्वप्यनवार्यराजकीयकार्यवर्येषु मा-
ध्वीकाधिकमाधुरिका दधूतवाग्निमधौरय व्यलीक
विख्यातव्याख्यानतः किल्विषाभिनद्धबुद्धिसामान्य-
समुद्धारवद्धप्रतिज्ञोविशुद्धतमामाधायभ्रच्छालुनामद्ध-
र्मवर्धनेन समस्ताराद्धचरणसरोरुहो विजयते जनपदेषु
सकलेषु । मिथिलांमगधाङ्गकामरूपपाञ्चालादिदेश
संहतौ निष्पादिते सकललोकलोचनालाने निलयनि-

करे प्रतिष्ठापितदेवतोऽपि यस्ततो लेशतोऽपि तोषं
मनागप्यलभमानस्साधयतिसाधुसौधं सुधाशिनां
शिल्पिसारैः । जीर्णोद्धरणकामनया च मृगयते पुरातनं
केतनं तेषाम् ।

नियमयति दृश्यति । द्वैपायनदेशना मीनपुराणम्, दलेनेत्यत्रोप-
लक्षणेवृत्तीया । कोटिरग्रम्, कोटिः संख्या । प्राच्याचेलपदं नीलाचलः
पुरातनाव्ययपदं मोक्षइतियावत् । साधयति निर्मापयति, सुधाशिनां देवा-
नाम्, सारैः श्रेष्ठैः ।

विलुप्यमानातिसन्नातनसुकृतवनावनाय प्रयतमाना
भारतधर्ममहामण्डलाभिधाना महासमिति र्यमेव प-
तितयाऽवृणोत्सत्यपि सुवेशविशदवसुराशिराजितेऽ
पि राजके । यमतिशयेन शाम्भवनगरदृश्य विश्व
विद्यालयारम्भमूलस्तम्भभूतं सम्भावयन्ति विश्ववा-
सिनः । मन्त्रन्यासधीता नोपसर्पितुं प्रभवन्ति यं
परभुजङ्गमाः । यमेवचोपजीवति परिणये शास्त्रविषये
च भवन्ती जातिमीमांसा । यमालोक्यास्तोकसतोक
स्थविरलोकोदीरितैः जयजय महाराजाधिराजेत्यालो
कारावकोलाहलैरनवकाशतामासादयत्याकाशम् ।
वासरावसाने विहरणायवहिरारहितमाकर्णयन्तएवपरि
हृतस्वकृत्या शृङ्गाटकं यमभिवीक्षितुमितस्ततोनिक्षिप्त
चक्षुषो मिलन्तिजनास्तत्र तत्र नगरेषु । चातकवदा

चरितानिच प्राणादवलम्बी विभूषयन्तीनां भवन्ति
वदनानिकामिनीनाम्, कुवलयमयानिचायनान्तिक-
निलयवातायनानि लसन्तिमुन्दरीनयनैः । येन
प्रकृतिभावं प्रापिताअपि नैवसन्निविधुगः । येन स-
मुदायशातितशरीराअपि शात्रवमसुदायाश्चरमण्डल
भेदिनो बभूवुः । येन सप्तधाऽधुनावधिश्राद्धमधि
गयमाविधाय पितृननीयतातुलातृप्तिः, येन भूयसा
निशासु साक्षात्क्रियन्ते परमप्रीतिपद्मतौ समासीना-
आशीराशिविश्राणनपरायणाअङ्गणागताः पितृ-
गणास्वप्नेषु । येनानेकत्रकल्पितश्चिकित्सालयोवि-
द्यालयोब्रह्मचर्याश्रमश्च मानवानुपकरोति नितराम् ।
यस्मैयुणश्रवणसाक्षात्करण प्रवणान्तः करणेन विती-
र्णा सार्वभौमेन जी. सी. आइ. ई. के. वो. ई. इतीय-
मूर्वीपति दुरासदार्थगुर्वी बहुमानं प्रमापयन्ती पदवी
प्रमोदतेऽतितराम् । प्रणीतश्रोत्रियपरिणयसिद्धा-
न्तरीति सन्निवन्धाय यस्मै व्याहृतानि श्रोत्रियसन्त
तीनां वितरन्ति शततं सततम् । यतः कथा प्रसङ्ग-
सङ्गतममङ्गलाभिषङ्गकरं पुराणरुदस्वकोदन्तमाक-
र्ष्य कौतुकादेव पौराणिक धुरीणतामुपगतास्तत्सवे
शासिनः । क्रतुशतविद्वापितस्वापते यस्य यस्यद्रविण-
हीनतां व्रजन्ति प्रत्यर्थिनः । यस्य शासनेनसमन्ततः

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀ (२११)

त कुम्भानिकुरम्बावृत नडागतलजाध्वर कुण्डप्रकाण्ड-
मण्डलीप्लव्यमाणेन्धनोद्वल्लव्यचामलल्लविधारिधूम-
धाराध्वान्तसंजातधवलधामयशस्त्रुधानिधि रत्नारतं
समुद्भासयतिभुवनोदराणि । यत्समरसमज्ञां सपत्ना
अपिनापह्नुवते किं पुनस्तुहदः ॥

मन्त्रो विचारो मनुष्य । बालोक्ताभावो जयशब्दः । आरहित मागत-
म् । प्रकृतिभावः मन्त्रिवत्त्वं व्याकरणे न सिद्धः मन्त्रिविरोधी । समुदायो
युद्धम्, शूरमण्डलं वीरसमूहः सूर्यमण्डलं च युद्धेभूतस्य सूर्यमण्डलपथेन
गमनं भवतीत्याशयः । अभिषङ्गः पराभवः । द्रविणेति धनपराक्रमयो-
वोधकम् महगलरदन्तु ग्रहभेदकल्याणयोः । क्षमापृथ्वी तितित्ताच । जल-
जा बलजाताजलाज्जाताच । व्यभिचारिभावोऽपराङ्मनागमित्वं निर्देहाद-
यश्च । क्लोति नापकोरकयोर्वाचकम् । पारुष्यतः शुद्धायां विप्रतजयताञ्छ-
ताच । नीवीमूलधनमपि । नागपदेति गजचरगः सुरतामनविशेषश्च ।
संक्रन्दनेति रोदनकरोबामवश्च । ज्ञाष्टेति दारुदिशाच आम्नायमिति,
अग्नेराण्डिति श्रुतिरित्यर्थः । स्वपः च्युतः स्वप्न अच्युतोयवतः स्वपदा-
च्युतश्च । जलनिधिः अग्निः व्यतिशयेनाहश्च । कुम्भा गहनमावरणम् ॥

सचासौ तया लक्ष्म्या परमोदारगुणपरम्पराभिगन्तितो-
लक्ष्मीश्वरलिङ्गः क्षोणीपरिवृढस्तातानुमतं तामुपयेमेऽनु-
मन् स्वकीयकुलकमादागतां व्यवस्थाम् । ततोऽति-
मेदुरेण प्रणयेन पेव्यमानस्य प्रेयसः प्रेष्ठतां शर्मिष्ठेव
ययातिभूपतेः प्रयातिस्म । अथ सास्मितसुधात्वपित-

मूर्तिरधरकिसलयाश्रिताकृशानुशिखामिव व्याहृतिभि-
 र्श्रुतिमुददीदिपलक्ष्मीश्वरस्य । अभिनवप्रभासलिल-
 प्रवाहमञ्जुला त्रिवलितरङ्गसङ्गता नाभिसमावर्तिता
 लोमावलिशैवला प्रतिभासिताङ्गुष्ठनखवदनानेकचन्द्र-
 चक्रवाला लोचनवैसारिणविचेष्टिता व्याकोशशय-
 कुशेशया तरङ्गिणीव रराज । क्षितिपलक्ष्मीश्वरवक्ष-
 सिस्थिता सरससुमनोरमणीया प्रौढगुणगुम्फिता-
 प्रबोधितमन्मथा तरुणिमतरणि मोदिताशेषप्रतीका
 सुललितसन्निवेशा अभिसुरभितप्रदेशा आनन्दिता-
 लिमण्डला मालिकेवविललास । शुचिरसभरसम्भृता
 त्रिवलिसोपानशोभिता विलसदास्य सारसा प्रियलो-
 चनरोलम्बावलम्बिता हंस हगणितनीतरामणीयका सर-
 गाव ममाम । गुणव्याप्तभुवनाऽपि लक्ष्मीधैरककल्प-
 पादपालम्बिनी प्रियप्रयणपल्लवावलिपूरिताऽपि अप-
 र्णाश्रिता, नववल्लगीवचक्राश । दोषाकरेणादृश्याऽपि
 द्विजगजलोचनप्रमादिनी, श्रुचेरगोचराऽपि श्रुचि-
 द्रयमानशूनदला, ग्मितविषयीकृताधराऽपि 'पतिव्रता',
 समेत्याऽपि देयादृषिता दिदेव । यशसाजगतीषु,
 चेतसाप्रियनिदेशितेषु, भक्त्यामयानीपदाम्भोजेषु

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀ (२१३)

दानेन द्विजातिहृदयेषु, अनुज्ञया परिचारिकासु
एकाप्यनेकधाधृतविभागेव वभ्राज । तस्यास्सुरभि-
मासद्युगं तदा पलमिव पलायतेस्म, प्रणतसतीचिक्कुर
चञ्चरीकसञ्चयरुचिरंचिरं चरणाम्बुजं रुरुषे इति ॥

इति मैथिलश्रोत्रियश्रीवालकृष्णमिश्ररचिते
लक्ष्मीश्वरीचरिते पञ्चमोच्छ्वासः ॥

पेन्यमानस्य सेव्यमानस्य, व्याहृतिभिः वचनैः भूःस्नाहेत्यादिभिश्च ।
शयोदस्तः, सुमनः पुष्पं शोभनं मनश्च । गुणः सौन्दर्यादि दामच,
आल्याः सख्याः अलेख्य मण्डलम् । शुचिरसः शृङ्गाररसः प्रीतिरिति
यावत्, शुक्लजलं च । हंसकः पाद कटकः मराकथ. समास रराज ।
अपर्णाभिता न पर्णाश्रिता पार्वतीमाभिताच दोषाकरेण चन्द्रेण द्विजराज
अनन्दः लक्ष्मीश्वरसिंहश्च, शुचिः सूर्योऽनन्तश्च, अवरोनीचः अवरोष्ठश्च,
समेखला समेमाधौ खला रसनान्विताच । युगं द्वयं कृतयुगादिच ।

इति पञ्चमोच्छ्वासटिप्पणी ।

(२१४)

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

अथ षष्ठोच्छ्वासः ।

साचैषाऽनश्वर शोचिषा यशसा शारदशशिजित्वरी
श्रीलक्ष्मीश्वरी सौवर्णकलसोलसित सौरसरित्सलिलै-
स्तुमासं वसुमतीसुरेण समानायितैः कर्पुष्पूरपेषितपा-
टीरपंकपृक्तैः प्रतिवासरं लेशतोऽपि स्नेहसामान्यम-
स्पृशन्ती स्नाति विधिदेशितैः प्रकारैः । तृणकतुलि-
तां तनुमनुमन्यमाना पूजनजपध्यानदानाद्वैतवेदान्त-
विद्यानिपुणपुण्याचरणवर्णजस्तूर्णपौराणिक श्राव्य-
माणपुराणाकर्णनैः, कचनदिवसे पायसेन पानेन कच-
नचफलमूलाशनेन, कुहच नरजन्या मदभ्रदर्भगर्भायां,
कुहचनच कुरंगचर्मनिर्मितायां शयनेन शय्यायामति-
तिवाहयति दिवानिशम् । नहिवर्ततेव्रतमुपोषणोचि-
तं किमपि, यदनया नसम्भावितं तेन, मध्यमाङ्गुलि-
चरमलेखा मेषा नाममात्रशेषतामापिपतजपनीय
कुशमूलादिमालिकाऽवर्तनैः । यस्यानयने कान्ति-
विलोकने, श्रवणे कथाश्रवणे, वदनं गुणकीर्तने, रस-
नं पदसारसरसस्वादने, मानसमनुचिन्तने, करौ
परिचरणे, चरणौ प्रदक्षिणे, धनमुद्धवसं विधाने,
नारायणस्य परायणान्यासते । या शिविप्रकृतिरिव
सदासदया, सन्ध्येव वन्दनीया, कादम्बिनीव समावि-

स्कृत शतद्वेदा, स्वर्णदीव स्वर्णदायिनी, प्रावृद्धिव
दानोदकार्द्रा, परशुरामसंसिद्धिरिव परस्वधवल प्रमु-
दिता, अदितिरिव (नागनगरीव) अनन्तास्तिका-
ञ्चिता, अशीष्टकम्बलावस्थितिश्च, विष्टपसृष्टिरिव
सत्यकाधिष्ठिता, सौदामिनीवकन्दाश्रया, आयुर्वेद-
विद्येव विज्ञातगिरिजागतगुणा, मधुसूदनशेमुषीव
जीर्णोद्धाग्विधायिका । काननइव शालग्रामश्याम
लेमन्दिरे चिरेणादासमातन्यथाना, मुनिभूमिरिव
सरलब्राह्मणीसेविता, विश्वोपासिताच, समीरसखशि-
खेवोदचिष्मती, कुलशैलसंहतिरिव सुस्थिरस्थितिः,
आन्विक्षिकीवरक्षितानेकजातिः किन्त्वदृष्टदृष्टान्ता,
वैशेषिक (काणाद) शिक्षेव सविशेषगुणा किन्तुद्वेष-
कलुषाभ्या मदूषिता, समीक्ष्येव सत्प्रकृतिमहत्तत्त्ववि-
मर्शिनी सत्कार्यसाधनीच, किन्त्वनभिमाना तमसा-
नासादिताच, योगानुशिष्टिरिव निर्विकल्पनियमवि-
शिष्टा, किन्तु क्लिष्टवृत्तिपटलास्पृष्टा, मीमांसेव स्वतः
प्रामाण्य माश्रिता महामनाश्च, किन्तु श्रुतिसवल
वाक्या आर्थभावनाशून्या स्वप्नेऽपि शवरेणागृहीताच,
वेदान्तवागिव विवर्तमानविश्वा, किन्तु श्रुति माया-
वादरहिता । व्याकृतिरिव वर्णसाधुताव्यापृतप्रक्रिया,
प्रत्याहारसहिताच, किन्तु गुणवृद्धिबाधविधुरा,

साहित्यविद्येव सद्गीत्यनुकूल समासोक्तिसारदीपको-
 दात्त समविशेषगुणसमुच्चया, किन्तु प्रतीपव्याजोक्ति-
 पतत्प्रकर्षतामतपरार्थताभिरघटिता । दण्डकानास्थि-
 ताप्यनस्रुया, स्पृहणीयविवेकपूर्णाऽपि समीकृतनैकव-
 र्णा, वामाऽपिदक्षिणा, विलक्षाऽपि शालीना, कुलीना
 ऽप्यकौलीना, अवसुधाऽपि मङ्गलस्यजननी, कर्णा-
 नन्दकरेणाऽप्यर्जुनचेष्टितेन विश्रुता, गृहीतविग्रहाऽपि
 कलिविगलिता, सुप्रसादितपरिजनाप्य प्रसन्नाश्रिता,
 सर्वमङ्गलाऽपि विभवस्थिता, क्षमोपरिस्थिताप्युद्धृता-
 नन्ता, अयुरुपूजनपराऽपि गुरुपूजनरता, शीतल-
 शीलाप्यशीतका, द्वितीयास्थितिमत्यपि दशमीस्था,
 मरुमेदिनीकामकीलालस्य, ऋदः क्रोधवैश्वानरस्य,
 अधिमासोलोभाध्वरस्य, मध्यवासरो मोहतिमिरस्य वि-
 भावरी दम्भप्रचण्डमार्तण्डोदयस्य, शैलेयशंकलमह-
 ङ्कारानोकहाङ्कुरस्य, गगनमालवालं स्पृहालतायाः,
 विष्टिसमथो मायाप्रयाणस्य, केरलकाश्यपी श्लेष्यावि-
 सुचिकायाः, कृतनिर्यातना, नव्यसना, वृसीसमासी-
 ना, अकुहना, अशौष्कला, नत्यक्तनक्तव्रता, नन्दि-
 तवन्धुता, वाचं यमा, निर्जितेन्द्रियग्रामा, अरुशती,
 सती, अनुपमितमतिमती, विनयवीजक्षोणी पारि-
 काङ्क्षिणी ।

❀ श्रीलक्ष्मीश्रीचरितम् ❀ (२१७)

स्वर्णं कनकं शोभनजलं च । दानेति, दीयमानोदकाद्रानक्षत्रयुक्तेत्य-
 योऽन्यत्रबोधः । परस्वमन्यधनं परम्बधोऽस्त्रविशेषः । कन्दः सस्यमूलंमेघश्च ।
 गिरिजा उमा अन्नं तु गिरिजम् । जीर्णोद्धारो मणेश्टीकाऽपि । सरले-
 त्यादयस्तरुभेदाः । रक्षितास्थापिताऽपि, जातिरसदुत्तमः, मामाग्यं प्रमा-
 नताऽपि, महत् विभु, श्रुतिर्निरपेक्षोरवः श्रुतिलिङ्गादीनां पूर्वपूर्वस्य प्राबल्यं
 मीमांसासिद्धान्तः, आर्यभावनाप्रवृत्तिः धनभावनाच, विवर्तमानं विशेषेण-
 वर्तमानं विवर्तरूपं च, । मत्याहारयोगाङ्गम्, सदिति मकृतेविशेषणानां
 बहुव्रीहिषटितः कर्मधारयः, पात्रानुकूलादयोऽङ्गद्वाराः । विक्रान्तो निर्जङ्ग
 वितीर्ण लक्षाच, कौलीनोऽपवादः । अवसुधा अवनेऽमृतस्वरूपा, प्रसन्ना-
 घ्रा, अगुरुराजार्द्रम् शीतकाऽलसा, दक्षमीस्या सीणरागा, निर्यातनंदा-
 नम्, वृत्तीव्रह्मचर्यासनविशेषः । कुहना दम्भचर्या शौक्कका आमिषाशिनी,
 रुक्मती अकल्याणीवाक् पारिकाङ्क्षिणी तपस्विनी ।

यस्या विशेषेण लिखितं स्यादतिपतेदाम्नायचतुष्टयं
 महाभारतं च पवित्रचारित्रम् । यदीयसमज्ञाशुभ्रांशु-
 सभुदये विकसन्ति सतां स्वान्तसारसानि, उन्मिष-
 न्ति च पुरातनीनामपि सतीनसन्ततीना मयशस्त
 मांसि समन्ततसान्द्राणि । यस्या यशसासदृशता-
 मप्यनासादय दालोकयन्ती दिगङ्गना निचुलयति
 कुलुकिनी पुराऽतिशयेन विशदयितुं सिन्दूरमेदुरित-
 मपि स्वादर्शमिन्दुमण्डलम् । यामभिकापदाभुजन्म-
 नोः पूजनेमनुमनुजपन्ती, निपवनप्रदीपमप्यतितरां

त्रपातोयनिधौ निपातयन्ती मपघनैर्घनध्यानास्पन्द-
 मानप्रमोदवाष्पासारवर्षिनयनकमलां, कलकलकला-
 पेनाप्यनपनेयसमाधिप्रधिगच्छतां योगिनामपि
 मन्दाक्षमार्च्छन्ति चक्षूंषि । यस्या रसौमनसस्रवन्ती-
 वीचिविसरशुचौ यशसि शरीरशेमुषी, न विनाशिनि
 मांससन्निवेशे । या पयांसीव पश्यति स्वापतेयानि
 प्रादेशनेषु, यदा पन्नकाञ्चनोऽकिञ्चनोऽपिकाञ्चन-
 शोभां विवृण्वन् यदीययशोभरं विभरां वभूव । या प्रति
 वोसरमाशयति सहस्राणिभूसुराणाम् । या मङ्गनया
 समं समुद्गायन्ति गृहेगृहे सानुरागमग्रजन्मानः ।
 यया स्वकीयकीर्तिकदम्बकेन साकमजर्याणि प्रतिष्ठा-
 मनायिषत सद्भानि देवतानाम् । या पदारविन्ददा-
 नादनुकम्पितयादोलिकया देवदर्शनायगच्छन्तीदिष्टु
 भिक्षुकांनदापयतद्रव्याणि दयाभिः । सेय मवगाहते
 स्म त्रिजगतीवन्दितेनाऽपि त्रिपुरारातिना शिरसा-
 विधृतां, प्रतीततीव्रतरतपः प्रीततया भगीरथरथानु-
 यातां, तर्पणवितीर्णासिततिलततिलसितशीततोयां,
 सुकृतिकलापकल्पितकुटीरकूलां, मज्जनंकलयन्तीनां
 (कुर्वतीनां) कामिनीनां कुचकलसकुङ्कुमेन, लो-
 चनकमलकज्जलेन हृदयहासिहरिचन्दनद्रवेण वदन-
 विधुविशेषकेणच शवलीकृतविमलवारिकां, दुर्गति-

गिरिदारिकां, कलुषायकुप्यन्तीमिव कम्पमानकमल-
 कलेवरां, यमभटान् हसन्तीमिव हिण्डीर कपटेन,
 शिशिरादिवकृशतामुपाश्रितां, प्रियसागरेणसङ्गतिं
 शीलयितुमिवानुरागेण गृहीतवेगां, क्षितिपतिकरद्वयी-
 मिव प्रदर्शितपृथुरोमरूपां, साधुसास्वतीमिव विश-
 दाशयां, बृहदारण्यक श्रुतिमिव उपनिषद्ग्रां, नरनाथ-
 नारीमिवनदीनां, त्रिपथगामपि अनन्तपदप्रापिकां
 निम्नगामपि समुन्नयित्रीं, भ्रमाकुलामपि भ्रमभञ्जिनीं,
 भुवनोद्धारिकामप्यङ्गीकृतभुवनविग्रहाम्, अनङ्गा-
 रातिसङ्गतामप्यनङ्गानां नयन्तीं, पद्धतिमिव निर्वा-
 णविश्राणनस्य, सरणिमिवसुरपुरप्रयाणस्य, मौक्तिक-
 स्रजमिव भारतक्षितेः, प्रोत्तुङ्गरिङ्गत्तरङ्गभङ्गा-
 हितचन्द्रचन्द्रोच्चयमरीचिसहचरचपलवीचिनिचयचन्द-
 नार्चितचारुनीलाचलां, हरिद्वारे हरिपदप्रसूततया
 क्रियमाणकौतुकासङ्गां गङ्गाम् । अहिमकरेऽधिनिष्ठति
 मकरतल्पमनल्पवारं चकारकल्पवासं प्रयागे । यस्मि-
 न् वयस्ययेव मिलतिकलिन्दकन्यकया कवीनां संह-
 तिखिन्तः सारस्वतरसान् वहन्ती भगवती मन्दा-
 किनी, वालवीजवपनेनच प्रसवोभवतिकैवल्यस्य ।
 हेरिचरणसंचरणपवित्रितरजोव्रजेव्रजे च तपनतनूजा
 पुण्यपथः पावितपरिसरे कृतयुगारम्भइव राधाराधिते

(२२०) ❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

सत्याश्रितेव, मेदिनीशसीमन्तिनीविग्रहइव ललितो-
ल्लसितचित्राभरणशोभने, भरतानुशासनइव समु-
ल्लासितरासके, कचिदद्भुततनूजन्मजननिजन्यप्रमो-
दजाताश्रुसम्पातिनयनजलजाभ्यां वसुदेवदेवकीभ्या-
मुपश्लोक्यमानस्य, कचिदासगंसं कंसं विध्वंसितुमव-
तंसकृतवीरवेषस्य, कचित् वृषभानुतनुजया सरोषं
सकटाक्षं वीक्षितस्य, कचित् सान्द्रमालिंगितस्य,
कचित् परिदमितकालियपृदाकुपतिप्रेयसीभिः स्तुति-
विषयीकृतस्य, कचिदवाप्तसंस्तवेनवल्लवकदम्बके-
नाऽपि विद्वितस्तवस्य, केशवस्य, सवनेन, कचित्
राधिके ३ इति सप्रेमोदीरितगिरां निशमनेन, कचित्
कृष्ण २ कृष्णेत्याकर्णनेनाकलयां चकार परां प्रीतिम् ।

कमलं जलम् । उपनिषत् धर्मः वेदान्तश्च, निषद्दरोजम्वालः ।
नर्दीना सरिच्छेष्टा, अदीनाच । भ्रमः आवर्तः भ्रान्तिज्ञानं च । भुवनं
जगत् जलं च, चन्द्रोच्चयः कर्पूरपुञ्जम् । मकरोराशिविशेषः, राधागोपी
वैशाख्यरावः । सत्या, सत्यभाषासत्यम् अवितथम् । क्लृप्ता क्लृप्तं च
चित्रा चित्रं चेतिच्छेदः । रामकइति रामक्रीडोपरूपकविशेषयोर्वोध-
वत् । आसगोग्रामः, गंस्तव पविचयः ।

अनयाऽसकृत् सौरोपरागे सहृदयइव सारस्वतरसा

श्रिते, प्राचीभागइव हरिपादपुताचले, कलेः काले-
 ऽपि धर्मचरणयुगलोद्भासिते, नकुलकृतपराक्रमेऽपि
 बहुवीरनागवलिते, कर्णकृत कायान्तः कवचवितरण-
 प्रसुदितकेशवे निर्वाणक्षणक्षेत्रभृते, कुरुक्षेत्रे, वितनित-
 विधिविहितकृत्ययाऽतितमां सममानिषत द्विजन्मानो
 दानैः । गिरिशप्रेयसीमित्युत्तरगामिभिस्तरङ्गैस्सङ्ग-
 तयागङ्गायाऽऽलिङ्गितां, मुक्तिसितिरिनि सुमुञ्जलक्षे-
 ण लक्षितां, कैलासनगरीमिव भैरवरक्षितां, श्यामा-
 मिव तारकाविकाशिकां, काशिकामाश्रित्य दृशोर्वि-
 पयीकृतो विश्वेश्वरः । परितोऽवचाय परिपदिपरितो-
 पितश्च सञ्चयोविपश्चिताम् । अनयेव विन्ध्याभिधाने
 धरणिधरे भगवतीसमाराधिता, साकेतेश्वरसूत्रोत्सि-
 स्नातयासीतासहकृतोरामोऽवलोकितः । चित्रकूटगिरौ
 गोदावरी अवगाहिता, वैद्यनाथस्सपर्ययाप्रसादितः
 जगन्नाथोऽपिनयनपथातिथीकृतः । प्रातिदैनिका-
 नेकजनभोजनसमुचितकुसीद फलान्यदीयन्तदेवद्वि-
 जाय द्रविणानि तीर्थेषुतेषु । यवानां तिलानाञ्च
 भूयसीराशीर्निराशीकृतविभासिषिखरप्रांशुताः, शरं-
 दाशनीयान् सपरिमलैः सर्पिणादिपरिकर प्रकूरैर्म-
 ण्डितान् तण्डुलानपीयमर्पयति विप्राय । गाङ्गे-

यशृङ्गालङ्कृतशृङ्गसङ्गतं, शृङ्गीकनकवन्धुर-
 स्कन्धवन्धं, रजतराजिराजितस्फुरितशफं परमपीव-
 रान् धरणितलामर्शिनोधवलिमाधिकान्, पयोधरान्,
 दधानं, घेनूनामजस्रं सहस्रमुत्सृजति । क्षमाभृतमिव
 प्रोच्छ्रितं, शममिवश्रितसज्जनं, दक्षिणनायकमिव
 वशीकृतवशं, सरोवरमिवोललसितपद्मकाननं, साव-
 ग्रहमपि शीकरासारकारकम्, अदूष्यमपिवरत्रानुव-
 न्धनं, तैमिरीमहङ्कृतिमपहरतेव हटितसंहननं सत्वर-
 विमृत्वरेण कालकान्तिजालकेन, अजगरमुजगगात्रे-
 णेव गृहीतगौलेण शुण्डादण्डेन पश्चिमसन्ध्यामिव
 सन्धारयन्तं, परिणतिललितलवलीफूलकनितकोदण्ड-
 बदरालतारकार्तस्वरसारशृङ्गलित प्रतीकत्रिकरद्वयं
 कदलीदलवदाचरितपृष्ठदेशं, विहितवृंहितोत्थापित-
 पृथुवेपथुपृथिवीमण्डलं, पार्श्वतश्चुगललम्बमानवि-
 शङ्कट घण्टाटङ्काटङ्कपाट्यमानश्रुतिपुटीपटलं, हाट-
 कादिलुठितसगावगुण्ठित कठिनकण्ठदेशं, परिमेलि-
 ताधिकस्नेहदीप्तिगेहदेहमन्यमिव श्यामलिमानमाश्र-
 यन्तं, गौरादिरागरज्जितातिविशालभालस्थलं, चरण च
 तुष्टयीचञ्चित चामीकरकृतकलकिङ्किणिकाकलापकणि-
 तकान्तम्, अद्व्युतान्धतयेवमन्दमन्दगमनेन मानसम
 पहरन्तमवलोकमानानां, दिगुणीकृतकमलरागगुटिका

वलीकिरणाकलितकर्णवर्णं, हैमहीरकमहामौक्तिकप्र-
 वालजालजडितलम्बमानास्तरणदर्पणप्राप्तप्रतिविम्ब-
 कैतवेनजननिवहं वहेन्तमिवपार्श्वभागयुगलेन, सि-
 ताग्रशृणिश्रितपनाथासनं, जगतीगतगन्धग्रहणलुब्ध
 तरमुखरमधुकरनिकरलोलश्यामलतनकपोलपालिसन्त
 तस्य न्दमान दानोदकामोदमेदुरितमेदिनीमण्डलं, द-
 न्तावलं प्रत्यपादयदवदान्यावदान्यतान्यकतोपमान-
 स्थानप्रतीतानवरतवहुमानदानमुद्रसन्दर्शितातन्द्र-
 यशश्चन्द्रसान्द्रधरणिपतिशताऽधिभागीरथीप्रतीरम् ।
 नर्मदामिव वेणीरमणीयां, ज्योत्स्नीमिवचन्द्रभूषणां,
 गणितविद्यामिव नक्षत्रमालाञ्छुरितां, नूतनानुराग-
 प्रक्रियामिव रञ्जितविचित्रपत्रलेखां, स्रोतरवतीमिव
 लावण्यमलिलस्य, प्रधानराजधानीमिव मन्मथपार्थि-
 वस्य, प्राङ्गणप्रान्तसुरभीकरणदक्षयक्षकर्दमसम्भिल-
 वर्तिवाभिरुत्सादितां, सुगन्धशुचिसलिलरनापितां,
 महाधनाधिवासितकौशेयान्तरीयचञ्चत्काशनकञ्जु-
 काञ्जिताम्, आस्थास्थापितस्थासकां, कङ्कतमशङ्क-
 विन्यस्तप्रचुरतरवासरातुसारिपरिमलललितमालनी-
 प्रभृतिप्रसूनप्रसूतस्नेहसान्दीकृतशिखादलश्यामल-
 विमलकेशपाशां, मृगमदामोदनिष्यन्दिनादिन्दुना-
 कास्मीरादिनिर्मितेन तमालपलासेनच विलसिता-

लीकां, कज्जलकलाशलाकाकलितलोचनोत्पला,
 हाटकघटितताटङ्गतटमिलितमेव रसुखमणिमतल्लिका
 मरीचिमालया शातकतवकार्मुकेणेव किर्मीरितवक्त्र-
 कान्तिम्, उज्ज्वलरसासारं सम्पादयितुमिवाभिनव
 नवग्रहाध्यासितां, कनककृतकेयूरकटककङ्कणकलाप
 किङ्किणिकातुलाकोटिहंतकपरिस्कृतकलेवरां, प्राल-
 म्बिकोरस्सुत्रिकाहारलतानतां, परिस्पन्दमानचम्पक-
 प्रालम्बाम्, आपादितपरिणयप्रणयिरूपां, समुचिता-
 धिकं शुक्लशुल्कक्रीतां, भ्रातृमतीं, कन्यकां, सत्कृत्य
 वरायानुरूपाय प्रदाय कूकुदेतिपदवीमवापत् ।

सारस्वतरसः सरस्वतीकुण्डजलं, वाणीरसश्च । हरिः कृष्णः सूर्यश्च,
 पादः पदं किरणश्च । अचलेतिभङ्गेन पृथ्वीपर्वतयोर्वोवकम् । धर्मः सुकृतं
 युधिष्ठिरश्च ! नकुलः पशौपाण्डवेच विशेषः । वीरनागः वलवानसर्पः
 वीरवरश्च । तारकेति, रामेतिमनोर्नक्षतूस्थच बोधकम् । गार्ङ्गेयशृङ्गं
 प्रकृष्टकनकम्, शृङ्गीकनकम् मण्डनसुवर्णम् । सज्जना कल्पना, सोधुश्च
 सज्जनः । वशाकरिणी कामिनीच । पद्मकाननं विन्दुजाळकयुक्तमुखं क-
 मलवनंच । अवग्रहो वृष्टिप्रतिबन्धोळलाटं च । अदृश्यं कक्षारहितमनिन्दितं
 च । वरत्राकक्षया । हटिवं राजितम् । शृणिरङ्कुशः । आसनं स्कन्ध
 देशः । वदान्यावागिमनी दानशौण्ड्या चारुवादिनी च । वेणीकेशवन्धः
 प्रवाहश्च । चन्द्रोभूषाविशेषइन्दुश्च । नक्षत्रमाळा हारभेदः तारापरम्परा
 । पत्रलेखातिलकविशेषः पत्रलिपिश्च । यज्ञकर्दमेति, कुङ्कुमागरु-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀

(२२५)

कस्तुरी कर्पूरचन्दनं तथा । महासुगन्धमित्युक्तं नामतोयक्षकर्मइति घन्व-
न्तरिः । चर्तिकागानानुलेपनीउत्पादनमुद्वर्तनम् , अन्तरीपमघोऽशुकम् ।
स्पासकः चार्चिक्यम् । कङ्कतकेशमार्जनी । तमालपलासं तिलकविशेषः ।
अलीकोभान्देशः । उज्ज्वलरसोविमलजलं शृङ्गारश्च, नवगूहोभूषाविशेषः
नवमितोगूहश्च अभिनवत्वं तत्र मसिद्धनवग्रहविपरीतफलकत्वाद्विशेषण-
म् । तुवाकोटिर्नूपुरः । मालम्बिका स्वर्णैः उरस्सूत्रिका मौक्तिकैः कृता
माला । प्राक्कम्बं कण्ठादजुलम्बिमाल्यम् । शुक्लशुक्लम् न्यायोपात्तमूल्यम् ।

दरभङ्गेत्यभिधानं दधानेपुटभेदने शर्वरीशमरीचिरुचि-
जालंचतुश्शालं प्रासादमयंसामवेदकोविदायद्रविड-
जनपदायविप्रायप्रायच्छत् । अनुगृह्णाच
वाराणस्यां विश्वविद्यामदनसम्पादनायसङ्कचितसुर-
तरुस्तरुणकरुगयास्वर्णसहस्राणां वितरणेन पूर्णामेव
जगतीम्नैदाघप्रौढतमतपनातपसन्तानसन्तापितान्
सन्तोषयति पीयूषरसातिशायिना शुचिश्येतशिशिरेण
पानीयशालिकासु कीलालेन किङ्करैः । विपुलोपलो-
पकृतसोपानावलीशोभिगभीरसुरभिक्षीरनीरसतीर-
दीर्घिकाणां तेषुस्थलेषुखाननेन व्यपानयदपामनवा-
पादापादितातृषंजनिजुषाम् सत्वरं संस्कारयतिस्मया-
स्साङ्गनिगमसागरपारगैरनुष्ठीयमानाभिश्चरणचतुष्ट-
येन घटिताभिरिष्टिभिः । प्रावृषेण्यपुलिनिनीपरमोच-
यचाचल्यमानप्रविसारिपयः (वारि) प्रवाहैः, प्रलय-

पयोदपटलपयः पूरेष्वि. प्रत्याययद्भिः पायसामेव
 सपिद्रव्यरूपतां, स्मृतिपदोपनीतपस्यपादपूमुत्तैः
 प्रयाणकर्माकृतेषुस्यलेषुगविमपिद्वदनया, यन्वतानपि
 प्रांशुभावेन परिहसन्तीश्चेतुसंहतीस्सहस्रेणापिमोत-
 स्वतीनामभिदेलिमाअवन्धयत् । प्रत्यतिष्ठिपदनन्य-
 निष्ठनिष्ठया निज धिष्ठानोपकण्ठं सौष्ठवपुषावपुषा-
 मनोहरे मन्दिरे मिलितविस्मयानामपि मर्मसुरचनक-
 र्मणां विश्वकर्मसधर्मतामुपगतैर्धार्मिकैश्चारुचरितैः
 कारुभिर्यथा शर्मनिर्मायं निर्मापितेऽधिकृष्टिमं श्वेतम-
 सृणैः, परत्रच मानसनिकेतनानन्तिक माकारयद्भिः,
 दम्भोलिदम्भं स्तम्भयद्भिः प्रशस्ततरैः स विस्तरैः
 प्रस्तरशकलैः कलधौतकलसिकाविलसितोदवयवे,
 रमणीयश्रुमणिमैत्रीमुदमंशुकैतवेन वेदयाने, मन्द-
 स्पन्दमानमारुतान्दोलिताना, मन्यदीयमञ्जुलता
 विजयमनुमापयन्तीनामिव, सौवर्णकिङ्किणीगणझ-
 णत्कार मधुरमृदुनिनादमोदित श्रुतिसन्तनीनाम्,
 अरुणिमरागरज्जितनवीनचीनचैलवैजयन्तीना म-
 न्विते शतेन, कालायुरुगुगुलसरलप्रभृतिवहलसौरभ-
 द्रव्यदहनधूमसुरभिते, हरेणापि हृदयगृहीताङ्घ्रि-
 सरोरुहां, प्रावृषमिव
 व विततशोणरसनां,

प्रमदप्रशङ्गातामिव पितृनिलयवानप्रियाम् उदीर्घां
 दिशामिव सङ्गप्रदोदयां, विभातदेलामिव पादपगग-
 नांमिथ्यानन्दमृतां, हरिदंशुकामपि विगलितावशणा-
 म्, रंभाप्रेयसांमपि भदनाशिनीं, भोग्यलभ्यामपि
 भोगिभृषिनां, पुरुषार्थचतुष्टयीं विनातरीतुमिव शय-
 चतुष्टयं श्रयन्तीं, गन्तव्यविधारातिलम्बमानमुण्ड-
 मालवमालदर्शनां, दिव्यदालानिधानपूर्णमानसोदित-
 लांचनां, मुक्तमेव च चामरोद्भवाति चारुचिह्नाचयाञ्चि-
 तचरणां, विश्वविचनचुञ्चुना विरेणानन्यचेतसा
 शिञ्जिचनाष्टुदञ्जितां, चेतनाचेतनरक्षणचणेनाऽपि
 पुण्यचर्चितचरित्रचकाशितेनान्युतेनापि चिन्तयागो-
 चरीकृतां, शुचिरेरुच्चितरुचिनिर्विते राजकीयोगचार-
 निचयेरनिशमर्चितां, चक्षुश्चक्षुर्गङ्गमञ्चयरोचिष्मतीं
 श्यामाम् ।

नपिष्टपं पृथिव्यादिप्रथम् । हृदयं वसो मनस्य । पयोधरस्तनोपनस्य ।
 रसनाजिह्वा वाणर्चाश्च । रक्तः शोणितमनुरक्तस्य । पितृनिष्ठपः स्मृष्टानं
 गतमृत् । पुष्टो निधित औत्तानपादस्य उदयो वृद्धिः प्रकाशश्च । पादेति
 मङ्गः अन्यप्रपादपेति, हृमनाति देहपुण्यायोर्बोधकम् । हरित्वर्णविशेष
 आदाश्च । आहरणं वसनमहानं च । भवदिशवस्तंतरश्च । भोगीभोगवान्
 प्रपश्य । शयोदरतः हास्यामयम् । मुक्तः गलितबन्धनः कैवल्यबोध

चुञ्चुनाख्यातेन ॥

यदीयप्रात्यहिकचन्द्रेतरारार्तिककालिकोऽवधीरि-
तवारिधिरघनध्वनिगन्तरितरवान्तरस्सन्ताड्यमानभेरी-
मृदङ्गाद्यनेकवाद्यनिनदस्समाक्रामतितमादिक्रकचक्र-
वालम् । यामनुसमाअपचिन्वत्यमायां मनीषिशेमुषी-
सीमानमतिपतितैः, भुजगपतिगिरामप्यगोचरैः, पुरु-
हूतलोचनैरपि परिच्छेत्तुमशकैः प्रकारैरधिशाहुलबहुल-
दलम् । सत्कुरुतेचयत्र निकुरम्बं कृदुम्बकानां कदम्ब-
कं च कोविदाना मम्बावसुविहापनैः । ययान्वर्थनाम-
धेयं प्रसाध्यते निजसन्निधानमूर्त्यामनोरमेण मन्दिरेण
प्रावृट् विटपिपटलमिवाविपल्लवं, रोहिणीचरणसरसी-
रुहमिवलाङ्गलिप्रणतं, सुरजादिवन्धविशेषलेखमिव
असङ्कीर्णवर्णाकीर्णं, विलासिनीवपुरिव विभ्रमोद्दी-
पितं, चम्पककुसुममिव मधुपगतिवियोगितं, द्वारका-
पुरमिव उद्धवाच्युतं, सुरनगरमिव सर्वतःश्रूयमाण-
गैर्वाणवाणीकमैरावतविलसितंच, आम्नायमिवसत्प-
दक्रमं, भगनभागैरिव विक्रमान्वितैः, सत्काव्यैरिव
सरससरस्वतीप्रवणीकृतरसिकमानसैः, इक्षुकाण्डैरिव
च्छेदक्षोभक्षीणैरपि सुरसमेवसन्ददानैः, दण्डैरिव भ्र-
मणेनापि परकीयकार्यकारकैः, पाटीरखण्डैरिव स्वा-

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀ (२३३)

आस्वादितकादम्बरीप्रभृतिजातशतेन ।

अपिकृतिरेषा नवतया दृश्याकविजातेन ॥ ३ ॥

रसरहितमिहनेन मिते (१८३९) विक्रमवत्सरे ।

श्रीबालकृष्णमिश्रेण काव्यमेतत्समापितम् ॥ ४ ॥

इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल

श्रोत्रिय श्रीबालकृष्णमिश्ररचिते लक्ष्मीश्वरीचरिते

❀ ॥ षष्ठोच्छ्वासः समाप्तः ॥ ❀

उपयमन कुशो वेणीरुपः कर्मकाण्डे प्रसिद्धः । शमीकिंशुकवृक्षः, एनांसि
पापानि 'कल्पोलपः कल्पलता, श्लोकोपशः । स्पंदनम्, शंततं विस्तृतं
कल्याणम् ॥ ० ॥ न्यायस्तर्कशास्त्रम् । आचितं व्याप्तम् । सम्भाव्यम् । आ-
दरणीयम् अनवधानताया इति कारके हेतौ पञ्चमी । कादम्बर्यां प्राचीन-
त्वंतु प्रसिद्ध मेघेतिनतदनुपादानेदोषः । समासोक्त्यलङ्कारः ॥ २ः रामः
तस्यवित्वसद्दुःखचापोधकत्वम् । इनः पतिरिति शिवम् ॥ * ॥

इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल-श्रोत्रिय-

श्रीबालकृष्णमिश्रनिर्मिता निजनिर्मिते लक्ष्मीश्वरी

चरिते षष्ठोच्छ्वासटिप्पणी समाप्ता ॥ * ॥

धरीकृतवधूजनाधरसुधामधुरतानां व्याहृतीनां योग्ये-
 ससुन्मेषाद् प्रयासेनैतया कृतार्थीकृताः कवयतां
 कलापाः । श्यामापदपयोजपूजनाय चिरयास्मिन्नेव
 पुरेनयन्तीसमयमियमियाय पुण्यश्लोकतया ज्ञततया
 स्वेष्टदेवतेव स्मरणीयतासुषसि । स्वस्वसमीहितं स्व-
 माप्नुवन्तोऽति सन्तोषेणसन्तो विहितसेवाददेवादेत-
 दीयाभ्युदयं याचमानास्तकलककुभः कान्ताश्च आक-
 लिताङ्गावरणैतदीयकीर्तिसिचयाः (कर्णालङ्कृतीकृत-
 राजतताटङ्ककीर्तयः) मुकृतसन्ततीस्सन्ततं विदधनी-
 सतीशंततं सन्ततमनुभवन्ती पालयन्तीच निजान्व-
 वायोचितकरणीयमारजनीशतरणी राजतां धरणीतल
 इत्याशिषां गशिभिरिमामभितोषर्जयन्तीतिशम् ॥ ❀ ।

न्यायानुचिन्तनचयाचितचेतसो मे

सम्भाव्यकाव्यकरणाभ्यसने श्रमस्य ।

प्राथम्यमेतदधिगम्य विलोकमानः

सन्तोषमेष्यति मनीषिजनो विशेषम् ॥ १ ॥

स्थूलान्यपि स्वरचिते रचकस्यनैव

प्रायेणदृक्पथिकता मुपयन्ति यानि ।

मानुष्यजन्मसुलभानवधानतायाः

संशोधयन्तु सुधिप्रैः स्खलितानि तानि ॥ २ ॥

❀ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ❀ (२३३)

आस्वादितकादम्बरीप्रभृतिजातशतेन ।

अपिकृतिरेषा नवतया दृश्याकविजातेन ॥ ३ ॥

रसरहितमिज्ञेन मिते (१८३९) विक्रमवत्सरे ।

श्रीवालकृष्णमिश्रेण काव्यमेतत्समापितम् ॥ ४ ॥

इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल

श्रोत्रिय श्रीवालकृष्णनिश्रंचिते लक्ष्मीश्वरीचरिते

❀ ॥ षष्ठोच्छ्वासः समाप्तः ॥ ❀

उपयमन कुशो घेणीरुपः कर्मकाण्डे प्रसिद्धः । शमीकिशुकवृक्षः, एनांसि
पापानि 'कल्पोलपः कल्पलता, श्लोकोपशः । स्पंदनम्, शंतघं विस्तृतं
कल्याणम् ॥ ० ॥ न्यायस्तर्कशास्त्रम् । आचितं व्याप्तम् । सम्भाव्यम् । आ-
दरणीयम् अनवधानताया इति कारके हेतौ पञ्चमी । कादम्बर्या प्राचीन-
त्वंतु प्रसिद्ध मेघेतिनतदनुपादानेदोषः । समासोक्त्यलङ्कारः ॥ रः रामः
तस्यत्रित्वसङ्ख्ययाषोषकत्वम् । इनः पतिरिति शिवम् ॥ * ॥

इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल-श्रोत्रिय-

श्रीवालकृष्णमिश्रनिर्मिता निजनिर्मिते लक्ष्मीश्वरी

चरिते षष्ठोच्छ्वासद्विष्यणी समाप्ता ॥ * ॥

धरीकृतवधूजनाधरसुधामधुरतानां व्याहृतीनां योग्ये-
समुन्मेषाद् प्रयासेनैतया कृतार्थीकृताः कवयतां
कलापाः । श्यामापदपयोजपूजनाय चिरयास्मिन्नेव
पुरेनयन्तीसमयमियमियाय पुण्यश्लोकतया जनतया
स्वेष्टदेवतेव स्मरणीयतामुपसि । स्वस्वसमीहितं स्व-
माप्नुवन्तोऽति सन्तोषेणसन्तो विहितसेवाददेवादेत-
दीयाम्युदयं याचमानास्सकलककुभः कान्ताश्च आक-
लिताङ्गावरणैतदीयकीर्तिसिचयाः (कर्णालङ्कृतीकृत-
राजतताटङ्ककीर्तयः) मुकृतसन्ततीस्सन्ततं विदधती-
सतीशंततं अन्ततमनुभवन्ती पालयन्तीच निजान्व-
वायोचितकर्णीयमारजनीशतरणी राजतां धरणीतल
इत्याशिषां गशिभिरिमामभितोषर्द्धयन्तीतिशम् ॥ ❀ ।

न्यायानुचिन्तनचयाचितचेतसो मे

सम्भाव्यकाव्यकरणाभ्यसने श्रमस्य ।

प्राथम्यमेतदधिगम्य विलोकयानः

सन्तोषमेप्यति मनीषिजनो विशेषम् ॥ १ ॥

स्थूलान्यपि स्वरचिते रचकस्यनैव

प्रायेणदृक्पथिकता मुपयन्ति यानि ।

मानुष्यजन्मसुलभानवधानतायाः

संशोधयन्तु सुधिर्यैः स्खलितानि तानि ॥ २ ॥

ॐ श्रीलक्ष्मीश्वरीचरितम् ॐ (२३३)

आस्वादितकादम्बरीप्रभृतिजानशातेन ।
 अपिकुतरेषा नवतया दृश्याकविजातेन ॥ ३ ॥
 रसरहितमिज्ञेन मिते (१८३९) विक्रमवत्सुरे ।
 धीवालकृष्णमिश्रेण कान्यमतत्पयापितम् ॥ ४ ॥
 इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल-
 श्रोत्रिय श्रीवालकृष्णमिश्ररचिते लक्ष्मीश्वरीचरिते
 ॐ ॥ पञ्चोक्तशतः समाप्तः ॥ ॐ

उपयमन इतो देवीरूपः समेकाण्डे भाग्यदः । शरीरिगुणकतः, एतानि
 पापानि 'कल्पोत्पत्तिः कल्पवृक्षा, यतोऽप्युपजायते । एवं नमः, एतत् विदुर्न
 कल्पमाणम् ॥ ७ ॥ व्यापकवर्कशासनम् । आदित्यग्याप्तम् । समभाषणम् । आ-
 दरणीयम् अनवधानताया इति कारके हेतोः पञ्चमी । दादृश्यां भार्या-
 र्वत्तु भगिदः मेदेतिनमदनुपादानेदोषः । समासोपत्यङ्गहारः ॥ ८ : रामा
 सरपविश्वगद्यत्यजादोषवत्सुरे । इतः पतिरिति सिद्धम् ॥ ९ ॥

इति राजकीयसंस्कृतमहाविद्यालयाध्यापकमैथिल-श्रोत्रिय-
 श्रीवालकृष्णमिश्रनिमित्ता निरुनिमित्ते लक्ष्मीश्वरी
 चरिते पञ्चोक्तशतविष्णोः समाप्ता ॥ १० ॥

